मुख्य विक्रेता : सस्ता साहित्य-मंडल, नई दिल्ली

प्रकाशक
आरोग्य-मंदिर
गोरखपुर

पहली बार : मार्च १९५३
मूल्य : डेढ़ रुपया

मुद्रक
जे० के० शर्मा
इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस
इलाहाबाद

और बैठे-बैठे जान देनेसे कुछ करना मुझे ज्यादा श्रेयस्कर प्रतीत हुआ।

मैं आरोग्य-मंदिर गया। उस समय चिकित्सक महोदय अन्य स्वास्थ्यार्थियोंको देखनेमें लगे थे। पास बैठे एक व्यक्तिसे बात होने लगी। उसके पूछनेपर मैंने अपना रोग कब्ज बतलाया तो वे कहने लगे यह रोग तो यहां पांच-सात दिनमें ही चला जायगा। उनके जवाबको सुनकर मुझे खुशी नहीं हुई। बल्कि गुस्सा आया कि वह मेरे रोगको साधारण समझता है जब कि यह बड़े-बड़े डाक्टरोंको परास्त कर चुका है और मैं इससे बराबर लोहा लेते रहनेपर भी हार चुका हूं और तबीयत हुई कि उसे एक चपत लगा दूं। पर इतनेमें ही चिकित्सक महोदय आ गए और मुझे अपने कमरेमें ले गए। दस मिनटमें ही मुझे उनकी बातोंसे इसका निश्चय हो गया कि मेरा कब्ज सचमुच शीघ्र चला जायगा। उस व्यक्तिके प्रति मनमें क्रोध पैदा होनेके कारण मनमें क्षोभ हुआ। मैंने चिकित्सक महोदयसे अपने रोगनिवारणके लिए एक कार्यक्रम मांगा तो उन्होंने कहा कि प्राकृतिक चिकित्सा तो जीवन-शिक्षण है, अच्छा हो आप यहां सप्ताहभरके लिए आ जायं। मुझे भी वैसी साफ-स्वच्छ जगहमें रहनेका आकर्षण हुआ और मैंने वहीं बैठे-बैठे अपने साथ आए व्यक्तिसे घरसे जरूरी सामान मंगवा लिया।

दोपहर हो रही थी, चिकित्सक महोदय मुझे अपने साथ भोजन करने लिवा ले गए। मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि वे भी हम लोगोंके साथ भोजन कर रहे हैं। तब मेरी समझमें आया कि जो भोजन रोगका निवारण कर सकता है वह स्वस्थको और अधिक स्वस्थ बना सकता है।

होगा और उन्हे विश्वास हो जायगा कि प्रकृति-माताकी शरणमें जानेपर वह अवश्य आश्रय देगी और सारे कष्टोका निवारणकर नवजीवन प्रदान करेगी।

जिन सज्जनोने हमारी 'रोगोकी सरल चिकित्सा' पुस्तकका अध्ययन कर चिकित्सा विषयक सिद्धातोका ज्ञान प्राप्त कर लिया है उनके लिए भी यह सग्रह बडे कामका होगा। सिद्धातसे समुचित लाभ उठानेके लिए उसके दूसरे पक्ष—क्रियात्मक रूप—का भी ज्ञान होना आवश्यक है। हमें आशा ही नही, विश्वास भी है कि वे इसके सहारे उन सिद्धातोको व्यवहारमे लानेकी विधि भलीभाति समझ जायगे, उनकी प्रयोग सबधी सारी कठिनाइया दूर हो जायगी और उन्हे अधकारमें नही भटकना पडेगा। इस प्रकार यह सग्रह रोगियो और प्रयोगकर्ताओ—दोनोके लिए समान रूपसे उपयोगी होगा, और इसीमे इसके प्रकाशनकी सार्थकता भी है।

प्रकाशक

विषय-सूची

स्वास्थ्य कैसे पाया ?

: १ :

कब्ज

कब्ज साधारण रोग समझा जाता है पर वह बढ़नेपर कितना कष्टकर हो जाता है और किन-किन रोगोंको जन्म दे सकता है यह बहुत कम लोग ही जानते है। मैं भी नही जानता था। जब मैंने कभी-कभी रह जानेवाले कब्जपर ध्यान नही दिया तो हालत यहांतक पहुंची कि सुबह-शाम शौच जाते रहनेपर भी, शौचालयमें घंटो बैठे रहनेपर भी, दो-दो दिन शौच नही होता था और अगर होता तो भी बडे कष्टके साथ और उससे तबीयत जरा भी साफ नही होती थी। इच्छा होती शौच और हो और यह इच्छा तीव्र आवश्यकताकी तरह हर क्षण बनी रहती। फिर बतलाइए ऐसा आदमी काम कैसे कर सकता है, कैसे चैनकी सांस ले सकता है। फिर भी मैं सोचता रहता कि कब्ज स्वयं चला जायगा पर जब मेरी प्रतीक्षा चरम सीमापर पहुंच गई और मनोकामना पूरी होनेका लक्षण नही दिखाई दिया तो डाक्टरोकी शरणमे गया। आज तो मेरी समझमें आता है कि कब्ज जाता कैसे, मै उसके जानेकी केवल प्रतीक्षा कर रहा था, रहन-सहन, भोजन-पान, कब्जसे मुक्ति पानेके लिए जिनके सुधारकी सख्त जरूरत है, उनके सुधारनेकी विधिसे न तो मैं परिचित था और न मै इस ओर अग्रसर ही हुआ।

डाक्टरोंने दवाएं दी, उनमे होमियोपैथ भी थे और एलोपैथ भी। वे दवा दे देते और किसी प्रकारके भोजन-सुधार आदिके लिए एक शब्द भी न कहते। मैं तो पूछताही क्यों ?

लेखक : चिकित्साके पहले

मैं समझता हर रोगकी दवा है, दवा रोगका निवारण करती है, मेरा कब्ज भी हरेगी। इस विश्वाससे उनकी दवा भक्ति-पूर्वक लेता रहता। होमियोपैथीकी दवा महीनेभर लेते रहने-

पर भी कोई सुधार न दिखाई दिया, पर एलोपैथीकी दवा कुछ करतब करती। कुछ नही बहुत करती। उसके लेनेपर ज्यो-त्यो पेट साफ हो जाता पर दवा लेना बंद करनेपर हालत
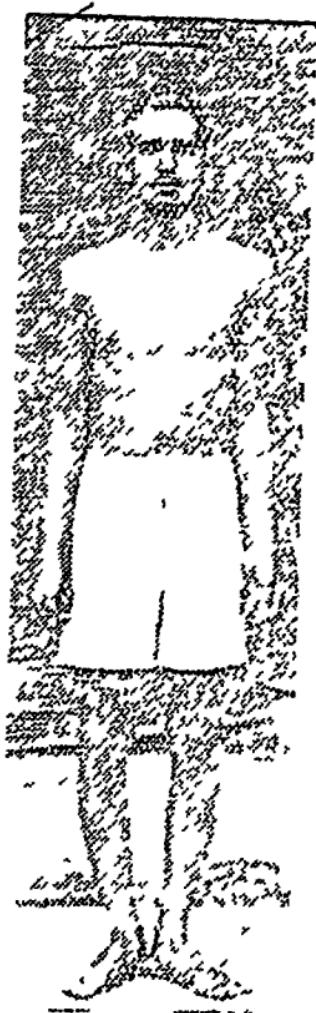
लेखक : स्वस्थ होनेपर

वैसी क्या' उससे भी बुरी हो जाती। इस तरह मैं कब्जकी दिशामे तो जहा-का-तहां रहा, हा, और तरहसे हालत ज्यादा बिगडने लगी। वजन तेजीस गिरने लगा। थोड़ा भी चलनेमें

सहारा लेनेकी इच्छा होती और लगता मै विना गिरे गंतव्य स्थानतक न पहुंच सकूंगा। हँसना तो मेरा विल्कुल बंद हो गया था। प्रयत्न करनेपर भी हँसना दूर, मुस्करा भी न सकता। किसीसे थोड़ी भी वात करनेपर मैं गुस्सा हो जाता, कड़ा पड जाता। खैरियत थी कि मेरे पीले मुख, कृश शरीर, अल्प शक्तिको देखकर लोग जान जाते कि मैं बीमार हूं, अन्यथा मेरी तेजीके लिए मुझे जरूर ही कई वार पिटना पड़ता। पर धीरे-धीरे हालत यहांतक पहुंची कि मुझे किसीसे वोलना अच्छा न लगता। कोई वात करता तो मैं वहांसे भाग खड़ा होता। पर जाऊं कहां, कही भी तो चैन मिलती दिखाई नहीं देती। सोनेपर न आराम मालूम होता न नींद ही आती। आंखों-आंखोंमें रात समाप्त हो जाती और मैं देखता कि दूसरा दिन आरंभ हो गया है।

वस, एक ही तरहका खयाल मनमे चला करता मै और मेरा कब्ज, मैं और मेरे रोग।

दवाओंसे ऐसी हालत पहुंचनेपर दवाओंसे मै निराश हो गया। वह होना ही था। पर कोई रास्ता भी तो न था। ऐसी दशामें मुझे कई लोगोंने प्राकृतिक चिकित्सा करानेकी राय दी। गो मै स्थानीय प्राकृतिक चिकित्सालय आरोग्य-मंदिरसे परिचित था—इतना ही कि प्राकृतिक चिकित्सालयके बड़े वाग और उसके फैलावने उधरसे टहलने जाते वक्त मुझे आकर्षित किया था पर मै जानता नही था कि प्राकृतिक चिकित्सा क्या है? जानता भी कैसे, प्राकृतिक चिकित्सा-संबंधी साहित्य या किसी प्राकृतिक चिकित्सकसे मिलनेका कोई अवसर ही न मिला था। पर मैंने इस चिकित्सा-पद्धतिको भी आजमानेकी ठानी सिर्फ इसलिए कि दवासे हार चुका था

भोजन आया, रोटियां थी और थी उवली हुई वहुत-सी तरकारियां और कुछ कच्ची तरकारियां। मै सोचने लगा यह भोजन खाया कैसे जायगा। पर जव मैंने देखा कि मेरे चारो ओर वैठे वीसों व्यक्ति इस भोजनको प्रसन्नता और तृप्तिकी दृष्टिसे देख रहे है और कर रहे है तो मैंने भी आरंभ किया। और मुझे कहना चाहिए कि यह भोजन एक तरहसे मैंने स्वाद लेकर किया। पर दिन-दिन इस भोजनका स्वाद तेजीसे वढ़ा और तीन-चार दिनमे वह इतना स्वादिष्ट लगने लगा कि मुझे पछतावा होने लगा कि इस भोजनसे मै पहले क्यों न परिचित हुआ।

यही भोजन मुझे शामको भी मिलता। सवेरे मिलता एक गिलास गायका कच्चा दूध और साथमें दो संतरे और दोपहरके वाद तीन वजे मैं एक-दो संतरे या एक-दो टमाटर खाता।

चिकित्सामें मुझे केवल सवेरे-शाम तीन-तीन मिनटका कटिस्नान वताया गया और उसके वाद धीरे-धीरे एक-डेढ़ मील टहलना। साथ-साथ मुझपर मालिश, गरम पानीके कई तरहके नहानों और आगे चलकर आसन तथा कई तरहकी हल्की कसरतोंके प्रयोग हुए।

दो-तीन दिनमें ही मुझे दोनो वक्त शौच होने लगा। दस दिन पूरे होते-न-होते मेरे मुंहके छाले, जिनकी वजहसे खाना मुश्किल था, चले गए। पर मेरा वजन जो यहा आनेपर ३६ सेर था, घटकर ३४ सेर रह गया। इससे मेरे घरवाले, जो सुवह-शाम मुझसे मिलने आते थे, वहुत घवराए। पर मेरेमें आई ताजगी और आशावादिताने उन्हें कुछ ढाढ़स वंधाया। और मेरे मनमे वजन घटनेसे कोई चिंता नही हुई। मैंने इस वीच यहां स्वास्थ्यार्थियोके हितार्थ होनेवाले अभिभाषणोंसे

समझ लिया था कि चिकित्साके आरभमे वजन जरूर घटता है पर फिर धीरे-धीरे बढने लगता है।

मै एक ही सप्ताहके लिए यहा आया था, मैने अपने लिए चिकित्साक्रम भी जान लिया था पर एक सप्ताह पूरा होनेपर यहांसे हटनेकी मेरी इच्छा नही हुई। मैने सोचा यहांसे सब रोगोंको दूर करके ही चलना चाहिए। मै चिकित्सालयमे सवा दो महीने रहा।

धीरे-धीरे वायु भी शात होने लगी जो मुझे बेचैन किए रहती थी और मेरे पास बैठनेवालोको परेशान। नीद पूरी आने लगी और मेरा सवेरे-शामका टहलना डेढ मीलमे बढ़कर चार-चार मील हो गया। क्रोध मेरा जाता रहा। और शरीरमें बलका भी सचार होने लगा। उस थोडे वजनपर भी मै अपनेमे बलका अनुभव करने लगा।

मै घर चला आया और भोजन तथा टहलनेका क्रम चलता रहा। मेरा वजन धीरे-धीरे बढकर एक मन अठारह सेर हो गया। मै सब दृष्टिसे स्वस्थ हो गया। काम करनेकी मेरी शक्ति बढ गई। जहा मै लोगोसे काममे पिछडा रहता था, वहा मै अब दफ्तरमे अपने सब साथियोमे पहले ही अपना काम समाप्त करने लगा।

आदमी समझता है कि वह बहुत ज्ञानवान है। वह नहीं जानता कि उसका ज्ञान कितना अल्प है। कई बार तो उसकी आखोके सामने होती चीजे भी उसे नही दिखाई देती।

—श्रीजीवानन्द श्रीवास्तव

(२)

कब्ज मुझे वर्षोंसे सता रहा था पर अंतमे मुझे उसपर

विजय मिली, और मिली भी वह वहुत साधारण उपायसे। मैंने इसे दूर करनेको कौनसे उपाय नही किए? पर सव व्यर्थ गए और जव मैंने प्राकृतिक चिकित्साके साधन भी अपना लिए और काम न वना तव तो मै वहुत घवराई।

पहले मैंने भोजन-सुधार किया। भोजनमें वहुत-सी कच्ची तरकारियोंको स्थान दिया और पकी तरकारिया काफी मात्रामें खाने लगी। भोजनमें फल भी जोड़े। कव्ज हटानेके लिए वह इतना काफी है पर इससे मेरा काम नही चला। पहले हफ्ते कुछ सुधार जरूर हुआ पर दूसरे हफ्ते यह लाभ धीरे-धीरे चला गया। तव मैंने अपनी रोटियोंमें अतिरिक्त चोकर डालना शुरू किया। चोकर मिलता कठिनाईसे। राशनिगके जमानेमे सभी अपना चोकर खाते हैं। कौन चोकर निकालकर आटेकी मिकदार कम करता है। और अव लोग चोकरके लाभ भी जान गए है। पर मै किसी तरह चोकर प्राप्त करती ही। कोई दस दिन चोकरसे मुझे वड़ा लाभ रहा पर फिर यह लाभ भी ठप हो गया। जव चोकर काम करने लगा था तव मेरी खुशीकी सीमा न थी, पर जव उसने भी धोखा दिया तो मुझे वड़ा दुःख हुआ। पर मै निराश नहीं हुई। दवा मै लेना नही चाहती थी। दवा कौन-सी लेती, सभी तो आजमा चुकी थी और एनिमा लेना भी मुझे वुरा लगता था। उसकी आदत पड़नेका तो मुझे डर नही था पर एनिमाकी खटखट मुझे पसंद नही थी। मुझे यही सोच रहता कि मेरे भोजनमे खुज्झा तो काफी जा रहा है। फिर मेरा कव्ज क्यों नही जाता।

मेरे पति भी मेरे प्रयोगोमे दिलचस्पी रखते है। वे स्वयं फल-तरकारी जरूर काफी मात्रामें खाते है। पर शेष भोजनके

संबंधमें विशेष ध्यान नही देते। वे रोज घंटेभर कसरत करते हैं और कहते है कि कसरत करते रहो तो फिर कोई खाना नुकसान नही पहुंचा सकता। मै उनके विचारोसे कभी सहमत नही हो सकी पर जव उन्होने कहा कि तुम्हारा कब्ज तुम्हारे अधिक खानेकी वजहसे है तो मै चौंकी। कुछ वात ऐसी ही थी कि जव मैं खाकर उठती तो पेट भारी हो जाता पर मेरा इस ओर कभी ध्यान नही गया था कि कब्जका कारण अधिक खाना भी हो सकता है।

खैर, मैंने अपनी पाचनक्रियाको थोड़ा आराम देनेका निश्चय किया और पहला काम यह किया कि मैंने नाश्ता करना छोड़ दिया। इस प्रकार जो मै शामको भोजन करती तो फिर जाकर दूसरे दिन दोपहरको ही मुहमे कुछ डालती। दोपहर और शामके भोजनमे रोटीकी भी मात्रा कुछ कम की। दूसरे दिनसे ही पेट साफ होने लगा। अव सवेरे विछावन छोड़ते ही शौचकी हाजत होती है और शौचके वाद पेट ठीक हल्का हो जाता है। शामको भी शौच जाती हूं और ठीक पेट साफ हो जाता है।

अव मुझे लगता है कि यदि मुझे पहले भोजनकी मात्रा-संवधी थोड़ा भी ज्ञान होता तो मुझे वर्षो कब्जका कष्ट भोगना न पड़ता। मेरा खयाल है कि वहुत-से लोगोके कब्जका कारण भोजनाधिक्य है।

—श्रीमती तारा पाण्डेय

: २ :

अपच

पिछले आषाढ़की वात है, हमारी काशी शाखासे मनहरी नामक एक दस वर्षका पहाड़ी लड़का मेरे पास आया। वह तीन-चार महीनेसे अस्वस्थ था। जो कुछ खाता पाखानेसे विना पचे निकलता। मुंह पीला पड़ रहा। उसकी एक-एक हड्डी गिनी जा सकती थी। नाकसे हमेशा पानी वहा करता था, करुणाजनक दशा थी। नेपालसे आनेपर पंद्रह-वीस रोज वाद ही उसे मंदाग्नि हुई और आगे वढ़कर उसने संग्रहणीका रूप ले लिया। इधर-उधरकी दवाइयां होती रहीं, पर कोई नतीजा न निकला। सावन आते-आते वेचारेके पैरोंमें सूजन आ गई। लोगोंने कहा—वस अव, नहीं वचेगा और लोगोंके इस विश्वासका कुछ कम असर मनहरीके मनपर भी नहीं पड़ता। हमेशा वह मुंह लटकाए चिंतामग्न रहता। चिड़चिड़ा भी हो गया था। वरसातमें उसका नेपाल वापस जाना भी संभव नही था।

संयोग, इसी समय शिवपुरके श्रीमदनलालजी पोद्दारने आश्रमके नाम "आरोग्य" मासिक जारी करा दिया था। उससे मैं यह संस्कार पा रहा था कि ओषधियोंके विना केवल आहारकी शुद्धि और संयमसे सव रोग छूट सकते हैं। किसी अंकमें नीवूके वारेमें एक लेख पढ़ा था, जिसमें नीवूके गुण और उपयोगकी विधि वताई गई थी।

वैद्य न होते हुए भी साहस करके "आरोग्य"के लेखोंके

भरोसे मैंने उस वालककी चिकित्सा शुरू की। दो दिनका उपवास कराया और पानीमे नीवूका थोड़ा रस मिलाकर देने लगा। पहले तो लड़केने खट्टे नीवूका रस पीनेमे आनाकानी की, पर तनिक-सा नमक मिला देनेसे वह पीने लगा। मैंने उसके भोजनमे भी थोडा परिवर्तन करवाया। थोड़ा इसलिए कि आश्रम एक सस्था ठहरी अत. प्रत्येकके लिए अलग-अलग व्यवस्था करना वहुत मुश्किल काम था। साथ-साथ लड़केको मैंने टहलने और फिर दौडनेके आदेश दिए।

कुछ ही दिनो वाद, आहारसंयम, नीवूका रस और प्रात.-भ्रमणके प्रभाव प्रत्यक्ष होने लगे। उसके चेहरेपर एक क्रांति-कारी परिवर्तन मालूम पडने लगा। धीरे-धीरे इन्ही उपचारोसे उसका स्वास्थ्य विलकुल ठीक हो गया।

आज मेरे आश्रममे अपने समवयस्क वालकोंमें यदि सवसे अधिक स्वस्थ, सुडौल और गुलावी मुखका कोई वालक है तो यही मनहरी है।

मनहरी मुझे अपना जीवनदाता कहता है और मैं प्रकृति-माताको उसकी जीवनदात्री कहता हूं।

—श्रीमुरलीधर पाडेय व्या० सा० धर्मशास्त्राचार्य

: ३ :

स्वप्नदोष

मेरे स्वस्थ होनेकी कहानीमे कोई विशेष विचित्रता नहीं है। रोगी होनेकी कहानी तो और भी साधारण है। साधारण इस मानेमे कि मैं भी उन्ही कारणोंसे बीमार पड़ा जिनसे अक्सर युवक बीमार रहते है।

लेखक : चिकित्साके पहले

यों बचपनमें भी मेरा शरीर बहुत हृष्ट-पुष्ट नहीं था, साधारणतया स्वस्थ था।

लेखक : स्वस्थ होनेपर

पांच वर्षकी उम्रमे ही मै स्कूल भेज दिया गया था। जहांतक मुझे याद है मै साधारण लड़कोसे अधिक बुद्धिमान समझा जाता था। पर बुद्धिमान होनेका कोई फल न निकला। चौदह वर्षका होते-होते मैंने हस्तमैथुनकी कुटेव सीख ली, जो सवा साल चली। पुस्तको एवं मासिक पत्रोके लेखोसे मुझे इसकी बुराइयां ज्ञात हुईं और मैंने इसपर विजय पा ली। मेरी खुशीका वारापार नही था। लगता था जैसे मैंने अपनेको कैदसे छुड़ा लिया हो। पर मेरी यह खुशी बहुत दिनोतक नही चली। मुझे शीघ्र ही स्वप्नदोष होने लगा। महीनेमे पांच-छः बारतक हो जाता। मै पत्र-पत्रिकाएं तो पढता ही था, उनके विज्ञापन पढ़कर इसके लिए दवाएं मंगानी शुरू कर दीं

पर शोक कि जो मनमोहक विज्ञापन मेरा रोग दूर करनेके लिए वड़े-वड़े वादे करते थे, उनकी दवाइयां कुछ भी लाभ न कर सकी। इन दवाओंके प्रयोगमें ही पांच वर्ष वीत गए। मेरा पाचन विगड़ गया और मानसिक चिंता अधिक सताने लगी, स्मरण-शक्ति कमजोर हो गई।

एक मित्रके कहनेपर मै व्यायामशालामें कसरत करने जाने लगा, उसका कुछ लाभ मिला। पर इन्ही दिनों मुझे होटलमें खानेकी आदत पड़ गई। अतः वढ़ता हुआ लाभ रुक गया।

इसी वीच सन् '४२का आंदोलन शुरू हो गया। मै भी उसमें शामिल हुआ। जिसमे मुझे कई महीनोंतक छिपकर काम करना पड़ा। इस अवस्थामे कई-कई दिन खाना नहीं मिलता था पर जब मिलता तो मैं डटकर खा लेता। इसका नतीजा बुरा हुआ। पाचन बुरी तरह खराव हो गया। पकड़े जानेपर कई मास हवालातमें रखा गया। हवालात नर्कसे भी वुरी थी। वहां रही-सही तंदुरुस्ती चली गई।

सजा होनेपर एक सालतक मै एक-एक करके चार जेलोंमें रहा। वहां भी अजीर्ण जारी रहा। अंतिम जेलमें कुछ सुधरा पर वहुत नही। छूटनेपर सेवाग्राम चला गया, जहां चरखा चलानेकी शिक्षा लेने लगा। यहां मेरे ज्यादा खानेकी आदतमें फिर उभार हुआ एवं मलेरिया ज्वर आने लगा फलतः मेरी पाचनशक्ति वहुत विगड़ गई। कमजोरी आ गई और जव मै एक आसनसे वैठकर आठ-आठ घंटे कातने लगा तो कब्ज वढ़ गया और धीरे-धीरे वहुत-सी शिकायतें पैदा हो गई।

मै सेवाग्राम छोड़कर हरिजन-विद्यालय, दोहरीघाट

(आजमगढ़) आ गया। वहां स्वास्थ्य बहुत नहीं सुधरा। निराशा घेरे रहती, शरीर पीला कमजोर हो गया था, पेट भारी लगता एवं उसमे वायु भरी रहती, स्मरण-शक्ति जैसे नष्ट हो गई थी। मुहपर जरा भी तेज नहीं था। स्वप्नदोष तो था ही। वजन घटता जा रहा था। हरिजन-गुरुकुलके संस्थापक स्वामी सत्यानदजीने मुझे प्राकृतिक चिकित्सा करानेकी सलाह दी और आरोग्य-मंदिर, गोरखपुर भेज दिया।

वहां प्राकृतिक चिकित्साके मुझे बहुत साधारण प्रयोग कराए गए। टहलना, भोजन-सुधार, कुछ ठंडे पानीके स्नान। ताकत बढनेपर मुझे कुछ योगासन सिखाए गए। करीब एक महीनेमे मेरी पूर्व-स्थितिमें अंतर पड़ा। मै स्वस्थ होने लगा। तीन महीनेमे बिल्कुल ठीक हो गया। मेरी सारी शिकायतें चली गईं। भूख खूब लगने लगी, कब्ज चला गया और फिर तो रोगके सारे लक्षणोने धीरे-धीरे साथ छोड़ दिया। इन तीन महीनोंमें मुझे दूध-घी नही दिया गया। पर मेरा वजन चौदह पौंड बढा। प्राकृतिक चिकित्साके सीखे नियमोंपर चलकर मैंने अपनी तंदुरुस्ती धीरे-धीरे और भी बना ली है। कइयोंको स्वस्थ होनेमे सहायता दी है। वजन कई पौंड और बढ़ गया है, शरीरमे खूब ताकत प्रतीत होती है, त्वचापर लाली छा गई है। अपनेको मै हर कार्यके योग्य पाता हूं, मैं स्वस्थ रहनेकी कला सीख गया हूं। मुझे बीमार पड़नेका अब कोई डर नही है।

—श्रीनारायण भट्ट

: ४ :

खुजली

लेखिका : चिकित्साके पूर्व

हाथपर खुजलीके घाव देखें

कभी-कभी हम जिन चीजोंको देखकर हंसते हैं वही करनेको हमें मजबूर होना पड़ जाता है। मैं उन्हींमेंसे एक हूं। प्राकृतिक चिकित्साको—मिट्टी, पानी, धूपके उपयोगको—मैं जंगलीपन समझती थी। एक दिन ऐसा आया कि मुझे

उनका उपयोग करना पड़ा, और यह कहते हुए आज मुझे शरम नही वल्कि वड़ी खुशी होती है कि अव तो मैं इनकी भक्त वन गई हूं। मेरे आड़े दिनो ये काम आए, जव कोई मेरा रोग नही मिटा सका तो मैं इनकी सहायतासे चंगी हुई।

लेखिका : चिकित्साके वाद

मैं भक्त कैसे वनी ?

मुझे वड़े जोरसे खुजली हो गई थी। हाथोमे और सारे वदनमें खुजलीके दाने निकल आए थे, जो मवादसे भरे रहते। एक फूटता तो तीन नए निकल आते। सारे वदनमे इस कदर छा गए थे कि लेटना मुश्किल था। दिन तो किसी तरह वातों

और दिलवहलावके साधनोंसे कट जाता पर रात कटनी पहाड़की ऊंची चढ़ाईकी तरह कठिन हो जाती। हाथको उठाए-उठाए मैं 'कंहरती' रहती। साथ ही चिंता वढ़ती कि जव डाक्टर, वैद्य, हकीम मुझे कोई लाभ न पहुंचा सके तो हे ईसामसीह, अव इस रोगसे मेरा छुटकारा किस प्रकार होगा। सवेरे जब घावोंकी पट्टियां खोलती तो यह देखकर कि दाने बढ़ते ही जा रहे हैं, मै रोने लगती। मेरा रोना देखकर मेरे पति व्याकुल हो जाते, पर वे धैर्यसे काम लेते और मुझे भी धीरज वंधाते। उनकी सांत्वनासे थोड़ी देरके लिए मै चुप हो जाती। वे मेरे फफोलोंको फोड़ देते, मवादको पोंछते और घावोंको धो डालते। इन घावोंको देखकर तो मुझे अपनेपर घृणा-सी होने लगी थी।

मेरे पति फर्नीचरकी दूकान चलाते है। वे इन्हीं दिनों एक जगह लकड़ी खरीदने गए जो आरोग्य-मंदिरके पास है। वे मेरे संवंधमें वहांके प्राकृतिक चिकित्सकसे भी मिले। उन्हें यह जानकर बेहद खुशी हुई कि प्राकृतिक चिकित्साद्वारा खुजली जा सकती है और साथ ही यह जानकर भी कि, जैसा कि हम लोगोंका खयाल था कि प्राकृतिक चिकित्सामें अंगूर, अनार, सेव खानेकी जरूरत नहीं पड़ती, वल्कि स्थानीय फल-तरकारियां ज्यादा अच्छा काम करती हैं।

खैर, मै वड़ी मुश्किलसे राजी हुई और अपनी चिकित्सा कराने अपनी छोटी वहनके साथ वहां गई। मेरी छोटी वहनको भी मेरी सेवा करते-करते खुजली हो गई थी।

यहां हमारा पुराना भोजन वंद कर दिया गया। उसके वदले पालक, मूली पत्तोंसहित, प्याज, टमाटर, गाजर, अमरूद, पपीता खानेको दिया जाने लगा। सवेरेसे दोपहरतक मै केवल पानी पीकर रहती। दोपहरको कच्ची सब्जियां खाती और

शामको फल। यह खाना वहुत अखरता था। सवेरेसे दोपहर-तकका समय तो वड़ी मुश्किलसे कटता। मैं सवेरे चाय-रोटी खानेकी आदी थी, इस भारी भोजनके विना पेट खाली-खाली लगता और उस खानेकी याद तो आती ही रहती। शामको हमे एनिमा दिया जाता। मै तो किसी तरह एनिमा ले भी लेती थी पर मेरी छोटी वहनको यह वहुत वुरा लगता। वह नर्ससे एनिमा न देनेके लिए विनती करती, पर नर्स वहुत अनुभवी और होशियार थी, वह मेरी वहनको समझा-वुझाकर एनिमा दे ही देती।

शीघ्र ही इस क्रमसे मुझे अपना वदन कुछ हलका मालूम होने लगा। सुस्ती दूर होकर स्फूर्तिकी प्रतीति होने लगी और घावोके दर्द और तनावमे भी कमी हुई। अब हमें भाप-नहान दिया गया, जिससे विशेप लाभ हुआ और फुसियां मुर्झाने और धीरे-धीरे सूखने लगी। इस क्रमसे मेरी वहन दस दिनमे और मै कुल दो सप्ताहमे चगी हो गई। हां, घावके निशान अव भी वाकी थे जिनको देखकर लगता था जैसे मेरे सारे वदनको किसीने क्षत-विक्षत किया था।

आरोग्य-मंदिरमें समय-समयपर होनेवाले लेक्चरोंसे मैंने जाना कि मास अच्छी चीज नही है, चीनीके वदले गुड़ खाना अच्छा है, और आटेसे चोकरको नही निकालना चाहिए, क्योकि वह कब्ज दूर करता है। मै मास वहुत खाती थी, समझती थी कि इससे वल मिलता है। पर जव मै मास खाती थी तो मेरी हालत यह थी कि कुछ दूर चलनेपर ही मै हांफने लगती थी और लौटनेपर चारपाईपर लेटकर मुझे आराम करना पड़ता था। अव जव मैंने इसका उपयोग छोड दिया है तो मेरी वह कमजोरी चली गई है। कितना ही मै चल लू मुझे किसी

तरहकी कमजोरी नहीं मालूम होती और रोटी-तरकारी और फलोंका यह भोजन मुझे अव अधिक स्वादिष्ट लगने लगा है। एक वात कहना भूल रही हूं। मुझे ववासीरका मर्ज भी था, वह भी खुजलीके इलाजमें ही चला गया, उसकी तो मैंने चिकित्सकसे चर्चा भी नहीं की थी।

मै सोचती हूं कि ये ओषधियां जो वड़े-वड़े कारखानोंसे वनकर आती है या वैद्योंके घरमे बनती हैं, क्या विल्कुल बेकार नहीं है? इन वड़े-वड़े डाक्टर, वैद्यों, हकीमों, उनकी दवाओंके रहते हुए भी ये रोग क्यों फैल रहे है? इनकी संख्या क्यों बढ़ रही है? मुझे लगता है, यह सब धोखा है। पैसा कमानेका एक नीच तरीका है। प्राकृतिक चिकित्सा तो वह जीवन सिखाती है जिसपर चलनेपर आदमी कभी बीमार नहीं पड़ सकता। यह जीवन अनुभव करनेकी चीज है और इससे मिला अनुभव कोई छीन नही सकता और फिर न कोई हमे भुलावा ही दे सकता है।

खुजलीसे मुक्ति पाए मुझे सात वर्ष हो गए। तबसे मैं और मेरा परिवार रोगसे मुक्त है। अगर कोई कभी वीमार भी पड़ता है तो मिट्टी, पानी, धूप, आकाश और हवाके, जिनसे हमारे शरीरकी रचना हुई है, प्रयोगसे शीघ्र अच्छा हो जाता है। प्राकृतिक चिकित्साने मेरे परिवारमें सुख और शांति वख्शी है इसके लिए मै इस चिकित्साको चलानेवालों और इसका प्रचार करनेवालोंकी कृतज्ञ हूं।

इसके वाद तो मेरे घर जव कभी कोई वीमार पड़ा मैंने इसी उपचारका आश्रय लेकर लाभ उठाया। उन सवका इलाज मैं खुद कर सकी।

—श्रीमती रविकादत्त

: ५ :

खांसी, रक्काल्पता (अनीमिया) और संग्रहणी

टाइफाइड (मियादीबुखार) पूरा जा भी नही पाया था कि इसकी वजहसे महीनेभरके भीतर-ही-भीतर मुझे तीन
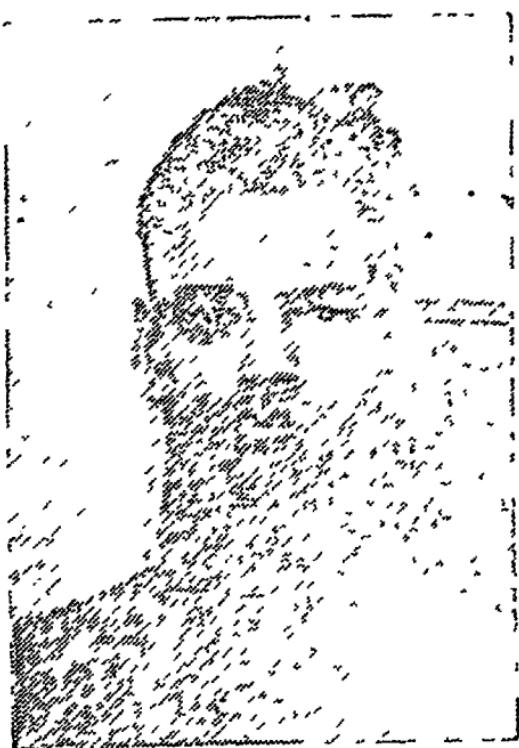
लेखक

रोगोने आ घेरा। कमजोरी इतनी बढी कि दस कदम चलना दूभर हो गया। पेटकी खराबी तो महीनो नहीं सालोसे थी, पर खासी तो हालहीमें मेरी साथिन हुई थी। मेरी

दशा देखकर परिवारवालोंकी परेशानी बढ़ी । डाक्टरको छोड़ वैद्यजीकी दवा शुरू हुई पर हुई वह वेकार साबित। शरीरमें रक्त घटने लगा। कभी-कभी वैद्यजी डरा देते कि वरावर खांसीका बने रहना अच्छा चिह्न नहीं है । उनका कथन मुझे अधमरा कर देता। सोचता कि क्या मरना ही होगा ? वैद्यको बिदा करके फिर डाक्टरको याद किया। कैलशियम और विटामिनोंकी गोलियां चलीं और सूइयां चुभाई जाने लगीं। पहली सूईके वाद ही कड़ा वुखार आया और वांहमें जोरका दर्द। उसी समय डाक्टरी दवा और इंजेक्शन तो वंद हो गए। पर कुछ-न-कुछ तो करना ही चाहिए। मेरे मुरव्वियोंकी राय जलवायु-परिवर्तनके लिए हरिद्वार या नैनीताल जानेकी हुई। मैंने सोचा रोग न जाय तबतक जल-वायु-परिवर्तनके लिए जानेसे क्या फायदा होगा ।

इसी समय मेरे मनमें प्राकृतिक चिकित्साको आजमानेका खयाल उठा। मेरे स्थानसे आरोग्य-मंदिर सिर्फ एक मील है। एक दिन साइकिल रिक्शेपर जाकर चिकित्सकको अपनी कहानी सुनाई। उनसे आराम होनेकी पूरी आशा और आश्वासन पाकर २१ मई १९४७को मैं वहां दाखिल हुआ पर पहले दिन जो खाना मिला वह वड़ी मुश्किलसे गलेके नीचे उतरा। उसमें न घी था न कोई मिर्च-मसाला। विल्कुल सादी रोटी और थोड़ा सलाद। संतोष यही था कि मेरे साथ बैठे वहुतसे रोगी और चिकित्सक महोदय भी करीव-करीव यही खाना खा रहे थे और कहना चाहिए कि मजेके साथ खा रहे थे। मुझे पहले कभी ऐसा खाना खानेकी आदत नहीं थी लेकिन हफ्तेभर-की आदतसे ही इसी खानेमें मुझे भी पूरा मजा आने लगा। चटपटी चीजों—खटाई-मिठाई—से मन उतरने लगा। एक

दिन मेरे घर एक मंदिरकी मूर्तिकी प्राण-प्रतिष्ठाके सिलसिलेमें कई तरहके पकवान बने थे। मुझसे घरवालोंने प्रसादरूपमें थोड़ा-सा पकवान पा लेनेका बहुत आग्रह किया। पर मैंने भगवान्‌के प्रसादस्वरूप कुछ फलमात्र ही लिए।

चिकित्सा-क्रम

पहले दिन ठंडे पानीका ५ मिनटका कटिस्नान (हिपबाथ) लेकर यथाशक्ति टहलना बताया गया। मैं बड़ी हिम्मत करके १५ मिनट चला होऊंगा कि मेरा दिल घबराने लगा। पर धीरे-धीरे कुछ दिनोंमें बिना किसी थकानके मैं ४-५ मीलतक घूमने लगा। कटि-स्नान भी ५से १५ मिनटतकका हो गया। धीरे-धीरे कुछ योगासन करने लगा। मालिश, भाप-नहान और ठंडेगरम पानीके कई तरहके स्नान भी चलने लगे।

यह आमका मौसम था और मैं आमका बेहद शौकीन। मैंने अपनी खूराकमें चिकित्सक महोदयसे आम शामिल करनेकी मांग की। उन्होंने १५ दिन बाद आम और दूधका कल्प करानेकी मंशा जताई। पर १४वें दिन डाक्टरने मेरी रुचिकी कुछ परवाह किए बिना यकायक मुझे मठेके कल्पका हुक्म सुना दिया। चिकित्सकने कहा जब दस्त फूला आ रहा है तो अभी आमका समय नहीं आया। कोठेके कुछ ढंग संग्रहणीके हैं। जबतक यह फसाद दूर न हो तबतक सिर्फ मठा लो। जी तो बहुत छटपटाया पर करता क्या? दूसरे, इतने दिनोंमें कुछ खाने-पीनकी बातें समझ भी गया था, इसलिए चिकित्सक-की सलाहका सत्य मैं समझ रहा था। सवा सेर दूधके मठेसे शुरू करके २१ रोजमें ४॥ सेरतक पहुंचा। एक पाव दही दो छटांक पानीके साथ सिर्फ मथ लिया जाता, मक्खन नहीं निका-

लते। प्रति डेढ़ घंटेपर एक खूराक लेता था। खांसी तो बारह दिनमें ही चली गई थी। खूनकी कमी एक महीनेमें गई और संग्रहणीको भी साथ लेती गई। शरीरका दुबलापन बाकी रहा। पर उसकी मुझे बहुत परवा नहीं थी। क्योंकि पतले शरीरके भीतर एक नई स्फूर्ति और एक प्रकारका ओज जान पड़ रहा था।

बीचके विघ्न

मेरा मठा-कल्प चालीस दिनके लिए था। लेकिन २१वें दिन घर जाकर मैंने थोड़ेसे जामुन खा लिए। मुझे पता नहीं था कि मठे और जामुनकी दोस्ती नहीं है। मठेके अलावा मेरे लिए कुछ भी मुंहमें डालनेकी मनाही थी। पर इस जीभ-निगोड़ीने मुझे स्वादके लालचमें फंसाया। बहुतोंको यह जीभका स्वाद मारता है, मुझे भी इसने बड़ा दु:ख दिया। लगभग घंटेभर बाद पेटमें जोरकी गड़गड़ाहट हुई और दर्द शुरू हुआ। मैं बहुत बेचैन हो गया। कै की इच्छा हो, पर कै हो नहीं, यही हालत दस्तकी भी थी। मेरी टेबुलपर एक कागजी नीबू रखा था, मैंने उसे चूसा। उसके बाद सेरों कै हुई। काफी पित्त गिरा। मैंने चिकित्सकको सूचना दी, मैं बड़ी घबराहटमें था। उनसे खूब सांत्वना मिली। मुझे १०३ डिग्री ज्वर हो आया था। पेटपर मिट्टीकी पट्टी दी गई, पीनेको ठंडा पानी। इससे मुझे काफी शांति मिली। ३-४ दस्त हुए, पेटकी पूरी सफाई हो गई। ये सारे उपद्रव शामको पांच बजेके करीब शुरू हुए थे और रातको ९ बजते-बजते मैं सबसे छुटकारा पा गया। बुखार कब गया यह तो देखा भी नहीं गया। मेरे लिए दो दिनके उपवासका हुक्म निकला। माना मैंने, क्योंकि

भूल मेरी थी, दड दूसरा कौन भोगता ? इसके वाद फिर मठा चालू हुआ। ३-४ दिनतक दोपहरतक मठा, शामको थोड़ा भात और उबाला हुआ केला मिलता। इससे स्वास्थ्य ठीक होता गया। फिर आम खानेकी भी इजाजत मिली। तवसे मेरी हालत वरावर सुधरती गई। मैंने तीन महीने नमक और चीनीका परहेज किया। अव भी भोजन विल्कुल सादा, विना मिर्च-मसालोका करता हू। मै इस समय अपनेको वीमारीसे पहलेकी अपेक्षा स्वस्थ समझ रहा हूं। मै प्राकृतिक चिकित्साका अत्यत कृतज्ञ हूं। स्वास्थ्यके सवधमे मुझे एक नई दृष्टि मिल गई जो मेरे लिए सवसे वड़ा लाभ है।

—श्रीसत्यनारायण झुंझनूवाला

311

: ६ :

उकवत

मै पूरे चार साल वीमार रहा। जव वीमारी शुरू हुई उस समय मेरी उम्र वारह सालकी थी, आज मै सोलहका हूं।
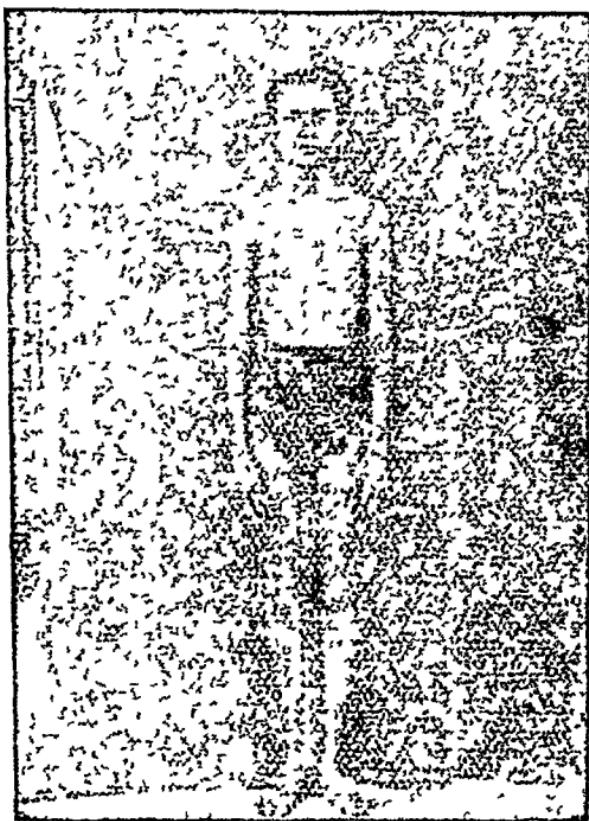
लेखक : चिकित्साके पहले

चार महीने पहले मै वारह वर्षका वच्चा लगता था, आज मैं सोलह वर्षका युवक हूं, यह प्राकृतिक चिकित्साकी कृपा

है। वच्चा इसलिए लगता था कि मेरा शरीर कभी वढ़ा ही नही। जव रोग पीछा न छोड़े तो शरीर कहासे वढ़े।

चार वर्ष पहले मुझे मलेरिया हुआ, जो हर दूसरे दिन आता। यह सिलसिला लगभग दस माह चला। इसके लिए
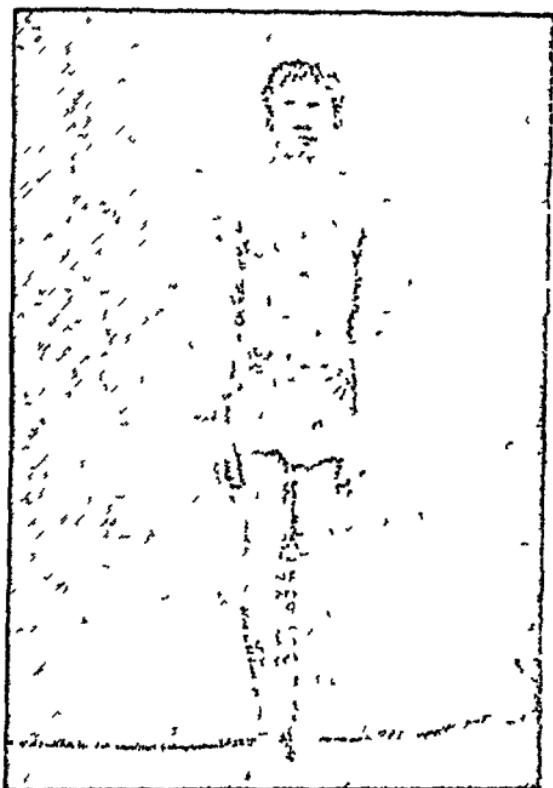
लेखक : स्वस्थ होनेपर

मै कुनैन खाता, डाक्टर वर्मनका 'जूड़ीताप' पीता तथा और भी कई दवाए पीई, इतनी कि घरमे शीशियोका ढेर लग गया। नतीजा हुआ यह कि ज्वर तो नही गया, मेरी श्रवणशक्ति चली गई, मै ऊचा सुनने लगा। शरीर काला हो गया, भूख चली गई और लोग पूछने लगे कि तुम्हें दिक तो नही हो गया

है ? पाठक स्वयं सोचे आपकी ऐसी हालत हो और यह प्रश्न आपसे कोई करे तो आपपर क्या बीतेगी ? लोगोंकी सूरतसे मुझे घृणा हो गई। तबियत चाहती किसीका मुह न देखूं।

मै रहता था नैपालकी तराईम। घरवालोंकी सलाहसे मैंने वह स्थान छोड़ दिया। इसके फलस्वरूप ही, या संयोग कहिए कि बिना किसी दवाके मेरा ज्वर तो चला गया पर मै पनप न पाया। ज्यों-त्यो सालभर घसीटता रहा, इसी बीच सारे शरीरपर खाज हो गई। अब खाजकी दवा होने लगी, पर खाज दबी नही। इस खाजके लिए क्या-क्या नहीं किया, कितनी दवाएं लगाईं, कितने मरहम। आज तो उनके नाम भी याद नही है। अंतमे एक वैद्यकी दवा, काढ़े और लेपसे खाज तो रुकी, पर एक पैरमे भयंकर उकवत (एक्जिमा) हो गया। पूरे पैरकी त्वचा हाथी-चाम हो गई, मोटी, खुरदरी, काली। जब मेरी नजर पैरपर जाती मुझे एक धक्का-सा लगता। मै कोशिश करता कि पैरपर नजर ही न पड़े। इससे मुक्ति पानेकी कोशिश जारी रही। पर कोशिश क्या चलती जब दवा देनेवाले ही कहते कि यह रोग अच्छा नहीं होता। उनके इस कहनेसे मैंने उकवतकी दवा तो बंद कर दी, पर संयोगसे उकवतपर एक प्राकृतिक चिकित्सकका लिखा लेख मुझे एक साप्ताहिक पत्रमे पढ़नेको मिल गया। उसके बताए अनुसार मैं दिनमे कई बार नहाता। गर्मीके दिन थे नहाना अच्छा भी लगता, इससे उकवतकी भयंकरता तो मिटी पर चमड़ेकी मोटाई और कालेपनमे कोई अंतर नहीं पड़ा।

इस तरह मै घिसट रहा था कि एकाएक मेरी भूख बंद हो गई। कमजोरी थी ही। वह और बढ़ने लगी। पेटमें धीमा-

धीमा दर्द रहता। कोई चीज खाता तो वह पचती नहीं। मुंहका स्वाद फीका रहता। किसी चीजके खानेकी इच्छा नही होती। आख पीली हल्दी-सी हो गई। वैठे-वैठे ही मैं सूखने लगा। इसके लिए महीनो डाक्टरोकी दवा की, पर सव वेकार। एक वैद्यजीके पास गया, उन्होने मुझे सूइयां लगाई, आसव-अरिष्ट पिलाए। जिससे इतना फर्क पडा कि अव मैं जो खाता फौरन उसी रूपमे कै हो जाता। मै जीवनसे निराश हो गया। मैंने समझ लिया कि अव मेरा वचना कठिन है। सारे शरीरपर रक्खा हुआ एक सिरभर दिखाई देता जो अजीव वड़ा और वेडौल-सा लगता था। मेरे मरनेमे अव देर नही है, इसमे अव किसीको कोई सदेह नहीं रहा।

इसी वीच मेरे जीजा श्रीरामप्रसादजी, जो गोरखपुरके आरोग्य-मदिरमे सहकारीका काम करते है, मेरे यहा आए। उन्होने मेरी हालत देखी-सुनी और मेरे घरवालोको समझाकर मुझे अपने साथ प्राकृतिक चिकित्साके लिए ले गए।

वहा मेरे स्वास्थ्यकी परीक्षा होनेके वाद इलाज शुरु हुआ। सवेरे-शाम पेडपर मिट्टीकी पट्टी, और खूराककी शक्लमें थोड़ा-थोड़ा टमाटर, लौकी और पालकका रस दिया जाने लगा। यह मुझे पचा। अव जहां मैं दिन-रात चारपाईपर पडा रहता था वहां मै एक-दो फर्लांग टहलने लगा। मुझे लगा अव मै जरूर अच्छा हो जाऊगा। चिकित्सासे अधिक मुझपर वहाके आशाप्रद वातावरणका प्रभाव पड़ा। वहा एक-से-एक पुराने रोगी थे, मुझसे भी गए वीते। हजारो रुपए खर्च करके, चिकित्सा करानेके वाद, निराश होकर यहा आए थे। 'जव इन्हे लाभ हो रहा है तो मुझे क्यो नही होगा' ऐसा मैंने सोचा। सवसे वाते करनेमे, सवकी चिकित्सा देखनेमें

मल भी लगता। कुछ-कुछ मनमे यह बात भी आई कि यह चिकित्सा तो बड़ी आसान है। इसे जान-सीखकर मैं अपने गांव-वालोंको भी दवा और रोगोंके जालसे मुक्त करूंगा।

जरा शक्ति बढ़नेपर मुझे थोड़ा मट्ठा मिला और चिकित्सा भी कई प्रकारकी चलने लगी। मैं सवेरे-शाम जस्टका प्राकृतिक नहान दो-दो मिनट करता, मालिश मिलती। कभी गरम ठंडे पानीके टबोंमे बैठता तो कभी धूपस्नान दिया जाता। उकवत-की जगहपर गीली पट्टी लपेटनेके बाद ऊनी पट्टी लपेटी जाती। दो सप्ताहके अंदर मैं रोज एक मीलतक टहलने लगा। अब मुझे भोजनमें सवेरे पालकका पावभर रस और दोपहर और शामको रोटी-सब्जी दी जाने लगी। दो सप्ताहकी चिकित्साके बाद मेरी आंखोका पीलापन कम होने लगा और पैरके उकवतको ध्यानसे देखनेसे लगता कि वह भी कम हो रहा है।

डेढ़ महीनेमें मेरा जो वजन केवल ७० पौंड था ७७ पौंड हो गया। भूख मुझे कसकर लगने लगी और मेरा भोजन करीब-करीब उतना ही हो गया जितना मैं स्वस्थ दशामें खाता था। शरीरमे शक्तिका संचार हो गया था। लगता था कि बिजली भर गई है, एक मिनट बैठा नही जाता था। कुछ-न-कुछ किया ही करता। यदि अपना काम न होता तो दूसरेका ही काम करता। सवेरे-शाम चार-चार मील टहलता। नींद ऐसी गाढ़ी आती कि बच्चोंकी तरह सोता। एक करवटमें ही सवेरा हो जाता। कानोंसे ठीक सुनाई देने लगा।

हालत इतनी सुधर जानेपर मैं घर चला आया और अपने काम-काजमें लग गया। घर मैंने चिकित्साके नाम सिर्फ शाम-सवेरे टहलना और प्राकृतिक चिकित्सालयका भोजन

जारी रखा। मुझे यह इतना स्वादिष्ट लगता है कि मैं इसके सिवा किसी दूसरे भोजनकी सोच ही नही सकता। इसे वदलूं कैसे? इससे सस्ता भोजन मिलना भी तो कठिन है और जव कि इसी भोजनसे मेरा वजन १०२ पौंड हो गया है। मैं हर तरहसे अपनेको नीरोग पाता हूं। रोगके वाहरी निशान आंखोंका पीलापन और उकवत तो डेढ़ महीनेमें ही मुझसे विदाई ले गए।

पहलेकी वात सोचता हूं तो लगता है कि मैं एक भयानक सपना देखकर उठा हू। कहां वह मेरा ककाल शरीर, कहां यह स्फूर्तिसे भरी थकानको न माननेवाली यह मांसल देह जो हमेशा कामकी खोज करती है। कहां वह गिरा हुआ रोग और मृत्युके भयसे आक्रांत मन, कहां यह दीर्घजीवन और स्वास्थ्यके आनंदसे आप्लावित हृदय। मै कुछ दूसरा ही हो गया हूं। यह सव प्रकृतिमाताका प्रसाद है। वार-वार उसके चरणोंमे मेरा मस्तक झुक जाता है।

—श्रीदयाराम गुप्त

दमा और गठिया

पहले मुझे गठिया और दमा था। अब मैं चंगा हूं। रोगकी

लेखक : चिकित्साके पहले

अवस्थामे मेरा वजन ७४ पौंड था, स्वस्थ होनेपर ९४ पौंड।

मे रोगसे तो मुक्त हुआ ही और अनेक कुटेवोंसे भी। पंद्रह वर्षकी मेरी उमर, इसी अवस्थामे अनेक दुर्व्यसनोका शिकार हो गया था। बीड़ी-सिगरेट धकाधक पीता, चाय सवेरे-शाम पीता और शराब तो मेरे पिताजी रोज अपने साथ पिलाते
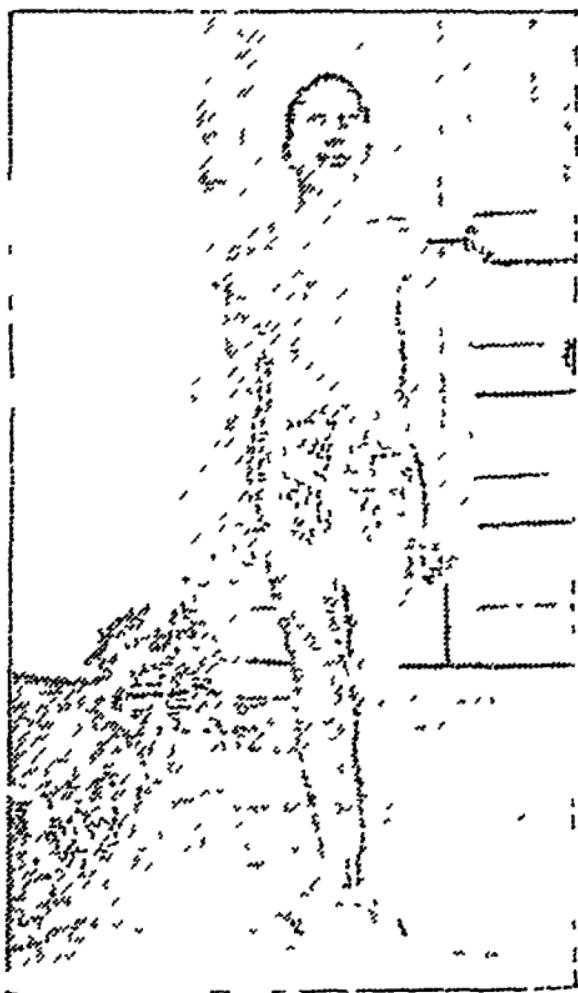
लेखक : स्वस्थ होनेके बाद

थे। पावभर वह रोज खुद पीते, छटाक-डेढ छटांक मुझे देते। वह समझते थे कि मेरी कमजोरी इसीसे जायगी।

जो मुझे देखता था, कहता था कि शराब पीओ, यह तराई है, यहां जो पानी लगता है शराबसे ही उतरता है। इसलिए शराब चली, पर पानी लगा ही रह गया और शराब तो लगी ही !

मुझे वेहद कमजोरी थी। चलना कठिन था। तीन-चार फर्लांग चलता तो इतनी थकान होती कि लेटनेको जी चाहता, दम फूलने लगता। यह दमका फूलना एक सालसे चला आ रहा था। गर्मीमें ज्यादा हो जाता। दमका फूलना खांसीके दवनेके वाद शुरू हुआ था। पहले खांसी थी। वैद्यजीने दवा, दी। खासी गई और दमा आ गया।

मुझे गठिया भी था जो दो वर्षसे चल रहा था। जोड़ोंमें महीने-वीस दिनपर एक वार दर्द हो जाता जो वारह घंटेसे लेकर चौवीस घंटेतक रहता। पर इतने ही वक्तकी पीड़ा मुझे अधमरा वना देती। जवतक दर्द रहता पीड़ाके कारण खाया-पीया न जाता।

यह नही है कि यह सव तकलीफे मै झेलता रहा और कोई चिंता नही की। चिंता मुझे और मेरे घरभरको थी। स्थानीय डाक्टर-वैद्योकी दवा चलती रहती। जव किसीकी दवासे लाभ नही हुआ तो मुझे लखनऊ ले जाया गया। वहांके वड़े अस्पतालके सिविल सर्जनने मेरे स्वास्थ्यकी परीक्षा की और मेरे दमेके निवारणके लिए करीव दो दर्जन सूइयां लगाईं।

इंजेक्शनोसे मुझे कुछ लाभ माल्रूम हुआ। तीन महीनेतक लगे। दमा चला गया। पर तीन महीने वाद हालत धीरे-धीरे पहले-जैसी हो गई। अव दमेका दौरा रातमें भी आने लगा। इसकी वजहसे सोना मुश्किल हो गया। दम जोरोंसे

चलता। घरवाल घवराते रहते और मेरी खाटके पास वैठे रातों जागते रहते।

मेरे संवंधी इसी खोजमे थे कि मेरे रोगकी कोई अच्छी दवा मिल जाय। वे गोरखपुर आए और अपने मित्रो एवं परिचितोसे पूछ-ताछ करने लगे। इरादा था कि यदि गोरख-पुरमे कोई सुभीता न वैठा तो फिर कही वाहर देखा जाय। इसी समय उन्हे किसीने गोरखपुरके आरोग्य-मंदिरका पता वताया, जहांसे कितने ही दमेके रोगी अच्छे होकर जा चुके है। उन्हे इसका विश्वास होनेपर मुझे वहा दाखिल करा दिया गया।

प्राकृतिक चिकित्सालयमे मै ९६ दिन रहा। चिकित्सा मेरी यो शुरू हुई :—

दस दिनतक मुझे सवेरेसे दोपहरतक उपवास कराया जाता और दोपहर और शामको खानेके लिए चोकरसमेत आटेकी रोटी और सब्जी मिलती। चिकित्सामे सवेरे और शाम तीन-तीन मिनटका कटि स्नान और करीव दस वजे दिनको पेड़ूपर गीली मिट्टीकी पट्टी रखनेके वाद एनिमाद्वारा मेरा पेट साफ कराया जाता।

दस दिन वाद भी चिकित्सा यही चलती रही पर भोजनमे रोटी-सब्जीकी जगह फल-दूध मिलने लगा। सवेरे-दोपहर-शाम मै तीन वार फल-दूध लेता। आरंभमे एक-एक पाव दूध लिया पर धीरे-धीरे एक वारमे आध सेरसे लेकर रोज डेढ सेर लेने लगा। फल कुल कोई सेरभर लेता। फलोमे उस वक्त नास्पाती और अमरूद आ रहे थे, वही मुझे दिए जाते।

पंद्रह दिन वाद चिकित्सा थोडी वदली गई। एनिमा मुझे तभी दिया जाता जव कब्ज रहता। पर कब्ज अव चला

गया था। दस-पंद्रह दिनमें एक बार एनिमा लेनेकी जरूरत पड़ती। कटिस्नानकी जगह मेहननहान वताया गया जिसे मैंने तीन मिनटसे शुरू करके एक सप्ताहमें सात मिनटतक कर लिया। शामको चार वजे रोज छातीपर गीली पट्टी बांधी जाती। एक गीला कपड़ा छातीपर लपेटनेके वाद उसपर ऊनी कपड़ा लपेट दिया जाता। यह पट्टी करीव घंटे-भर रहती।

शामको पांच वजे मुझे योगासन कराए जाते। आरंभमें आसन तो मैं मुश्किलसे कर पाता। पर एक सप्ताहमें ही मुझे आसनोंका ठीक अभ्यास हो गया और मैं उन्हे ठीक-ठीक करने लगा।

ताकत आनेपर सवेरे मेहननहान लेनेके वाद कुछ कसरतें करने लगा। ये कसरते दड-वैठक नहीं थी, वल्कि वहुत हल्की कसरते थी जो मुझसे धीरे-धीरे पंद्रह-बीस मिनटतक कराई जाती।

फल-दूध एक सप्ताह चलानेके वाद मुझे दो दिनका उपवास कराया गया और फिर भोजनमें दोपहर-शाम रोटी-सब्जी मिलने लगी। नाश्तेमें सवेरे आध सेर गायका कच्चा दूध और दो अमरूद।

चिकित्साके आरंभसे ही मुझे थोड़ा-थोड़ा लाभ मालूम होने लगा। पर वीच-वीचमे कमजोरी वहुत वढ़ जाती, गठिया-का दर्द कभी-कभी आ जाता। जो पहले केवल पैरमे ही आता था वह एक वार हाथ-पैर दोनोंमे ही आ गया। यह देखकर मेरी चिंता वढ़ जाती, लगता कि यह चिकित्सा भी मेरे लिए व्यर्थ सिद्ध होगी? इस समय मुझे चिकित्सकका आश्वासन वहुत शक्ति और आशा देता। वे वताते कि ये सव उभार

है, रोगका वढ़ना इस वातका सूचक है कि रोग शीघ्र जानेवाला है। और हुआ भी ऐसा ही। पचहत्तर दिन वाद मुझे कोई उभार नही हुआ, रोगका कोई लक्षण नहीं रहा, फिर भी में तीन सप्ताह चिकित्सालयमें और ठहरा। इस वक्त मैंने कुछ और कसरतें सीखी जो पहली कसरतोसे कठिन थी। इनको करनेसे ताकत खूब वढ़ी।

मै स्वस्थ रहनेका सही तरीका जान गया हू। समझ गया हूं कि नित्य कसरत करने और ठीक भोजन करते रहनेपर किसीको कभी भी कोई बीमारी नही हो सकती।

—श्रीरामलखन गुप्त

: ८ :

दमा

मुझे विश्वास है कि मेरी कहानीसे बहुतसे लोग नसीहत लगे जिसने मुझे नीरोग ही नही वना दिया अपितु अपनी सहायतासे मुझमें एक ऐसा परिवर्तन ला दिया जिसके कारण मै आज स्वस्थ और सवल होनेका दावा कर रहा हूं। सन् १९४७ ई०मे जव नोआखालीमें साम्प्रदायिकताका विप फैला हुआ था और उसे शांत करनेके लिए राष्ट्रपिता महात्मा गांधी वही धूनी जमाए हुए थे, मैं भी वहां गया था। हां, असावधानीके कारण मुझे सर्दी-खांसी हो गई। और वहांसे लौटनेपर भी मै उससे मुक्ति न पा सका। वह कई महीनोंतक उसी तरह घटती-वढ़ती रही, क्योंकि उन दिनों मै अपने जीवनको वड़ी अवहेलनाकी दृष्टिसे देखने लग गया था। परिणाम यह हुआ कि वही सर्दी-खांसी मेरी गलतियोंके कारण वढ़ती-वढती दमेके रूपमे परिणत हो गई और रोज आधी रातके वाद मेरा सोना सपना हो गया। खांसी और खांसीकी गति इतनी कष्टदायक हो गई कि मैं कभी-कभी आत्महत्याकी वात भी सोचने लग गया।

दमेका कष्ट इतना प्रवल और असह्य होता है कि जो भुक्तभोगी है वे तो समझते ही हैं। जो लोग रोगीको कष्ट भोगते देखते है वे लोग भी स्तभित हो उठते हैं। मै तो इस दु:सह रोगसे आतंकित रहने लग गया और इसके दौरेका आभास पाकर ही मैं दहल उठता था। मैने इससे मुक्ति पानेके लिए

अनेक प्रयत्न किए, परंतु किसी प्रकार भी मुक्ति न पा सका। अंतमे मैंने गोरखपुरके आरोग्य-मदिरमे जाकर अपनी समुचित चिकित्सा करानेका निश्चय किया। वहांके चिकित्सकने मेरी सारी दु ख-कहानी ध्यानपूर्वक सुनी। उसी दिनसे मेरी प्राकृतिक चिकित्सा भी आरभ हो गई। इस चिकित्साके आरभमे ही मुझे यह बतला दिया गया था कि चिकित्साके दरमियानमे दमेका दौरा यदि अधिक हो जाय तो घवराना नही चाहिए, क्योकि प्राकृतिक चिकित्सा रोगोको, जो भीतरी विकारोके वाहरी लक्षणमात्र है, दवाती नही है। सवके मूलमे रहनेवाले उन विकारोको निकालकर यह वाहर फेक देती है जिससे कि जीवन अपनी नैसर्गिक अवस्थामे आ जाता है। यही कारण है कि कभी-कभी उन विकारोको वाहर निकालनेकी क्रिया प्रवल हो उठती है और वही रोगके रूपमे नजर आती है।

मेरी चिकित्सा दो तरफा हुई। एक तरफ तो कई तरहके वाहरी उपचार आरभ किए गए। इन उपचारोमे भोजनका नियंत्रण, प्रतिदिन प्रात-सध्या टहलनेका क्रम तथा कुछ और भी उपचार सम्मिलित थे। दूसरी तरफ मेरे मस्तिष्कको समझानेका क्रम भी चालू कर दिया गया कि रोग क्या है? उसके कारण क्या है? चिकित्सा कैसी और क्यो होनी चाहिए? प्राकृतिक चिकित्साकी विशेपता और उपयोगिता क्या है? सत्य यह है कि चिकित्सा केवल मेरे शरीरकी नहीं हो रही थी वल्कि मेरे मन और वुद्धिको भी ठीक किया जा रहा था। यही कारण है कि वहासे चिकित्सा कराकर वाहर आनेवाले केवल नीरोग होकर ही नही लौटते किंतु एक छोटे-मोटे चिकित्सक होकर आते है। मेरी मानसिक एवं वौद्धिक चिकित्सा उपयुक्त पुस्तकोके अध्ययनके द्वारा तथा चिकित्सकके व्याख्यानोद्वारा होती थी।

मैं प्रतिदिन उषाकालमे उठ जाता था और निपटकर मैदानमे टहलने चला जाया करता था। टहलते समय कैसे
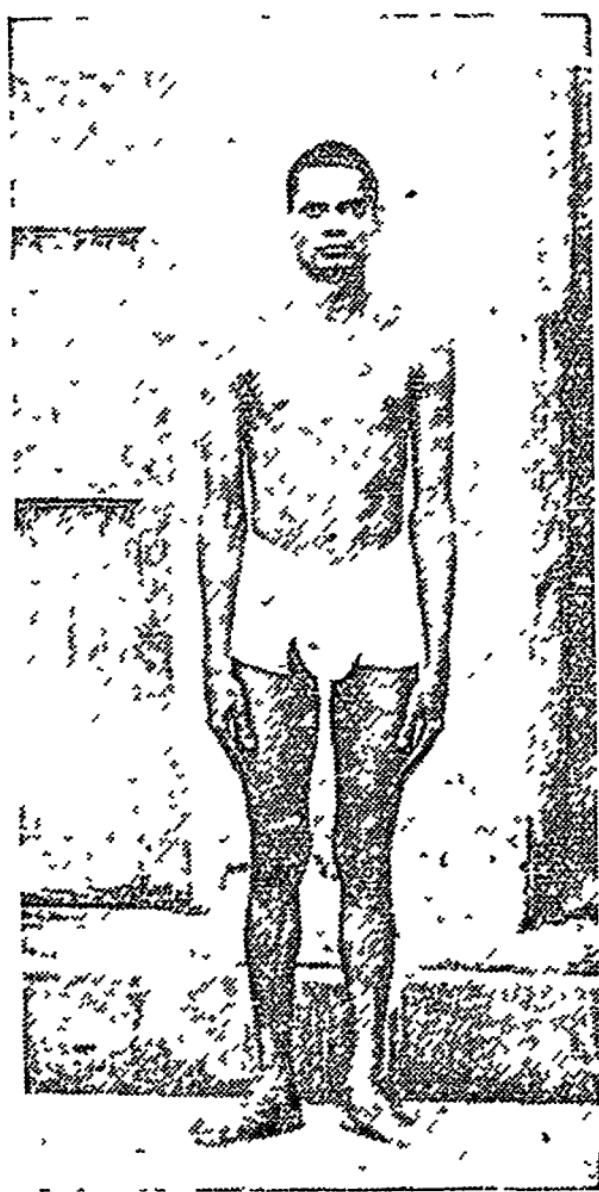
लेखक : चिकित्साके पहले

चलना चाहिए एवं किस प्रकार स्वांस लेना चाहिए आदि आव-

श्यक बातें भी मुझे पहले ही बता दी गई थी। रास्तेमें प्रायः प्रतिदिन मुझे स्वयं चिकित्सक महोदय टहलकर लौटते मिल
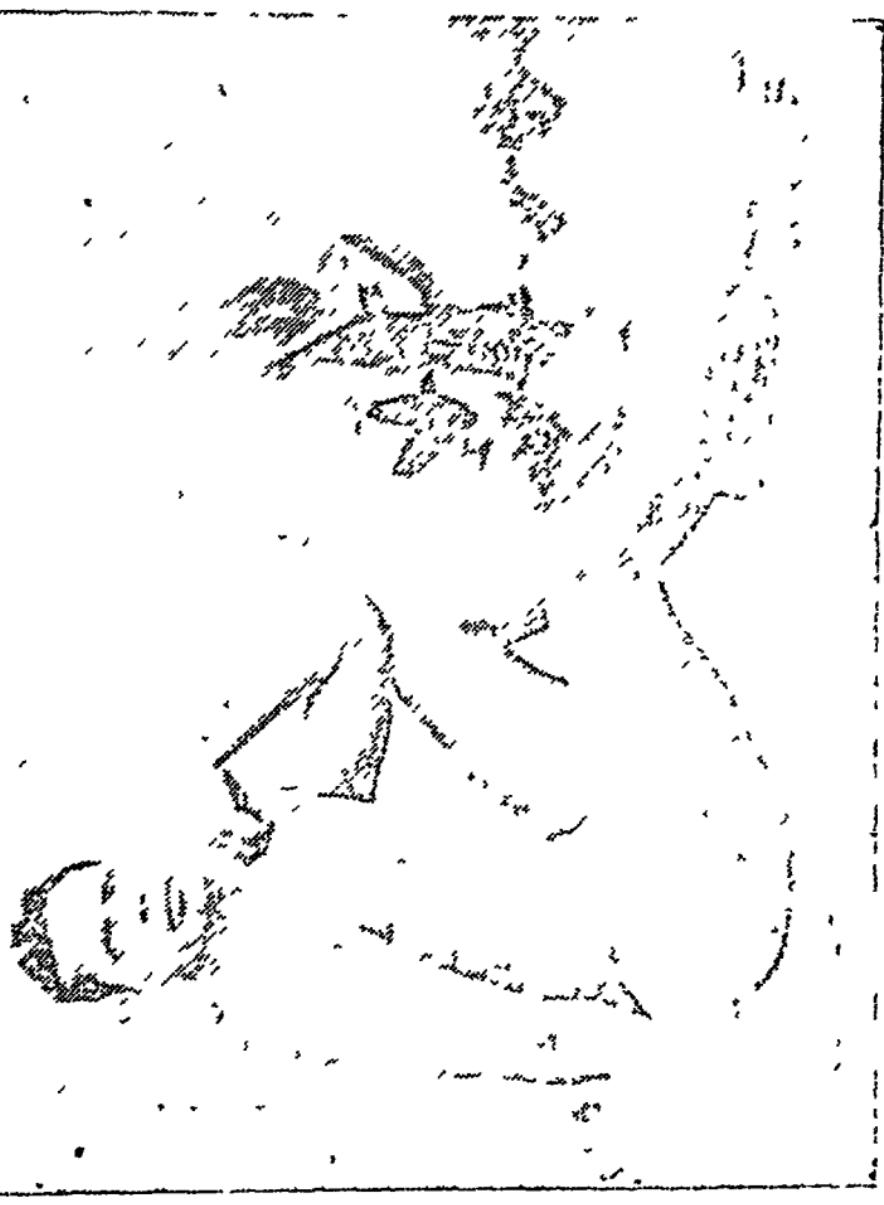
जाया करते थे और मेरे स्वास्थ्यकी खबर पूछकर एक-न-एक प्रभावोत्पादक इंजेक्शन देते थे। यह इंजेक्शन बातोंका ही

होता था। इसका मेरे मस्तिष्कपर गहरा प्रभाव पड़ता था और मैं क्रमश. अपनेको अधिक स्वस्थ महसूस करने लग जाता था। रास्तेमें ही वहुतसे अमरूदके वाग पड़ते थे। ३-४ ताजे अमरूद खरीदकर वही खा भी लेता था। यही मेरा प्रात.काल-का नाश्ता था। लौटकर थोड़ा इधर-उधर टहलता, कुछ पढ़ता, कुछ वाते करता और इस प्रकार हंस-खेलकर प्रात.काल-का समय व्यतीत कर देता। फिर चिकित्सक महोदयकी आज्ञानुसार कुछ अन्य बाहरी उपचार आरंभ किए जाते थे। कभी छातीपर गीली पट्टी, कभी पेड़ूपर मिट्टी, कभी वाष्प-स्नान, कभी मालिश, कभी धूपमें लेटना आदि अनेक ऐसे उपचार किए जाते थे जिनसे शारीरिक लाभके साथ-ही-साथ एक ऐसा मनोवैज्ञानिक वातावरण तैयार होता था कि रोगी अपने रोगका भूल जाता था। इसके वाद जलसे भरे टवोंमें प्रचुर जलसे शरीरको खूव मल-मलकर स्नान करता और फिर छतपर जाकर थोड़ा-सा प्राणायामका भी अभ्यास करता था।

ठीक वारह वजे भोजनके लिए चला जाता था। भोजन रोटी, काफी तरकारी, कभी-कभी गेहूंका दलिया आदिके रूपमें मिलता था। पहले पहल यह भोजन, लाभकारी होते हुए भी स्वादिष्ट नही लगता था। किंतु धीरे-धीरे ऐसा अभ्यास हो गया कि इसीमें अधिक-से-अधिक स्वाद मिलने लगा। भोजनके साथ उसकी विधि और वहांका वातावरण वड़ा सुहावना और घरेलू रहता था। प्रायः सभी लोग एक साथ वैठकर खाते थे और इसमें वहांके चिकित्सक तथा उनके सभी सहकारी संमिलित रहते थे। सवका भोजन उनके रोगके अनुसार भिन्न प्रकारका हुआ करता था। मेरे भोजनकी एक विशेषता यह थी कि मैं. नमक विल्कुल नहीं खाता था।

हम सबकी भोजन-क्रिया "सह नौ भुनक्तु" आदि वैदिक मंत्रके उच्चारण और सार्थकताके साथ आरंभ होती थी। भोजन समाप्त कर लेनेके बाद मैं अपने कमरेमें चला जाता था और वहीं कुछ आराम करता था, कुछ पढ़ने-लिखनेका क्रम भी चलाता था। चिकित्सक महोदय मुझे कुछ ऐसा लिखने-पढ़नेका काम दे देते थे जिससे कि मैं रोगको भूलकर अपने काममे व्यस्त रह सकूं और साथ ही रोगोके वास्तविक स्वरूपको ठीक-ठीक समझ भी सकू। इसी समय मैं प्राकृतिक चिकित्साके संबंधमें लिखे कुछ लेख एव कुछ पुस्तके पढ़ता था।

संध्याके समय पुनः नियमित रूपसे ठीक समयसे निपटना और उसके बाद १५-२० मिनटतक कटिस्नान करना और फिर मैदानमें टहलने जाना ही मेरा नित्यका कार्यक्रम था। टहलकर आनेके बाद संध्याका भोजन और उसके बाद अपने कमरेके सामने छतपर खुली हवामे बैठकर कुछ पढना या परस्पर कुछ आलोचनाएं करना बड़ा ही सुखद प्रतीत होता था। सोनेके कुछ समय पूर्व ही सभी लोग एकत्र बैठकर कुछ प्रार्थना भी करते थे। यह प्रार्थना "सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्"में अंत होकर हृदय और मस्तिष्कपर एक ऐसा गहरा प्रभाव छोड़ जाती थी जिससे कि विश्वबंधुत्व, मानवसमानता आदि ऊंचे आदर्शोंके साथ-ही-साथ सुख, शांति और आनंदकी वास्तविक सत्यताके प्रति सबका मन हठात् आकर्षित हो जाता था। वास्तवमे यह प्रार्थना स्वतः इतनी पवित्र होती थी कि सत् चित् आनंदका एक शाब्दिक स्वरूप खडा कर देती थी और जीवनकी उपयोगिताको ठीक तरहसे समझा देनेमे बड़ी सहायक होती थी।

एक बार बीचमें मेरे दमेका दौरा हठात् बड़ा तीव्र हो उठा, परंतु यह तीव्रता इस बार पहलेकी तरह दुःखदायी न होकर सुखदायी प्रमाणित हुई; क्योंकि इस बार भीतरी विकार कफके रूपमें बड़ी तेजीसे बाहर निकल रहे थे और इससे शरीर-को बड़ी राहत मिलती थी। इसी समय दो दिनके लिए उपवास भी करना पड़ा था और बीच-बीचमें कभी-कभी एनिमाका भी प्रयोग करना पड़ा था। इस बार मैंने वाष्प-स्नानके महत्त्व-को ठीक-ठीक समझ लिया; क्योंकि दमेकी सारी तीव्रताको अनुकूल बना देनेमें यह प्रक्रिया बड़ी सहायक सिद्ध हुई थी।

मैं रोगसे मुक्ति पाकर अब क्रमशः अधिक सबल हो रहा था किंतु कुछ परिस्थितियोंके कारण मुझे घर चला आना पड़ा। यहां आकर मैं उसी प्रक्रियाके अनुसार चलता रहा और आज भी उसका अधिकांश भाग मेरे जीवनका अंग बन गया है।

मेरा अब यह दृढ़ विश्वास हो गया है कि यदि मनुष्य यह समझ ले कि रोगोंको पैदा करनेकी जिम्मेदारी तो उसीपर है पर उनको दूर करनेका सबसे उत्तम तरीका यह है कि वह अपने गलत रहन-सहनके तरीकेको छोड़कर प्रकृतिके जिम्मे यह छोड़ दे कि वह उसे नीरोग और सबल बनावे।

—श्रीचंद्रभूषण उपाध्याय एम० ए०, शास्त्री

(२)

'मां ! मुझे या तो जहर दे दो या फिर स्वस्थ करनेका उपाय करो। अब यह कष्ट ज्यादा सहन नहीं होता।' किसी तरह हांफते हुए सुधाने ये वचन मुझसे कहे। सोचिए इन शब्दोंमें कितनी वेदना थी एवं कितनी निराशा एवं उनका प्रभाव एक मांके बेकस दिलपर कैसा पड़ सकता है। सुधा

मेरी लड़की है, उस समय वह मैट्रिकमे पढ़ती थी। उम्र १५ वर्ष, पर देखनेमे १२ वर्षकी लगती थी। वह इतनी कमजोर क्यों थी ?

छ. मासकी अवस्थामे ही उसको कुकुर खांसी हो गई, जो लगभग दो सालतक रही। इसी वीचमे उसका लीवर (यकृत) वढ गया। इन रोगोमे होमियोपैथीसे उसे कुछ लाभ होता, पर रोग फिर वढ जाता। इस तरह यह उपचार-क्रम लगभग ढाई वर्षतक चलता रहा। पर जव होमियोपैथीसे निराश हो गई तो उसे एलोपैथीकी शरणमे ले जाना पडा। तीन मासकी चिकित्सासे जव कोई लाभ न हुआ तो वैद्यक, फिर यूनानी चिकित्सा की गई। यह चिकित्सा चल ही रही थी कि एक दिन वर्षाके समय वच्चीको निमोनिया हो गया। हर संभव उपचार किया गया। इससे एक वार मृत्युके मुहसे तो लड़की निकल आई लेकिन ओपधियोके अत्यधिक प्रयोगसे अथवा उसका जो भी कारण रहा हो लड़कीका दम फूलना आरंभ हो गया। अव एक वार फिर होमियोपैथीकी शरणमें जाना पडा। उससे लाभ हुआ, लेकिन उस समयसे वर्षा व जाड़ोमे श्वासका दौरा वच्चीको नियमित रूपसे आने लगा। इसके लिए डाक्टरके घर गए, कभी वैद्यजीके औपधालयसे दवा ली, कभी हकीम साहवकी माजूम खिलाई और कुछ न वना तो मीठी-मीठी गोलियोसे लड़कीका मन वहलाया।

जितने प्रकारके इलाज उतने ही तरहके भोजन। किसीने कहा दूध मत दो, किसीने कहा केवल दूध दो, किसीने रोटी और मूंगकी दाल खिलाई तो किसीने दही-लौकी आदि सागोको ठंडा वताकर डराया। किसी तरह भी यह नही मालूम हो सका कि सचमुच प्रकृतिने कौन-सा भोजन लड़कीके लिए वनाया

है जिसको खाकर वह बराबर स्वस्थ रह सकती है। जब किसी भी दवासे कोई लाभ न हुआ तो अंतमे विवश होकर १० वर्षकी अवस्थामें उसे डाक्टरोंके अंतिम अस्त्र 'स्वामिन-इंजेक्शन'का प्रयोग कराया। लगभग एक दर्जन इंजेक्शन लगे। फलतः उसे १४ वर्षकी अवस्थातक सांसका दौरा न
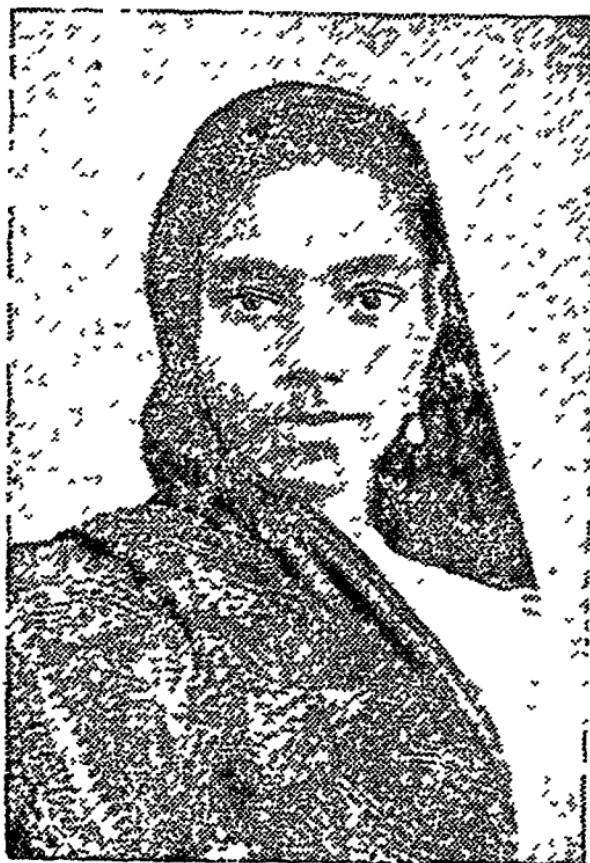
सुधा : चिकित्साके पहले

हुआ, पर स्वास्थ्य कभी नहीं सुधरा। वह हमेशा कमजोर बनी रही। दौरेका डर भी बना रहता। यह डर व्यर्थ नहीं था। चोर शरीरमें था ही, अवसर पाकर उसने फिर सेंध लगाई और फिर दौरा होने लगा।

कुल दरवाजे खटखटा चुकी थी, पर फिर वही क्रम चलाना पड़ा। एलोपैथी, होमियोपैथी सभी की। किसीसे कुछ थोड़ा-सा आराम मिलता था पर फिर वही उभार। अत दिनोदिन निराशा बढती गई। अव तो 'स्वामिन'के इजेक्गनोका भी
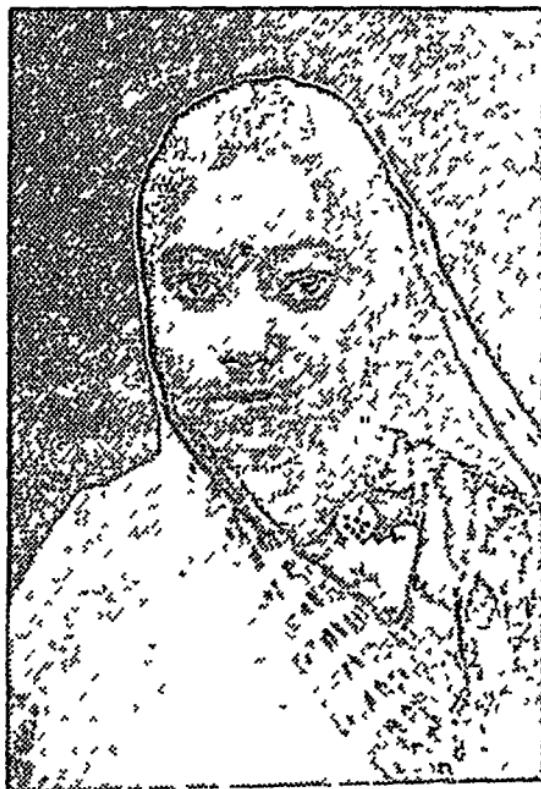
सुधा : स्वस्थ होनेके बाद

असर नही होता था। कमजोरी इतनी बढी कि दस कदम चलना दूभर हो गया। कष्ट यहातक बढ़ा कि मार्फियाका इंजेक्शनतक देना पड़ा। डाक्टर साहबने अंतमे कह दिया कि 'दमा दमके साथ जाता है।' दवा पिलाया कीजिए और इंजेक्गन दिलाती रहिए।

इसी परिस्थितिमें लडकीने उक्त शब्द कहे थे। उनका

मांके हृदयपर क्या असर पड़ा होगा इसका तो केवल माताएं ही अंदाज कर सकती हैं। सब तरफ अंधेरा-ही-अंधेरा दीखता था। इसी अंधेरेमें एक दिन प्रकाशकी एक धुंधली रेखा दीख पड़ी। वह थी हमारा आरोग्य-मंदिरसे परिचय। यहांसे परामर्श लेकर मैंने लड़कीकी चिकित्सा शुरू की।

लड़की यों ही कुछ खा नहीं पाती थी अतः आरंभमें गरम पानीके सिवा कुछ भी उसको नहीं दिया गया। हां, एनिमासे पेट रोज साफ जरूर किया जाता और यह क्रम बराबर तीन सप्ताह चला। इससे काफी मल निकला।

तीन दिनके ही जलाहारसे दमेका दौरा जो इधर हफ्तोंसे जा नही रहा था, कम हुआ और धीरे-धीरे एक सप्ताहमें चला गया। बीचमें जब दौरा तेज होता तो लड़कीके पैर दस मिनट-तक गरम पानीमें रखे जाते जिससे तुरंत लाभ होता। अकसर रातमें दमेका जोर बढ़ता तो थोड़ा-सा शहद और नीबूका रस मिलाकर दिया जाता इससे भी लाभ होता।

एक सप्ताहके जलाहारके बाद लड़कीको तरकारियोंका रस और फिर धीरे-धीरे तरकारियां खानेको दी गईं। फिर एक सप्ताह बाद शामको तरकारीके अलावा मठा भी दिया जाने लगा। और फिर सप्ताहभर बाद दोपहरको रोटी-सब्जी मिली। सब्जीमें नमकका प्रयोग नहीं होता था।

चिकित्सामें भोजनके अलावा नित्य सवेरे धूपमें खुले बदन पंद्रह मिनट रहती।

उपवासमें लड़की दुबली होती गई थी पर वह कमजोर नही हुई थी। उसका स्कूल जाना उपवासके चौथे दिनसे ही शुरू हो गया था। वह प्रसन्न भी रहने लगी थी। रोटी मिलने-पर तीन महीनेमें ही उसका स्वास्थ्य बढ़िया हो गया। उसकी

वर्षोंसे बनी रहनेवाली दुर्बलता चली गई और वह अपने जीवनमें प्रसन्नताका अनुभव करने लगी।

एनिमा शुरू करनेपर लोग मुझे डराते थे कि लड़कीको इसकी आदत पड़ जायगी पर ज्यो ही लड़कीने रोटी खाना शुरू किया उसका पेट अपने आप खुलकर साफ होने लगा।

चिकित्साके दौरानमें लड़कीको ज्वर आया, फोड़े हुए जो अपने आप अच्छे हो गए। कोई अन्य चिकित्सा नही करनी पड़ी। कहना न होगा, इन नए उपद्रवोंने सुधाका दमा भगानेमें मदद पहुंचाई।

सुधा तो अच्छी हुई ही पर इसके साथ-ही-साथ उसकी चिकित्सामें हुए अनुभवने मेरे कुटुंबभरको प्राकृतिक चिकित्साका प्रेमी बना दिया है और जरूरत पड़नेपर हमलोग अपनी चिकित्सा स्वयं कर लेते हैं।

प्राकृतिक चिकित्सा प्रकृति स्वयं सिखा देती है। इसके लिए न तो किसी स्कूलकी आवश्यकता है न किसी कालेजकी डिग्रीकी ही। प्रकृतिमें अटल विश्वास, सुदृढ इच्छा-शक्ति, नियमोंके पालनकी क्षमता, चटोरी जीभपर अंकुश और इन सबसे बढकर ईश्वरपर भरोसा—ये ही प्राकृतिक चिकित्साके आधार हैं।

—श्रीमती रामदुलारी देवी

(३)

मैं गत पंद्रह वर्षोंसे दमेसे भीषण रूपसे पीड़ित था। दवा करते-करते थककर इस रोगको असाध्य समझ बैठा था। हां, जब-जब इस रोगका विशेष प्रकोप होता था, मैं इसे शांत करनेके निमित्त इंजेक्शन ले लिया करता। उससे रोग थोड़े समयके

लिए शांत हो जाता। इसी वीच मुझे गोरखपुरके आरोग्य-मंदिरका पता चला और यह ज्ञात हुआ कि वहांसे दमेके अनेक रोगी अच्छे होकर गए है। मै वहां गया और चिकित्सकसे अपनी सारी दास्तान कही। चिकित्सक महोदयने मुझे इस रोगके निवारणके लिए प्राकृतिक जीवन वितानेका परामर्श दिया और कृपा करके मेरे लिए एक छोटा-सा कार्यक्रम वना दिया। मै उसके अनुसार चलने लगा, पर सशंक हृदयसे—सशंक इसलिए कि मै वहुतसे चिकित्साक्रम देख चुका था। पर कुछ ही दिनके अनुभवने मेरी शंका दूर कर दी। मेरी दिनचर्या यह है—

१—मै संध्या-समय आधी छटांक किशमिश एक पाव पानीमे भिगो देता हूं और सवेरे उठते ही वह पानी पीकर शौच आदिके लिए जाता हूं। किशमिश नाश्तेमे लेता हूं।

२—फिर टहलने निकल जाता हूं। अव रोज सवेरे छः मील टहल लेता हूं। इसमें मुझे सवासे डेढ़ घंटेतक लगते हैं।

३—टहलनेके वाद आकर गायके दूधका डेढ पाव मठा लेता हूं और आधी छटांक रातकी भीगी किशमिश।

४—दोपहरको १२ वजे और शामको ६ वजे चोकरसमेत गेहूंके आटेकी रोटी और हरी तरकारियां—करीव आध सेर खाता हूं। उनमें कोई मसाला नही होता, नमक भी नही होता।

रोगावस्थामें मैं इतना कमजोर था कि थोड़ी दूर पैदल चलना मुश्किल था। मैने धीरे-धीरे पैदल चलनेकी आदत डालना आरंभ किया। इससे मुझमें शक्ति आने लगी। और रोग भी धीरे-धीरे शांत होने लगा। रोग शांत होनेकी अवस्थामें मेरी रुचि टहलनेमें और अधिक होने लगी और मैने टहलनेकी

दूरी बढाना आरंभ कर दिया। अब तो इतना टहले बगैर मुझे चैन नही पड़ती। टहलना तो मेरे जीवनके साथ लग गया है। इसमें मुझे विशेष आनंद मिलता है। इसी प्रकार प्राकृतिक जीवनका मेरे ऊपर ऐसा प्रभाव पड़ा कि मेरा शरीर पूर्ण स्वच्छ हो गया। कब्जकी शिकायत मुझे बराबर रहती थी। वह बिल्कुल दूर हो गई। अब मैं सदैव प्रातः एवं सायंकाल शौचके लिए जाया करता हूं और शौच मुझे खूब खुलकर होता है। मैं तो यह कहूंगा कि मेरा भीषण दमा कब्ज-निवारणके ही कारण इतना शीघ्र गया। प्राकृतिक भोजन मेरे जीवनका प्रधान अंग हो गया है। अब मुझे प्राकृतिक भोजनके अतिरिक्त किसी भी अप्राकृतिक भोजनकी आवश्यकता नही होती। उसकी याद भी नही आती।

उक्त कार्यक्रमके अतिरिक्त मैंने रोग-निवारणके लिए कुछ भी नही किया, बस इतना ही करनेपर तीन मासके अंदर ही मेरा रोग पूरी तरह दूर हो गया।

रोगकी अवस्थामें मेरा वजन ९४ पौंड था, किंतु अब १०० पौंड हो गया है। अब मै पहलेसे अपनेको बहुत अधिक सशक्त पाता हूं और अपने सब काम बड़ी सरलतासे करता हूं। मुझे किसी तरहकी भी थकावट नही मालूम होती। मुझसे जब कोई किसी भी रोगके संबधमे पूछता है तो उसे मैं यही कहता हूं कि आप प्राकृतिक जीवनपर आ जाइए, रोग बड़ी जल्दी भाग जायगा।

—श्रीकामता सिंह

: ६ :

संग्रहणी

(१)

पांच-सात साल पहलेकी बात है मैंने रेलवे बुक-स्टालसे 'विश्ववाणी'की एक प्रति खरीदी उसमें पं० सुंदरलालजीका एक लेख था 'सेवाग्राममें भोजनसे इलाज'। इसमे डा० सतीश-चंद्रदास*के भोजनसंबंधी सिद्धांतोंकी संक्षिप्त व्याख्या थी। सिर्फ इस लेखने स्वास्थ्य और चिकित्साके संबंधमें मेरे सारे पुराने संस्कारोंकी भीत ढाह दी और प्राकृतिक चिकित्साकी ओर मेरी दृष्टि फेर दी। अब मेरे खान-पान, रहन-सहन, रोग-चिकित्सा-संबंधी विचारोंके साथ इसी लेखकी धारणाएं चलने लगी और दवापरसे मेरी आस्था उठ ही गई। पास-पड़ोसमे अनुकूल वायुमंडल न था, न संगत, फिर भी मैं अकेला अनेक कल्पनाएं, अनेक संकल्प करते हुए, एक अनूठी श्रद्धाके साथ प्राकृतिक जीवनके नियमोंको यथासाध्य निवाहनेका प्रयत्न करने लगा। दो-दो महीने बुखार आया पर मैंने कुनैन नहीं खाया। रोटी-भातके साथ दाल खाना छोड़ दिया, बाजार या घरकी तली-भुनी चीजे, मिठाई-खटाई खानी छोड़ दी, रोज चार-छ. मील टहलने लगा, नशीली चीजें तथा मांसाहार छोड़ दिया।

---

*'आदर्श आहार' पुस्तकमें डा० दासके भोजनसंबंधी सारे विचार आ गए हैं। यह पुस्तक आरोग्य-मंदिर, गोरखपुरसे प्रकाशित हुई है। दाम १) है।

सुयोगसे अपने लड़केकी बीमारीके सिलसिलेमे मैं गोरखपुरके आरोग्य-मंदिरमे पहुंच गया, जिस चिकित्सालयको देखने, जानने और वहासे कुछ सीखने-समझनेके लिए मैं बहुत दिनोसे उत्सुक था।

चि० रविदेव गांवमे स्कूलके अभावके कारण मेरे घरसे छः मील दूर मेरे एक विद्वान् मित्रके पास रहता और उनसे पढ़ता था। वही उसे रक्तके आंव शुरू हुए। लगभग एक महीने वहा साधारण दवा करता रहा। किंतु जब आंवमें कोई राहत न हुई तो विशेष चिकित्साके लिए घर बुला लिया गया। मैं स्वयं अपने ऊपर इतना विश्वास नही कर सकता था कि इसकी चिकित्सा अपने जिम्मे लेता। अतः स्थानीय अस्पतालके डाक्टर-द्वारा इसकी चिकित्सा शुरू हुई। उसी बीचमे कुछ राजनीतिक कारणोसे मुझे घर छोड़ना पड़ा। चिकित्सा कुछ-कुछ चलती रही, लेकिन बीच-बीचमे सुना करता था कि 'लड़केका आंव अच्छा नही हो रहा है'।

घरबार छूटनेकी चिंताके साथ एक चिंता यह और भी पीछे लगी रहती—लड़केको यह कैसी बीमारी लगी? अच्छी क्यों नही हो रही है? कैसे अच्छी होगी? यही हाल रहा तो बच्चेकी जिंदगीका क्या होगा? इत्यादि। पांच-छ महीने बीतनेपर लड़केको मैंने अपने पास काशी बुलवा लिया। और वहां मित्रोंकी रायसे एक बड़े डाक्टरकी दवा देनी शुरू की। किंतु फिर भी डाक्टरी दवासे मुझे बिल्कुल संतोष नही हो रहा था। मेरी अंतरात्मा छटपटा रही थी, मन-ही-मन मैं कुढ़ रहा था, कष्ट पा रहा था। मेरे लड़केके लिए जो चाहिए वह कोई दूसरी चीज है, यह नही। प्राकृतिक चिकित्साका संस्कार और उसके प्रति विश्वास मेरे रक्त-मांसमे भिदा था।

वही मेरे मस्तिष्कमें घूम रही थी।

इसी समय मेरे एक हितैषी सज्जन श्रीकाशीराज शर्माका पता चला जो वही पढ़ रहे थे और इधर वह प्राकृतिक जीवनके
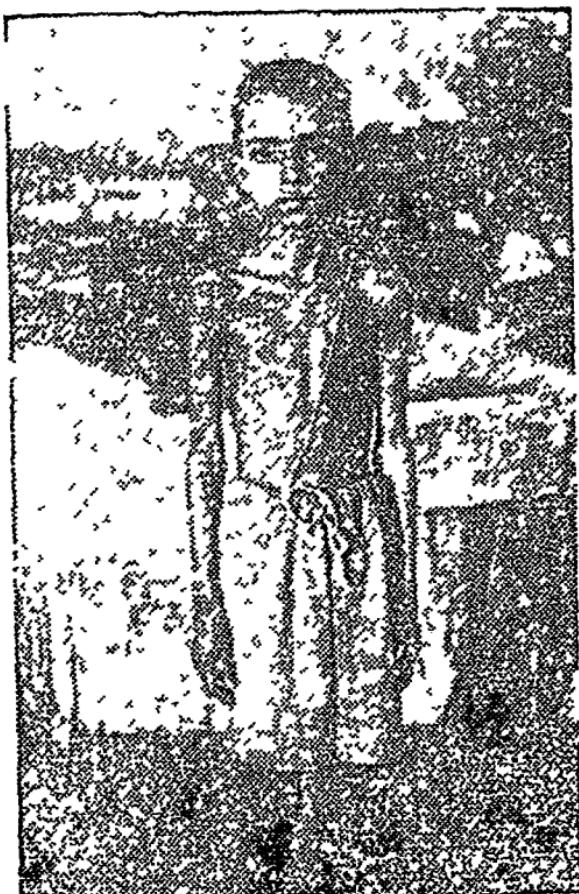
रविदेव : चिकित्साके पहले

समर्थक हो गए थे। डूवतेको तिनकेका सहारा मिला। मैं उनसे मिला। उन्होंने मेरे साथ वड़ी सहानुभूति दिखलाई और लड़केको अपने पास रख लिया। मिट्टीकी पट्टी, कटि-स्नान, रसाहारद्वारा उसकी चिकित्सा शुरू की। करीव पंद्रह दिन वीते वीमारकी हालतमें कोई सुधार न दिखाई दिया।

इससे आगे वह अपनेपर विश्वास न कर सके और उन्होंने एक दूसरे प्राकृतिक चिकित्सक डाक्टरको दिखानेकी राय दी— जो स्विट्जरलैंडसे भारत-भ्रमणके लिए आये हुए थे और उस समय काशीमें थे। उन्हे दिखलाया गया। उन्होने चिकित्सा

रविदेव : चिकित्साके दो वर्ष बाद

शुरू की। वे कटिस्नान कराते थे और बच्चेके सारे अंगोको अनेको प्रकारसे मोड़ते, मरोडते और चटखाते थे—व्यायाम करानेके रूपमे। पथ्यमे केला, संतरा, टमाटर इत्यादि देते

रहे। इस प्रकार करीव वारह दिन इनकी चिकित्साके भी वीते किंतु लाभ कुछ भी न हो रहा था।

अब मैं वहुत घबराने लगा। काशीराजजी पूरे जिम्मेदार व्यक्ति न थे। स्विस डाक्टर संयोगवश मिले हुए एक पर्यटक थे। एक महीना लगभग सिर्फ रसाहार, फलाहारमें बीत चुका। वीमारी यथावत् वनी हुई थी, अंतमें मैं सव कुछ छोड़-छाड़कर लड़केको लेकर गोरखपुरके आरोग्य-मंदिरमें पहुंचा। वहांके चिकित्सकसे मिलकर सारी हालत वतलाई। उन्होंने बड़ी सहानुभूति दिखलाई और कहा, "आप जैसे चाहें मंदिरसे फायदा उठा सकते हैं।"

यहां रविदेवको फल देना वंद कर दिया गया। पथ्यमें सिर्फ मट्ठा दिया जाने लगा और कटिस्नान तथा पेड़ूके सेककी चिकित्सा होने लगी। एक महीना बीता। आंवरक्त क्रमशः कम होते गए, किंतु बंद न हुए। ऐसी स्थितिमें यहां भी मैं शंका और द्विविधाओंमें पड़नेसे न वच सका। सोचता—आखिर महीने दिनकी चिकित्साके वाद भी आंव बिल्कुल बंद क्यों नहीं होती? क्या लक्ष्यस्थानपर पहुंचनेपर भी भाग्यमें कुछ और ही वदा है? किंवा यहां या इस पथमें भी कोई छल या प्रचार तो नहीं है? हृदयमें वड़ी वेदना होती। चिकित्सक-से पूछनेपर शांतिपूर्वक उत्तर देते—'घवरानेकी कोई बात नहीं, इसी क्रमसे वच्चा अच्छा हो जायगा'। किसी तरह दिल थामकर रहता।

दूसरी ओर लड़का था कि विना कोई आग्रह, विना कोई शिकायत चुपचाप चिकित्सा निवाहे चला जाता था। उत्साह-पूर्वक अपना मट्ठा मंगवाता, उसकी सार-संभाल करता, वार-वार उत्साहके साथ पीता, उसकी तारीफ करता, मंदिरकी

व्यवस्थाका निरीक्षण करता, कितावें पढ़ता और शांत, प्रसन्न दिन विताए जाता । चिकित्सक महोदय उसकी प्रशंसा करते—'वच्चा होते हुए यह वड़ी शांतिसे चिकित्सा चला रहा है। मैं इससे वहुत प्रसन्न हूं।' इस तरह एक महीना चिकित्सामे और लगा। किंतु इधरके लाभके क्रमसे मैं संतुष्ट था। क्योंकि अव पथ्यमें क्रमशः वेल, केला और नरम भात दिया जाने लगा था। अव मलके साथ रक्त केवल छीटे-छीटेके रूपमें निकलता था। अव रोगके अच्छे हो जानेमे कोई संदेह नही किया जा सकता था।

इस प्रकार अनेक शकाओ और द्विविधाओपर मेरी श्रद्धाकी विजय हुई। प्राकृतिक चिकित्साके द्वारा मैंने अपनी श्रद्धा और विश्वासके अनुरूप फल पाया। रविदेव अच्छा हुआ और घर गया।

मुझे यहां यह कह देना चाहिए कि मै प्राकृतिक जीवनका नियमित-साधक जितना कुछ पहले था अव नही रह गया हूं। जीवनकी दिशा वदलनेके साथ-साथ मेरे रहन-सहन, खान-पानकी स्थिति भी वहुत कुछ वदल गई है। किंतु उसके प्रति मेरी आस्था अटूट है और उसके पालनके लिए यथासंभव प्रयत्नशील रहता हूं। प्राकृतिक जीवनको मानकर और उसको साधकर मैं यद्यपि अपने शरीरका कोई विशेष परिवर्तन नही कर सका हूं फिर भी उसकी आस्थाके कारण मेरी वहुत-सी वुरी आदतें छूट गई हैं और उसीकी ओर दृष्टिकोण रहनेके कारण स्वास्थ्यके संवंधमें उचित-अनुचित जो आचरण करता हूं उसे ईमानदारीके साथ अनुभव करनेका प्रयत्न करता हू। अपने प्रयत्नोंकी शिथिलता एवं असावधानियोको देख सकता हूं। सोचता हूं ईश्वर ऐसी अवस्था या अवसर मेरे लिए उपस्थित करेगा जव मैं

दृढ़ प्रयत्नोंके साथ इस पथपर आगे वढूंगा और इसके द्वारा प्राप्त होनेवाले जीवनके अलौकिक आनंदको प्राप्त करूंगा, जिसका मैं कुछ दिनोंके साधनसे पहले अनुभव कर चुका हूं।

मेरा तो यह हाल है। उधर लड़केको भी प्राकृतिक चिकित्साने पकड़ लिया। इस वीच एक वार, रविदेव मिला तो कहने लगा—"पिताजी, लोभवश मैं जव कभी कोई वैसी चीज खा लेता हूं जो प्राकृतिक सिद्धांतोंके प्रतिकूल होती है तो वादको मुझे अच्छा नहीं लगता।" तो मैंने उसकी पीठ ठोंकते हुए कहा "चलो वेटा, अव सिद्ध हो गए।" अव उसके खान-पान, रहन-सहनके संवंधमें मुझे कोई चिंता नही होती। सोचता हूं अव जव वह स्वयं सोचने-समझने, अनुभव करनेकी शक्ति, दृष्टि और दिशा पा गया है तो फिर मुझे क्या चिंता ? अपना लाभ समझकर जो करेगा अच्छा करेगा।

—श्रीभोलानाथ

(२)

डेढ़ साल पहले तो मैं विल्कुल अच्छा था। अपना खेतीका काम मौजसे करता था। सात वीघे खेतमे हम घरके सारे प्राणी, जो गिनतीमें सात है, लगे रहते और उससे अपना खाना-कपड़ा सभी निकाल लेते। ऐसी दशामें वीमार पड़ना वहुत अखरा। चिंता होने लगी कि काम कैसे चलेगा ? पर वीमार तो हो ही गया। पहले, खानेके वाद पेट फूलने लगा, फिर दस्त आने लगे। पर भूख नही गई थी। भोजन तृप्त होकर करता। लेकिन खानेके वाद ही जवतक सारा खाना निकल

न जाता टट्टियां होती रहती, बीस-पच्चीसतक। धीरे-धीरे कमजोरी बढी, शरीर बिल्कुल शिथिल रहने लगा।

इसीके साथ एक और नई बीमारी हो गई, 'धात' गिरने लगी। पेशाबके बाद सफेद चिकना-सा कुछ गिरता। वैद्यजीसे कहा तो धातु-क्षीणता बतलाई।

लेखक

गांवके वैद्यजी सालभरसे मेरी चिकित्सा कर रहे थे। खास रोग संग्रहणी बताया था । कभी हड्डीका हल्का ज्वर भी बता देते। दवा चल रही थी इधर बदन सूखकर कांटा हुआ जा रहा था। दवासे सिवाय नुकसानके कभी लाभ न दिखाई दिया। मुहमे निनावा और रहने लगा। सारा मुः

छोटी-छोटी फुंसियोंसे भरा रहता। खाना मुश्किल हो गया। कुछ भी खाता तो लगता कांटे खा रहा हूं। जबानपर कुछ भी रखना कठिन हो गया और यह तो था ही कि यदि कुछ भी खा लेता तो तुरंत पाखाने जाना पड़ता। पेटमे हमेशा हड़-हड़ ही हुआ करती। लगता, पेट चिल्ला रहा है। शरीरके सारे अंग फरका करते। दिमाग, लगता था दिमाग है ही नही। सोचनेकी शक्ति जाती रही। चिंता घेरे रहती। भली चीज बुरी लगती। इच्छा होती न कोई मुझसे बोले न मै किसीसे बोलूं। चुपचाप मुझे पड़ा रहने दिया जाय पर चुप पड़ा रहता तो घबराहट होने लगती। अजीब हालत थी। ताकत नहीं थी कि कुछ चल-फिरकर दिल बहलाऊं।

ऐसी दशामे एक दिन घरके दरवाजेपर बैठा था कि मेरे एक स्कूली साथी मिलने आए। मेरी हालत समझकर उन्होंने कहा कि तुम कुदरती इलाज कराओ और उसके लिए मुझे गोरखपुर जानेको कहा। वे खुद इसी इलाजसे अच्छे हो चुके थे इसलिए मुझे उनकी बात माननी पड़ी। घरवाले भी जोर देने लगे।

गोरखपुर आकर मै अपनी बड़ी बहनके यहां ठहरा और आरोग्य-मंदिरमे अपना इलाज करानेकी अपनी इच्छा उनसे प्रकट की। मेरी और मेरी बहनकी बात मेरा भांजा भी खड़ा सुन रहा था। वह आरोग्य-मंदिरके रोगियोंके हाथ समाचार-पत्र बेचता है, अतः वह वहांसे परिचित था। वह वहां दूर-दूरसे आए रोगियोंको स्वस्थ हो-होकर जाते रोज देखता था, अतः उसने भी मुझे वहां जानेकी राय दी। राय क्या दी, अपनी अखबार बांटनेवाली सायकिलपर मुझे बैठाया और वहां ले गया। वहांके चिकित्सकने मेरे स्वास्थ्यकी जांच की,

मेरे रोगका इतिहास सुना और कहा कि चिकित्सा करो, जरूर अच्छे हो जाओगे। चिकित्सामे मुझे उन्होने वताया कि सवेरे और शामको पेडूपर आध-आध घंटे मिट्टीकी पट्टी रखो और एक पट्टी उन्होने खुद मेरे पेडपर रखकर वता दिया कि मिट्टी-की पट्टी इसे कहते है और ऐसे रखी जाती है और भोजनमे उन्होने कहा कि दिनभर केवल मट्ठा पीओ। सिर्फ मट्ठा पीकर रहनेकी वातपर मैं चौका। मुझे लगा कि केवल मट्ठा पीकर जी सकना असंभव है। चिकित्सकने मेरे मनके इस भावको ताड़ा और थोड़ेसे शव्दोमें इस तरह प्रेमसे समझाया कि मेरी समझमे यह आ गया कि मट्ठा मेरे लिए भोजन है, मट्ठा मेरे लिए दवा है, मट्ठा मेरे लिए अमृत है। और मैं वहनके यहा जाकर यह सव करने लगा। पहले दिन कोई आव सेर मट्ठा पी सका पर धीरे-धीरे वह भूख, जो विल्कुल वंद हो गई थी, खुलने लगी और मट्ठेकी मात्रा वढी। चिकित्सा चलते तीन सप्ताह होते-न-होते मै चार सेर दूधका मट्ठा पीने लगा। मट्ठा मैं पीता और मक्खन मेरी वहनके घरवाले खाते। मै समझता हूं जितनी कीमतका दूध होता करीव-करीव उतनी कीमतका मक्खन तो निकल ही जाता। अतः मेरी वहनको मेरा खर्च जरा भी न अखरा। मेरे खानेका सारा खर्च वे ही वर्दाश्त करती थी।

मट्ठा अधिक वढनेपर मुझे शौच मुश्किलसे होता था। इसे दूर करनेके लिए मुझे मट्ठेके साथ आधा सेर तुरईकी विना नमककी तरकारी वताई गई। इससे भी कब्ज पूरी तरह नहीं गया तो पालकका साग वताया गया। तीन पाव साग मै खाने लगा। साग वटलीमे उवालता। सागसे निकला पानी पी लेता और साग मठेमे मिलाकर खा लेता।

मुझे अब मेरी तंदुरुस्ती ठीक लगने लगी। शौच दो बार ठीक होने लगा। बदनमें स्फूर्ति आ गई। चलने-फिरनेकी ताकत आ गई। ऐसी दशामें मैं अर्थलाभके लिए यानी भोजनका खर्च निकालनेके लिए खोचा लगाने लगा। बाजारसे चीनिया बादाम खरीद लाया और चौराहेपर रखकर बेचने लगा। इससे कुछ आर्थिक लाभ तो होता ही, पर सबसे बड़ा फायदा यह हुआ कि मेरी तबियत उसीमे दिनभर लगी रहती।

डेढ़ महीनेकी चिकित्साके बाद मट्ठेकी मात्रा कम की गई और चावल जोड़ा गया। पंद्रह दिनमे मैं दो बारमें चार छटांक चावल, एक सेर पालकका साग और एक सेर दूधका मट्ठा लेने लगा। इस भोजनसे मेरे शरीरपर मांस चढ़ा। मेरी सूखी त्वचापर रंग आया और गालकी हड्डियोंपर चरबी चढ़ गई।

चावल खाते तीन सप्ताह होनेपर रोटी बताई गई। और नमक भी बताया गया। मेरा भोजन इस प्रकार रखा गया।

नाश्ता—दो तोला बेलकी पत्ती आधसेर पानीके साथ पीसकर पीना।

दोपहर और शामको एक-एक पाव आटेकी रोटी, एक पाव दही और तरकारी।

बेलकी पत्ती मुझे इसलिए दी गई कि पेशाबके साथ जलनकी मेरी पुरानी बीमारी इस वक्त उभर आई थी। वह इस प्रयोगसे चली गई।

मेरी चिकित्सा कुल ढाई महीने चली। मेरा वजन इस अवधिमें कुल तेरह सेर बढ़ा और मैं हर दृष्टिसे ठीक हो गया। चिकित्सामें मुझे शक्ति आनेपर टहलना भी बताया गया था और ठंडे पानीसे नहाना तो आरंभसे ही शुरु करा दिया गया था।

मेरी चिकित्सामे मेरी वहन वहुत मददगार रही। यह नहीं कि उन्होंने मेरे भोजन-पानीका इंतजाम किया पर इसलिए कि मुझे चिकित्सकके वताए रास्तेपर चलनेके लिए वरावर प्रोत्साहित करती रही। चिकित्सककी पिताकी-सी सहानुभूतिके साथ-साथ यह उन्हींका प्यार और प्रोत्साहन था कि मैं वाजारके वीचमे रहते हुए और चीनिया वादामका खोंचा लगाते हुए भी ठीक परहेज कर सका, और मेरा मुर्दा शरीर प्राणवान हो सका। अव मै अपना हर काम पहलेकी तरह मौजसे कर पाता हूं

सारे चिकित्साकालमे मै एक दिन भी चिकित्सालयमें रहा नही, रोज चिकित्सकसे मिला भी नही। केवल सप्ताहमें एक वार मिलता। वे मुझे उस दिन कोई दस-पंद्रह मिनटका समय देते पर इतनेहीमे अपनी वातोसे वे मुझमे वह जीवन और आशा भर देते कि मेरा भीत मन खिल उठता। मरनेकी आशंका चली जाती और आगेके सुदर जीवनका सुखमय दृश्य सामने आ खड़ा होता। मै मानता हूं कि चिकित्सकके उन शव्दोने मेरे लिए किसी भी दवा अथवा किसी भी चिकित्सा-विधिसे अधिक काम किया। कुदरती इलाजने तो मुझे मोल ही ले लिया। मै अपना काम करता हू और रामनामकी तरह उसके गुण गाता हूं।

—आ।रामलाल

(३)

मुझे पांच सालसे अपचकी वीमारी थी। खाया हुआ हजम न होता, पेट भारी रहता, जिसकी वजहसे कुछ काम न कर पाता। मै खाता-पीता रहता और खाटपर पडा रहता।

बातोंमें भी तबियत न लगती, न किसी खेल-तमाशेमें। धीरे-धीरे अपचके साथ संग्रहणी हुई। पेट चलने लगा—दिनमें कई बार टट्टी जाना पड़ता। दस-बारह टट्टी मामूली बात
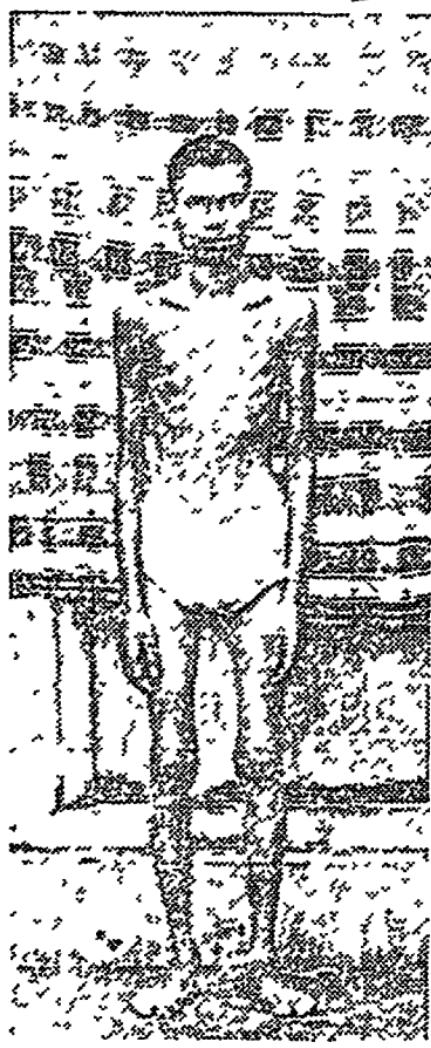
लेखक : चिकित्साके आरंभमें

थी। किसी दिन तो संख्या बीस-पचीसतक पहुंच जाती। बदन गलने लगा, ठठरी हो गया। रोग मिटानेको एकसे दूसरेके यहां दौड़ने लगा। रोग जितना ही बढ़ा मैंने जल्द-जल्द डाक्टर

बदलने शुरू किए। गोरखपुरका कोई डाक्टर-वैद्य न बचा जिससे मैंने दस-पंद्रह दिनो दवा न कराई हो। डाक्टरोने दवा-की बड़ी-बड़ी शीशियां पिलाई, सूइयां चुभोई, वैद्योने काढ़ा-गोली-चूरन आजमाया। पर सब फजूल।
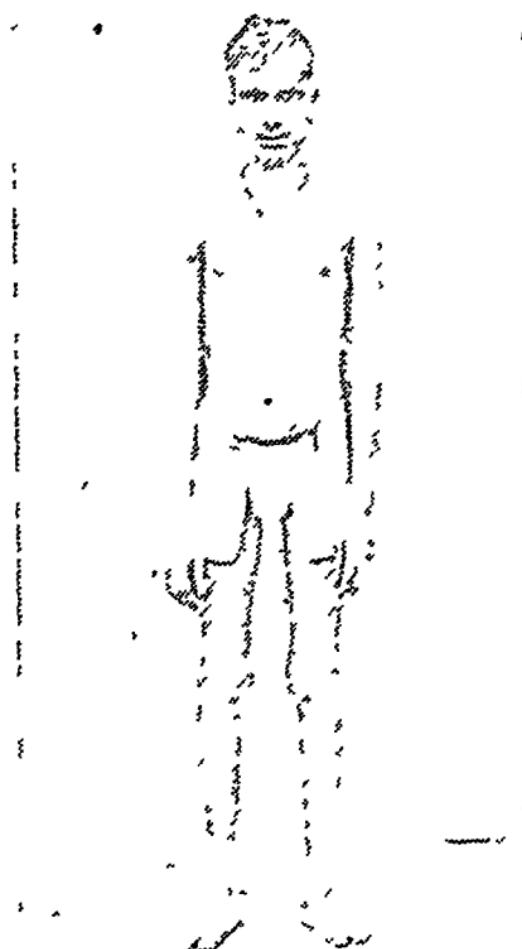
लेखक : स्वस्थ होनेपर

बाहरी डाक्टर-वैद्योंसे निराश होकर एक मित्रके कहनेसे मैं सहजनवां स्टेशनके पास डुगडुइया गांवके वैद्यजीके पास

गया जो संग्रहणीके इलाजमें मशहूर है। उन्होंने सब बातें सुनी, नाड़ी देखी, पेट टटोला और बात-ग्रहणी बताई। चिकित्सा शुरू हुई। पांच महीने चली। वैद्यजीने, जो कुछ करना था किया और बहुत प्रेमसे किया। यहांतक कि मुझे अपने घरका ही आदमी मानने लगे थे। एक दिन मैंने उनसे पूछा, वैद्यजी! आप अक्सर उपवास करते रहते है यह क्यों? उन्होंने कहा, भाई, जब मुझे भूख नही रहती है और पेटमें कोई खराबी नजर आती है तो मेरा एक-दो दिनका उपवास कर लेनेका नियम है। मुझे यह सुनकर आश्चर्य हुआ कि जिन वैद्यजीके पास घड़ों आसव-आरिष्ट और सैकड़ों दवा वह उपवास करते है। मैंने उनसे डरते-डरते पूछा, क्या उपवाससे मुझे भी फायदा हो सकता है। बोले, हां तुम्हें लंबा उपवास करना पड़ेगा। उपवास करा तो मै सकता हूं पर लंबा उपवास तोड़नेकी विधि मै नही जानता, उसके लिये तुम्हें किसी प्राकृतिक चिकित्सककी शरण लेनी होगी। गोरखपुर चले जाओ ठीक होगा। मैंने गोरखपुरके आरोग्य-मंदिरका नाम सुन रखा था। हमारे गांवके बाबू हरिलाल अपने पुराने मलेरियेकी चिकित्सा वहांसे कराकर स्वास्थ्य प्राप्त कर चुके थे। मै उन्हें साथ ले गया और वहां जाकर भर्ती हो गया।

पर वहां मुझे उपवास नहीं, मठा-कल्प कराया गया। दस दिन मुझे दिनमें आठ बार एक-एक पाव मठा दिया गया और यह क्रम एक महीनेतक चला। फिर मठेके साथ किशमिश भी आधी-आधी छटांक सुबह-शाम दोपहरको दी जाती और भूख बढ़नेपर इसकी मात्रा तीन छटांक कर दी गई। दो महीना बीतनेपर सुबह-शाम मठा और किशमिश मिलती और दोपहर-को दलिया और तरकारी। चिकित्सामें मेरे पेटपर मिट्टीकी

पट्टी रखी जाती, शरीरको गीले कपडेसे रोज आव घंटेतक रगड़ा जाता और कब्ज रहनेपर एनिमा दिया जाता। जव कभी वायु वढती तो पेटपर सेक।

चिकित्सालयमे दाखिलेके समय मुझे दो आदमी सहारा देकर उठाते-वैठाते तथा शौच कराते थे। करवट लेनेमे भी कठिनाई थी। वह दूसरेको ही वदलवानी पड़ती। पर चिकित्सा-के प्रभावसे मेरे शरीरमे वल वढा और एक महीने वाद मै थोड़ा टहलने लगा। तीन महीने वाद मै वहासे निकला। उस वक्त मीलभर सवेरे और इतना ही शामको टहलता था। घर आकर मैं वहां वताए नियमोपर चलता रहा।

तंदुरुस्ती सुधरती गई। आज इलाज कराए मुझे तीन वर्ष हो गए है। इस वीच में कभी वीमार नही पडा, आगे पड़ूंगा भी नही, ऐसी उम्मीद रखता हू। क्योकि मै जान गया हूं कि वीमार पड़ना-न-पड़ना आदमीके अपने हाथमे है। वीमारी कुदरतके कानून तोड़नेकी सजा है और कुदरतके कानून तोड़ने-की मेरी जरा भी इच्छा नही है, क्योंकि अपने किएका काफी फल पा चुका हूं।

—श्रीछकौड़ीप्रसाद

: १० :

कृमि

विद्याकी उम्र पांच साल है। कई महीने हुए उसके पेटमें कुछ दर्द शुरू हुआ। फिर दो-चार दिन बाद पाखानेके साथ छोटी-छोटी कीड़ियां दिखाई दीं। उनकी ऐसी वृद्धि हुई कि रातको सोते समय बहुतसे कृमि गुदाद्वारपर रेंगते पाए गए। नन्ही-सी कोमल बालिकाको यों इस भयंकर रोगसे ग्रस्त देखकर बड़ी चिंता हुई। मैं एक अनुभवी एलोपैथ डाक्टरके पास गया। काफी सोच-विचारकर उन्होंने एक दवा दी और हफ्तेभर रोज सुबह, दोपहर, शाम सेवन करनेको कहा। किया, पर कोई लाभ दिखाई न दिया। बड़ी निराशा हुई। एक वैद्यजीसे मिला, सारी कथा कही। उन्होंने धन्वन्तरी-मुद्रा प्रदर्शित करते हुए बड़े गर्वके साथ कुछ गोलियोंके साथ यह आश्वासन दिया कि दस दिनमें इन गोलियोंसे रोग समूल नष्ट हो जायगा। धैर्यसे यह दवा भी दी गई। पर रोग घटा नहीं, कुछ बढ़ा ही।

इसके साथ पिता होनेके नाते मेरी चिंताओंका बढ़ना भी स्वाभाविक था। एक दिन रातको इसी चिंतामें निमग्न था कि मेरा ध्यान एक-ब-एक प्राकृतिक चिकित्साकी ओर गया। उसी समय मैंने निश्चय किया कि अब इस बालिकाको प्रकृतिकी ही गोदमें सौंपूंगा। सवेरा होते ही आरोग्य-मंदिर गया और वहां उसके श्रद्धेय चिकित्सकसे मिला। उनकी चिकित्सा सुनी और उनके आदेशानुसार काम करनेका निश्चय करके घर लौटा।

अब विद्याको दवा देना वंद करके मैंने उसके पेटकी सफाई, थोड़ा शारीरिक व्यायाम तथा सात्त्विक और नियमित आहारपर जोर देना आरंभ किया। पेटकी सफाईके लिए उसे प्रतिदिन प्रात.काल नीवूका रस और सेधा नमक मिश्रित आध सेर गुन-गुने पानीका एनिमा दिया गया। एनिमा देनेके आध घटा वाद मैं स्वयं उसे खुली हवामे कुछ दूर दौड़ाता और कुछ कसरते कराता। इसका परिणाम यह हुआ कि उसका पेट मुलायम और हलका होने लगा। जहांतक उसके भोजनका सवंध है— मैंने उसे दाल देना विल्कुल वंद कर दिया और यह सोचकर कि शायद दाल देखकर वह दाल खानेका हठ करे घरके सव लोगोनें दाल खाना वद कर दिया। केवल रोटी और तरकारीके खानेकी ही चिकित्सकने व्यवस्था दी थी। रोटी और तरकारीके अतिरिक्त उसे मूली, प्याज, खीरा, अमरूद, नीवू और अनन्नास भी दिया जाता था। रोटी और तरकारी केवल दो वार दी जाती थी और फिर जव भूख मालूम होती तो अमरुद और अनन्नास आदि देते थे। अमरूद तो जितनी वार जितने वह खा सकती थी दिया जाता था। यहातक कि वह रातको भी अमरूद खाकर सोती थी। इससे प्रचलित सस्कारोंके अनुसार न तो उसे कभी खासी हुई न जुकाम। मेरा ख्याल है कि लोग भ्रमसे ऐसा कहते है कि रातको अमरुद खानेसे खासी हो जाती है। मेरी समझसे खांसी और जुकामका मूल कारण है पेटकी खरावी, अपच और कब्ज।

दस दिनकी खान-पानकी व्यवस्थासे विद्या पूर्ण स्वस्थ हो गई।

पाखाना शुद्ध होने लगा। कीड़ियोका कही नाम-निशान भी नही रह गया। पेट एकदम हलका और मुलायम हो गया।

यह प्रयोग किए आज चार वर्ष हो गए वह पूर्णतः स्वस्थ है। अब उसका भोजन पूर्ववत् है। अंतर केवल इतना ही है कि मैं उसे रोज कुछ मौसमी फल खिलानेसे नहीं चूकता और ध्यान रखता हूं कि उसे रोज कुछ हरी तरकारियां जरूर मिल जाय।

—श्रीरमणरेतविहारी त्रिपाठी, एम० ए०

: ११ :

नाड़ी-विकार

उम्र मेरी चौदह सालकी है। यो तो मेरा स्वास्थ्य साधारणत. अच्छा ही था, फिर भी मेरे घरवाले, विशेषकर मेरी मां, मेरे कृशकाय होनेकी शिकायत करती थी। पर मैने कभी दुवलसे मोटे होनेकी कोई दवा नही खाई।

लेखक

मुझे घरसे वनारस पढने भेजा गया। यह सन् १९४६का साल था। मुझे रोजाना सवारीमे पढनेके लिए तीन मील जाना और तीन मील आना पडता था। मैं अकेले ही रिक्सेमें

वस पकड़ने जाता और स्कूलसे आते समय भी अकेला आता था। इस मेरी स्कूलयात्रामें मुसलमानी मुहल्ला भी पड़ता था, पर मुझे डर नहीं लगता था। मैंने हमेशा वहांके आदमियोंको अपनी ही तरह आदमी समझा। १६ अगस्त, '४६के कलकत्तेके हिंदू-मुसलिम-दंगेका प्रभाव काशी नगरीतक फैल गया। यहां भी सांप्रदायिक दंगोंने भीषणरूप ले लिया। हमारा मकान मुसलमानी वस्तीसे घिरा हुआ था। दिनभर लोग कर्फ्यूकी वजहसे चुप रहते, पर रातको हिंदू और मुसलमानोंके "हर हर महादेव" और "अल्लाहो अकवर"के नारे वायुमंडलमें गूंज उठते थे। सुरक्षाकी दृष्टिसे हम सव वच्चों और घरकी स्त्रियोंको हमारे चाचाजीने हिंदू मुहल्लेमें एक रिश्तेदारके यहां भेज दिया। और स्वयं मकान और सामानकी रक्षाके लिए वहीं रह गए।

दोपहरको एक आध घंटेके सिवा कर्फ्यू नहीं टूटता था। इन दिनों में अपने वड़े लोगोंको भी कुछ भयभीत-सा देखता था। कई वार मुझे उन लोगोंके मुंहसे सांप्रदायिक झगड़ोंमें होनेवाले स्त्रियों और वच्चोंके वधकी कहानियां सुननेको मिलीं। अव मैं तुर्की टोपी और लुंगी पहने किसी आदमीको देखनेपर अपने जीवनको अरक्षित समझता और चिंतित हो उठता।

दंगा ठंडा पड़नेपर जव मैं धीरे-धीरे सदाकी भांति स्कूल भेजा जाने लगा तव मैं मुसलमानोसे वरावर सशंकित रहता। लेकिन अपनी कमजोरीके कारण यह वात मैं वड़ोंको कह नहीं पाता था। लगता था कि इससे यह सावित न हो कि मैं पढ़नेसे भागना चाहता हूं।

धीरे-धीरे गर्मीके दिन आए। मैं इस समय सातवें दर्जेमें पढ़ता था। वार्षिक परीक्षा निकट थी, इसलिए सवका अनुरोध

था कि मैं पढ़नेमें खूब मेहनत करूं कि पास हो जाऊं। मैं अपने दर्जेमे कुछ कमजोर था, अतः एक मास्टर साहबसे घरपर पढ़ता था। वे मुझे और मेरे भाई रवीद्रको पढाया करते थे। रवीद्रकी और मेरी लिखने-पढ़नेमे प्रतियोगिता चलती थी। कभी-कभी मास्टर साहब हम दोनोको भाषण करनेकी कला सिखाया करते थे। एक दिन उन्होने मेरे भाई रवीद्रको दंगकी बुराइयोंपर बोलनेको कहा। वे खडे हुए और उन्होंने बडी निर्भीकताके साथ दंगोके दुष्परिणामोपर अपने विचार प्रकट किए। फिर मेरी बारी आई। किसी तरह उठ तो गया, पर कुछ समझमे नही आ रहा था कि क्या बोलूं। केवल दंगोकी भयंकरताका दृश्य मेरी आंखोके सामने नाचने लगा। मै आगे कुछ न सोच सका और न मेरे मुंहसे बोली निकली। मै अपनी आंखोंके सामने कुछ धुधला और पीला-पीला देखने लगा। इसके बाद मै कैसे मूर्छित हुआ और लोग कितने घबराए यह होशमें आने-पर ही मालूम हुआ। यही मेरी भयकी बीमारीका श्रीगणेश था।

लोगोने मेरे रोगका कारण गर्मी समझकर मुझे घर, जो नैपालके पहाड़ोंमे है, भेज दिया। सबका खयाल था कि वहां-की जल-वायु मेरी बीमारीको दूर कर देगी। हुआ भी कुछ ऐसा ही, कि वहा मुझे इस तरहकी कोई शिकायत नही हुई और मै स्वस्थ समझा जाने लगा। मै वहा दो महीने रहा था।

अगस्तमे पढ़नेके लिए मै फिर बनारस आया। यहां आने-पर एक दिन सड़कपर चलते समय एकाएक कुछ घबराहट-सी मालूम हुई। मै तुरंत अपनी दादीजीसे, जो मेरे साथ थीं, मुझे किसी सवारीमें घर ले चलनेको कहा—यह मेरी बीमारीका दूसरा वार था। इस बार मै बिलकुल बेहोश तो नही हुआ लेकिन एक दूसरी नई चीज शुरू हो गई। मेरे हृदयकी गति

वहुत तीव्र हो उठी जो डाक्टरोंके खयालसे एक खतरेका कारण थी। मेरे हृदयकी तीव्रता मुश्किलसे पांच-सात मिनट रहती थी। इस समय मुंह कुछ पीला-सा हो जाता और मुंहसे कुछ फेन निकलने लगता। डाक्टर वुलाया जाता पर उसके आते-न-आते मेरी हृदयकी गति ठीक हो जाती और यह मुझे भला चंगा देख जाता। कभी यह वीमारी दिनमें एक बार और कभी दो-तीन वार आक्रमण करती। अब सबको मेरी चिंता होने लगी। मैं अकेला वाहर नही जा सकता था। वैद्य-हकीमोंकी दवा शुरू हुई। डाक्टर विटामिन बी०की कमी वतलाते थे उनके परामर्शके अनुसार यह और दूसरी अनेक दवाएं खाईं लेकिन वीमारी कुछ रोज रुककर फिर आ जाया करती थी फिर भी कुछ ठीक समझा जाने लगा।

अव मै स्कूलके छात्रावासमें रहने लगा। एक दिन हिंदीके दर्जेमें मास्टर साहव सभी लड़कोंसे पुस्तक-पाठ करवा रहे थे एक लड़केके बाद मेरी पढ़नेकी बारी पड़ती थी, और वह लड़का पढ़ रहा था कि मुझे कुछ परेशानी अनुभव हुई। हृदयकी गति तेज हो गई और वेहोशी आ गई। अध्यापक महोदय सज्जन पुरुष थे। वे मुझे छात्रावासके मेरे कमरेमें ले गए, वहां जलके प्रयोगद्वारा होशमें लाए। घरवालोको जव यह घटना मालूम हुई तो उन्होंने घर वुला लिया और अब फिर मेरी चिकित्सा शुरू हुई। पर गशका रोज आना मामूली वात हो गई। अब मेरी पढाईसे ज्यादा मेरे स्वास्थ्यके विषयमें वावूजी वगैरहको चिंता होने लगी। पढ़ाई वंद कर देनेका विचार किया जाने लगा।

उन्ही दिनों मेरे मंझले चाचाजीके कालेजके एक साथी श्रीकाशिराजजी उपाध्याय हमारे घर आया-जाया करते थे उन्हें मेरी वीमारीका हाल मालूम होनेपर उन्होंने एलोपैथिक

चिकित्साद्वारा मेरी वीमारी जानेपर शंका प्रकट की और प्राकृतिक चिकित्साके अनन्य भक्त होनेके कारण उस चिकित्सा-शास्त्रका अनुसरण करनेकी सलाह दी। घरके लोग डाक्टरोंकी दवाओंसे तंग आ गए थे इसलिए प्राकृतिक चिकित्सा अपनानेकी सलाह हुई। और मेरे मंझले चाचाजी मुझे एक साथीके साथ गोरखपुरके आरोग्य-मंदिरमे ले गए।

यहां यह वता देना ठीक होगा कि मै इन दिनो रातको अकेले सोनेसे भी डरता था। किसी-न-किसीको मेरी चारपाई-पर मेरे साथ सोना पड़ता। वीच-वीचमे मेरी नीद खुल जाती और मै डरने लगता। दिनमे कही अकेला न जा पाता। कोई मेरे साथ अवश्य होता।

चिकित्सालयमे मेरी चिकित्सामे भोजन-परिवर्तन किया गया। शुद्ध सात्त्विक। सवेरे-शाम कटिनहान। इसके वाद मै किसीके साथ टहलने निकल जाता। लौटकर स्वस्थ गायोंका आध सेर दूध पीता और साथ दो-चार लाल-लाल टमाटर खाता। सवेरे नंगे वदन कुछ देर धूपमे रहता। पंद्रह दिनके अंदर मुझे लाभ मालूम हुआ। मेरी घवराहट कम हो गई, रातको नीद उचटना वंद हो गया और मै अकेले सोने लगा। फिर भी अकेले जानेसे डरता था। एक दिन डाक्टर साहवने पूछा, किसका डर मालूम होता है? इसका उत्तर तो मै कुछ भी न दे सका। इसपर डाक्टर साहवने वड़े प्रेमसे मेरे गालपर चपत लगाकर कहा, "क्यों पगले! जहां भय लगता है वहा भगवान नही होते?" और मुस्कराकर कहा, "जाओ, अव मत डरना।"

मैने डाक्टर साहवको कोई जवाव तो नही दिया, पर उनकी वातोंपर गौर करने लगा। मझे मालूम पड़ा कि हा, डाक्टर साहव तो ठीक कह रहे है।

दो दिन बाद डाक्टर साहबने मुझे गांधीजीकी आत्मकथा पढनेको दी। पढ़नेपर लगा कि जिन चीजोंको मै खोज रहा था वे सब तो इसी पुस्तकमे बंद है। मैंने दो बार आत्मकथा पढ़ी। इससे मेरी अकेले रहनेकी हिम्मत बढ़ी और उसे आजमानेके लिए मै अकेले टहलने जाने लगा। आरोग्य-मंदिरके चारों ओर खेत फैले हुए है, कुछ वन-से बाग है, सुंदर शांत सड़कें हैं। कहीं कभी डर लगता तो सोचता कि डर काहेका और भगवानका निवास तो सब जगह है और मुझमे बल भर आता। कभी-कभी मैं गोरखपुर शहरके कोलाहलमे, जो चिकित्सालयसे एक मील दूर है, अपनी हिम्मत आजमाने जाता। वहां भी मुझे कम भय लगता।

अब मुझे योगासनोका अभ्यास कराया जाने लगा, जिसमे मुझे आनंद आता। मेरे शरीरमे स्फूर्ति आने लगी। मेरा दृष्टिकोण बदल गया। हर चीज मुझे अधिक आकर्षक लगने लगी। अपने जीवनसे भी अधिक प्यार हो गया। मैं पूर्णतया भयमुक्त हो गया। अब मै घर चला आया। चलते वक्त स्वास्थ्यगृहकी ममता उमड़ आई। डाक्टर साहबसे अलग होनेको जी नहीं चाहता था पर अलग तो होना ही था। डाक्टर साहबसे विदा लेनी पड़ी।

यह तीन साल पहलेकी बात है। अब मैं बेसेंट कालेजके दसवें दर्जेमे पढ़ता हूं। ठीक खानपान और रोजका प्रात.भ्रमण जारी है। साथमें अपने भाई रवींद्रके साथ दो मील दौड़ता हूं। जिसमें मुझे बहुत आनंद आता है।

मुझे आशा है अब मैं कभी बीमार नहीं पड़ूंगा।

—श्रीदेवकीनंदन शर्मा

: १२ :

चिंता

मैं अपने विद्यार्थी-जीवनमे शरीरसे वहुत कृश रहता था। ऐसा मालूम होता था कि मानो शरीरमें खून ही न हो। मेरी इस हालतपर मिलने-जुलनेवाले टोक दिया करते थे। इसपर शर्मके मारे मेरा सिर नीचा हो जाया करता था। एक तो शारीरिक कमजोरी, ऊपरसे लज्जा। पाठक ! आप सहज ही मेरी उस अवस्थाका अंदाज कर सकते है। जो अवस्था फूलने-फलनेकी थी उसके वदलेमें मै मुरझाया जा रहा था। ऐसा कैसे और क्यो था यह वतानेकी यहां जरूरत नही मालूम होती। ऐसे दृश्य अक्सर दिखाई देते है।

स्वास्थ्य-सुधारके लिए स्वभावत. मुझे ओषधियोंकी ओर दौड़ना पड़ा। तरह-तरहकी दवाए लेता रहा। कई वर्षोतक यह सिलसिला चला। पर स्वास्थ्य सुधरनेके वजाय नए-नए रोगोका आक्रमण होता रहा। शरीर दमा, ववासीर, पेचिश, रक्ताल्पता, कमजोरी आदि रोगोका घर वन गया। अपनी शक्तिके अनुसार काफी रुपए दवाओपर खर्च करता रहा पर लाभ कुछ न हुआ। मै चाहता था कि किसी तरह मेरा कुछ वजन वढ़ जाय और शरीरका दुवलापन थोडा हट जाय। कई तरहकी कसरतो और आसनोका भी सहारा लिया। कस-रतसे रोगोके नए आक्रमणसे तो वचा और कुछ-कुछ तदुरुस्त भी अपनेको महसूस करने लगा, पर न तो रोगोकी जड कटी

और न वजन वढ़ा। सच पूछिए तो मै दवासे वजन बढ़नेकी उम्मेद छोड़ चुका था।

संयोगकी बात, आगे चलकर मुझे एक बड़ी आर्थिक चोट पहुंची। यह चोट मेरे स्वाभिमानको भी चोट पहुंचा रही थी। मै कुछ चिंतामे पड़ा। वचपनसे ही मुझे अध्ययनका थोड़ा शौक था, अतः अध्ययन-मननकी ओर इस विपत्तिकालमे मनको लगानेकी कोशिश करने लगा। गीता, स्वामी रामतीर्थकी रचनाएं आदि अपनी रुचिके अनुसार थोड़ा-थोड़ा पढ़ने लगा। इससे मेरा दिल बहला, चिंताएं पीछे छूट गईं। कहना चाहिए कि मैं शांतिका अनुभव करने लगा। मेरा वजन जो एक मन उन्नीस सेरसे कभी नहीं बढ़ा था, वह बढ़कर एक मन तीस-बत्तीस सेर रहने लगा और दमा, ववासीर, रक्ताभाव, कमजोरी आदि रोग बिना दवा-दारूके कहां भाग गए इसका पता ही नहीं चला। यह केवल अध्ययन-मननका फल था; क्योंकि इस कालमें मैंने किसी विशेप संयम-नियमका पालन किया हो या कोई विशेप परहेज रखा हो सो बात भी नही है।

यह करीव पंद्रह वर्ष पहलेकी बात है। मुझे जितनी बातें याद थी मैंने लिख दी हैं। इसमें कोई बात छूट जा सकती है, पर वढ़ा-चढ़ाकर लिखनेका प्रयत्न मैंने जरा भी नहीं किया है। मुझे जो शारीरिक लाभ पहुंचा वह तो अवतक स्थायी-सा ही है। मानसिक या आत्मिक लाभ जो मै पा सका था वह भी कम नही था यद्यपि परिस्थितियोंके अनुसार वह घटता-वढ़ता रहता है।

विश्वपूज्य बापूने ठीक ही कहा है कि सब रोगोंकी दवा राम-नाम है। मैंने यह चीज अपने अनुभवमें ठीक पाई। पर

अफसोस हम इससे लाभ नही उठाते और इसीलिए आज ससार शारीरिक और मानसिक रोगोसे तडप रहा है।

—श्रीहीरालाल सराफ, एम० एल० ए०

(२)

मैने बहुतसे आदमियोंको देखा है जिन्होने शंकाहीको रोग समझकर अपनेको खो दिया है। मै भी उन्हीमेसे हूं। फर्क यह है कि मैने खोकर अपनेको वापस पा लिया है। कैसे ? सो कहता हू।

जिस समय मै हाईस्कूल गोड्डा (संथाल परगना) मे पढता था, मै बहुत ही दुबला-पतला था। यहांतक कि कही खुली देह खडा होता तो कोई मेरी पसलियोको आसानीसे गिन सकता था। लोग मुझे देखकर कह बैठते, बीमार हो क्या ? मै बीमार तो नही था पर दिन-दिन बीमार होता जा रहा था। होस्टलमे रहता था। होस्टलका खाना-पीना तो सब जानते है, दूध-दही तो वहा सपना ही था।

१९४९के नवंबर मासमे अचानक मुझे जाडा देकर बुखार आया। ज्यो-ज्यो रात बीतती गई बुखारकी मात्रा बढती गई। शामसे आधी राततक बुखारकी मात्रा १०५° तक रही। मै बेहोश था सुबह डाक्टर आए, मलेरिया निश्चित किया। तीसरे दिन मै कुछ स्वस्थ हुआ। फिर १५ दिनकी छुट्टी लेकर घर गया, पर वहा अच्छा होनेके बजाय फिरसे सख्त बीमार पडा। १५-२० दिनके बाद आराम हुआ और कमजोरी बढ़ती गई।

मेरे गांवके कुछ व्यक्तियोने मुझे तपेदिकके लक्षण बतलाए। उस दिनसे तो मै और भी दुबला होने लगा। शंका डाइनने

मेरे दिलमें अपना अटल साम्राज्य स्थापित कर लिया। लोगोंके कहनेपर सोचने लगा कि आखिर मेरे शरीरमें कोई बीमारी नहीं है तो मैं दिन-ब-दिन दुवला तथा कमजोर क्यों होता जा रहा हूं ? उस दिनसे शंका बढ़ती ही गई।

बुखार वरावर ९८° तक रहता था। खाना खाता वह पच भी जाता था। पर मनमें चिंता वरावर लगी रहती।

एक अच्छे आदमीके कहनेपर इलाजके लिए पटना गया। वहां एक डाक्टरको दिखाया। उनके स्वास्थ्य-परीक्षा करानेका कारण पूछनेपर मैंने अपने मनका चोर उनके सामने निकाला।

उन्होंने खून और खखारकी जांच की। एक्सरे लिवाया। सव कुछ जांचनेपर उन्होंने अपनी राय दी "आपको न तपेदिक है और न कोई बीमारी, आप केवल शंकाके फेरमें पड़ गए हैं।" फिर कहा, कि "आपके शरीरमें विटामिन बी० की कमी है।' उनकी आज्ञानुसार मैं विटामिन बी०की कई शीशियां खाली कर गया पर कुछ पल्ले न पड़ा। दवाई खानेके पहले मुझमें यह गड़वड़ी थी—भूख नहीं लगती थी, रातमें नींद नहीं आती थी, सोई हुई अवस्थामें मुझे कोई जगा देता तो मेरे हृदयमें जोरोंकी धड़कन होने लगती। मन हमेशा उदास रहा करता था। पढ़नेमे चित्त नही लगता था। स्मरण-शक्ति जवाव दे गई थी। जो पढ़ता याद न रहता। और इसके लिए दरजेमें शरमाना पड़ता था। शारीरिक शक्ति घटती ही जा रही थी। शरीरकी नसें सूख गई थीं। समयपर शौच नहीं होता था। मुझे ऐसी आशा थी कि अव मैं स्वस्थ न हो सकूंगा। उसी समय 'आरोग्य' के एक पुराने पाठक कांग्रेस कार्यकर्ता श्रीरामसुंदर रामके समझानेपर आशा और निराशाके वीच प्राकृतिक चिकित्साकी ओर वढ़ा।

सूर्योदयके एक घंटे पहले उठता, मुंह-हाथ धोकर आध सेर पानी पी लेता और टहलनेके लिए नदीके किनारे चला जाता और वहां करीब १५ मिनटतक हल्का व्यायाम करता रहता। फिर टहलनेके लिए निकल जाता और एक डेढ़ मीलका चक्कर लगाकर अपने घर लौट आता। स्नानके बाद थोड़ा मट्ठा पीता और पढ़नेके लिए बैठ जाता। भोजनमे फल और दूधकी मात्रा बढ़ाई। इस तरह करीब एक सालतक किया और मुझमें एक अजीव परिवर्तन हुआ।

चिकित्साके पहले मेरा वजन ८४ पौंड और सीना २८ इंच था लेकिन अब मेरा वजन ९४ पौंड तथा सीना ३४ इंच हो गया। और सब कमजोरियां न जाने कहां चली गईं। अब बिना भोजनके एक बार में १६-१८ मील चल सकता हूं जब पहले भोजन करनेपर भी ४ मील मुश्किलसे चल सकता था।

—श्रीनरोत्तमप्रसाद साहा

: १३ :

पागलपन

मैंने मरनेकी गरजसे एक दिन दो छटांक शहद और घी मिलाकर खा लिया। भाईसे पटती नहीं थी। इस दुःखसे मैंने अपने मरनेकी सोची। मैंने सुन रखा था कि शहद और घी बराबर-बराबर मिलानेसे जहर हो जाता है। मैंने थोड़ा नही, दस-दस तोला घी-शहद लिया।

मैं मरा नहीं पर न मर सकनेके अफसोससे मेरी हालत मरनेसे भी बदतर हो गई। मैं पागल हो गया। चिल्लाता, बड़बड़ाता, नीद आती नहीं, भूख नही लगती, पाखाना न होता, शांत रहता तो एक कोठरीमे अपनेको बंद किए सोता रहता। नीद तो उस समय भी न आती।

१५ महीने यों ही बीते। घरवालोंपर मै भारस्वरूप हो गया। घरकी पूंजी भी खतम हो गई। कुछ मेरे खाने-पीनेमें गई, कुछ डाक्टर-वैद्य, ओझा-सोखा ले गए। घरवालोंको भोजन मिलना मुश्किल हो गया फिर मेरी दवापर क्या खर्च करते।

ऐसी दशामें घरवाले मुझे गोरखपुर अपने एक हितैषीके यहां दिखाने और मेरी चिकित्साके संबंधमें राय लेने ले गए। उन्होंने मुझे देखा और प्राकृतिक चिकित्सा करानेकी राय दी। मैं आरोग्य-मंदिरमें दाखिल हो गया। यहां सबसे बड़ी खुशी मुझे यह हुई कि अन्यत्र लोग मेरे नीद न आनेको एवं अनेक लक्षणोको वहम कहते थे यहां इन्हें रोग स्वीकार किया गया

और जहां मुझसे लोग डाट-फटकार और जवरदस्तीसे काम लेते थे वहा मुझे प्यार और सहानुभूति मिली। अत. मुझे यहा जो चिकित्सा दी जाती उसमे मेरा मन लगता। मै चिकित्सककी पूरी-पूरी वात माननेकी कोशिश करता। चिकित्सा वहुत सीधी थी। पहले एनिमाद्वारा मेरा पेट साफ किया गया। एनिमासे जो मल निकला उसे देखकर तो मै हैरान हो गया। सोच भी नही सकता था कि मेरे पेटके अदर इतना मल भरा रह सकता है। इसके वाद मुझे ठडे पानीके टवमे वैठकर पाच मिनटके लिए पेड मलना वताया गया। भोजनमे चोकरसमेत आटेकी रोटी और हरी उवली सब्जी मिली। पेट साफ होनेसे मुझे कुछ भूख लग आई थी और सिरपर गरमी भी कम मालूम होती थी। मुझे पहली वार भोजनमे कुछ स्वाद आया और लेटा तो लेटनेमे आराम मालूम हुआ।

एक सप्ताह यह क्रम चला होगा कि मुझे नीद आती-सी जान पड़ने लगी। दूसरे सप्ताहके अतमे तो मुझे पूरी नींद आने लगी। तीसरे सप्ताहमे मै चौदह-चौदह घटे सोने लगा। रात पूरी न पड़ती तो दिनमे भी सोता। चार सप्ताहकी चिकित्सासे मैने अपनेको पूरा स्वस्थ पाया। भूख ठीक लगती, खाना हजम होने लगा, कब्ज तो जैसे मेरा साथ ही छोड गया। दिमाग कभीसे ज्यादा काम करने लगा। शरीरमें स्फूर्ति आ गई और जहां मै लोगोसे मुह चुराता फिरता वहां मुझे लोगोकी सगतिसे अधिक आनंद आता।

घर आकर कुछ दिनोंतक घरके खेतपर काम करता रहा। फिर मै श्रीगाधी-आश्रम, अकवरपुरमे खादीके काममे लग गया। वहां सूत कतवाता, सूत खरीदता, दिनभर इंतजाम और दौड़-धूपमे लगा रहता पर मुझे इससे किसी प्रकारकी थकान न

प्रतीत होती। मैंने प्राकृतिक चिकित्सा पहली जून सन् १९४६ ई०को शुरू की थी और उसी महीनेकी ३०,तारीखको बंद। इस एक महीनेमें मैंने अपना खोया हुआ स्वास्थ्य ही नहीं पाया वल्कि स्वास्थ्यके वह नियम सीख गया जिनपर चलनेके कारण मैं तबसे कभी बीमार नहीं पड़ा एवं मुझे यह कहते भी खुशी होती है कि कई मित्रोंने मेरी रायपर चलकर अपना स्वास्थ्य सुधारा। मेरी राय इससे बहुत अधिक नहीं होती कि रोटी-सब्जी खाओ, काफी पानी पीओ, यथेष्ट कसरत करो।

—श्रीभूलन सिंह

: १४ :

सूजाक

मुझे पहले थोड़ी पाचनकी शिकायत थी। पेटमें मामूली मरोड़ रहती और कब्ज रहता। तीन सालसे यह हाल थे।

लेखक
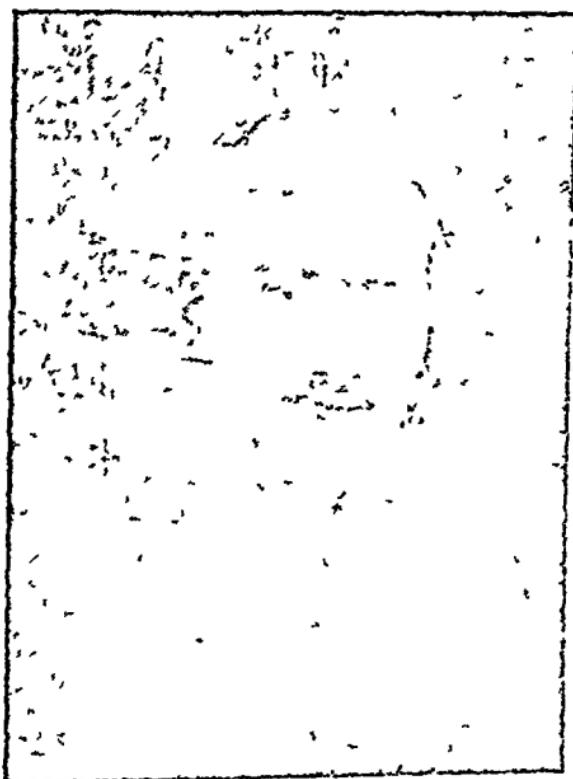
स्वप्नदोषके पंजेमें तो मैं छः सालसे फंसा था। रिवाजके मुताबिक डाक्टर-वैद्योंकी शरण गया। चारसे चौंसठ रुपए फीसतकके डाक्टरोंके दरवाजे खटखटाए। वैद्य जो कलकत्तेमें सबसे

नामी थे उनकी दवा की। पर रोग बिगड़ता ही गया और हालत यहांतक पहुंची कि शरीर हड्डियोंका ढांचामात्र रह गया, चलनेमें चक्कर आने लगा। पाखानेमें आंव आती। कई तरहकी, कभी सफेद, कभी गांठ-सी और मलके साथ कीड़ियां मिली होती। कब्जका यह हाल था कि तीन-तीन दिन पाखाना नही होता। होनेको हुआ तो पाखानेमें एक घंटा बैठे और जोर लगाए बगैर तो कुछ होता ही नही था। पेटमें गुड़गुड़ाहटकी आवाज दिनभर होती रहती। मुंहका स्वाद तीता रहता, छाले पड़ गए थे और जीभका रंग बदरंग हो गया था।

स्वभाव भी खराब हो गया। मन-ही-मन कुढ़ता रहता, लोगोंसे द्वेष रखता, चिड़चिड़ापन हद दरजेका था। नींद आती ही न थी, आती तो बुरे-बुरे स्वप्न देखता। अपनी इस हालतके कारण मैं जीवनसे निराश हो गया था। घरवालोंने भी मेरे जीनेकी आशा छोड़ दी। ऐसी दशामें, आत्म-हत्या यदि कोई आसान चीज होती तो मैं जरूर कर बैठता! वह आसान चीज नहीं है।

कभी-कभी सोचता कही मैं पथ्य-परहेजमें तो गलती नहीं कर रहा हूं। डाक्टरोंसे पूछता, क्या खाऊं? वे कहते पथ्य-परहेजका कोई महत्त्व नही है। हमारी दवा पीते जाओ जो तबियतमें आवे वह खाते जाओ!

सूजाक हो गया

मेरी इस दशामें मुझे सूजाक हो गया। महीनेभरतक पेशाबमें जलन रही और सात-आठ दिन लगातार पेशाबके साथ रक्त आता रहा। फिर कभी गाढ़ी सफेद, कभी पीली

लसी-सी आती। मूत्रेंद्रियके मुखपर छोटी-छोटी लाल फुंसियां हो गई थी। लसी हर समय चूती रहती। कभी पेशाव साफ न होता। धोती गंदी हो जानेके कारण कई वार वदलनी पड़ती।

स्वभावकी चिड़चिड़ाहट वढ़ गई, घरके हर आदमीपर गुस्सा करने लगा, स्मरण-शक्तिका यह हाल हुआ कि एक घटे पहले सुनी-सोची वात भूल जाती। किसी वड़ेसे आंख मिलाकर वात करनेकी हिम्मत नही होती, डरता इतना कि रातको अकेले पेशाव करने नही जा सकता था। जरा-सी कोई तेज आवाज सुनते ही मेरी सांस तेजीसे चलने लगती, लगता अभी कोई भूत-प्रेत आकर मुझे उठा ले जायगा।

और रोगोंकी चिकित्सा मै खुलकर कर सकता था पर इस घृणित रोगकी चिकित्सा कैसे हो? मै छिप-छिपकर इस रोगकी दवा खरीदता, वाहर जाता और वहा इस रोगकी चिकित्सामे डाक्टरोकी जेवे भरता।

घरवालों और मित्रोसे अपनी दशा छिपानेका मैने एक विचित्र ढंग निकाला। हमेशा अच्छे-अच्छे कपड़े पहनता, मुंह-पर हमेशा स्नो क्रीम मलता रहता, पर अपना चेहरा आइनेमें देखनेकी मेरी हिम्मत न होती।

मैने अपने सूजाक होनेकी जो वात यहां लिखी है यह छिपानेकी चीज है? पर अव जव अनेक वुरे कामोकी गठरी मेरे सिरपर है तो इस एक और वुराईको छिपानेमे क्या रखा है?

खैर, दवा सव कर चुका था, दवाओसे घृणा हो चुकी थी। मेरे रोगोसे अधिक घृणास्पद थी वे मेरे लिए। मेरे रोगोको वढानेमें मै उन्हें भी मददगार समझता हूं। और डाक्टरोको तो और अधिक। किसी संयम-नियमका पाठ उन्होने मुझे नही पढ़ाया और यदि मैने कभी संयमकी वात की तो उन्होने

मुझे अपने सोचे रास्तेपर अग्रसर करनेके बजाय उल्टे रास्ते चलनेको ही प्रोत्साहित किया।

मेरी इस दशामें मैंने प्राकृतिक चिकित्साका नाम सुना। चलो नई चिकित्सा है इसे भी आजमा लिया जाय। मैं आरोग्य-मंदिर, गोरखपुर चला गया। वहांकी चिकित्सा मेरे मनोनुकूल निकली। मे सोचता था कि विना नियम-संयमके चिकित्सा कैसी? और यहां मुझे लगा कि संयम-नियमको ही यहां चिकित्साका नाम दिया गया है। मुझे पहले ही दिन लगा कि यह चिकित्सा मुझे लाभ कर सकती है।

जव यहां आया तो मुझे भूख नहीं लगती थी। जब भूख नहीं तो खाना कैसा? मैंने दो दिनतक उपवास किया, पानी पीता रहा। फिर थोड़ी भूख लगी तो मुझे भोजन मिला। सवेरे फल, दोपहर और शामको रोटी-सब्जी।

चिकित्सामे सवेरे-शाम कटिस्नान, दोपहरको कभी मालिश, कभी धूप-स्नान, कभी गरम-ठंडा कटिस्नान, मुझे मेरी अवस्थाके अनुसार दिया जाता।

दो-तीन दिनमे ही मुझे पेशाव साफ होता दिखाई दिया, भूख कुछ-कुछ लगने लगी, आँवका आना भी कम हुआ और नीद आने लगी। स्वभावमे भी परिवर्तन हुआ? यहां क्रोध करनेका मौका न आया। इन सवका कारण मै चिकित्सासे अधिक चिकित्सकके आशादायी, सरल, मृदु एवं प्रफुल्लोत्पादक स्वभावको समझता हूं जिसने मेरे मनपर अधिकार कर लिया।

दुग्ध कल्प

एक महीनेकी चिकित्सासे मुझे शक्ति मिली, मै पांच-चार मील टहलने लगा। रोग सभी कम थे, पर गए नहीं थे। अव

मुझे एक सप्ताहका उपवास कराया गया और फिर मै सत्ताईस दिन केवल दूध पीकर रहा, दूध चार-पाच सेर रोज पीता। इस गोरसरूपी अमृतसे मेरे सूखे शरीरपर कुछ मांस आया, त्वचाकी कालिमा और सूखापन जाकर उसपर लाली दौड़ी और मुझे अपनेमे उस स्फूर्तिकी प्रतीति हुई जो मेरे लिए स्वप्नकी चीज हो गई थी।

इस प्रयोगसे मेरे रोगोके सारे लक्षण चले गए। यहां प्राकृतिक चिकित्सासंबंधी पुस्तके पढकर यह तो मैने समझ लिया था कि इस चिकित्सासे मेरे पेटके समस्त रोग शीघ्र चले जायंगे पर मुझे यह आशा तनिक भी नही थी कि मेरा सूजाक भी चला जायगा। असलमे प्रकृति क्या कर सकती है यह वही जानती है। सचमुच वह सब कुछ कर सकती है। उसकी शरण जानेपर, उसकी आराधना सच्चे हृदयसे करनेपर वह मनचाहा वरदान देती है।

मै एक महीने गोरखपुर आरोग्य-मदिरमे और ठहरा, अब मेरा भोजन संतुलित था। सवेरे-शाम फल-दूध और दोपहरको रोटी-सब्जी मुझे मिलती। इस समय मुझे आसन सिखाए गए और कुछ व्यायाम। तबियत ठीक होनेके कारण मेरी पढ़नेकी रुचि भी बढ़ गई और आरोग्य-मंदिरके पुस्तकालय-से मैने प्राकृतिक चिकित्सासंबंधी काफी पुस्तकोका अध्ययन किया।

कुछ लोगोको उपवास और केवल दूध पीकर रहनेकी बात बहुत कठिन प्रतीत होती होगी। पर मै यहा यह भी बताना चाहता हूं कि मैने तीन महीनेतक नमक भी नही खाया। और किसी भी नियमके चलानेमे मुझे कोई कठिनाई नही हुई। मन अधिक-से-अधिक करनेको करता था, ऐसा ही वातावरण

था। बहुतसे रोगी थे, कोई फलाहारपर था तो कोई उपवास-पर। उन सबसे प्रेरणा मिलती और सबके साथ बैठकर जब सम्मिलित भोजनालयमें भोजन किया जाता तो जो मिलता वही बहुत स्वादिष्ट लगता। मुझे कोई भी प्रयोग जरा भी न अखरा। तीन महीनेमें मैंने अपनेको नीरोग ही नही सशक्त भी पाया, अपने हर कामके योग्य। आज पांच वर्ष बाद घरसे अपनी कहानी लिख रहा हूं। मनमें जरा शंका थी कि कहीं घर जानेपर रोग मुझपर फिर हमला न करे पर अब तो लगता है वे मेरे घरका रास्ता ही भूल गए हैं। शक्तिका मैं सहगामी हो गया हूं, उसकी मुझसे अच्छी पट रही है।

प्राकृतिक चिकित्साके परिचयको मैं अपने जीवनकी सबसे बड़ी घटना मानता हूं। मानता हूं कि उस दिन मेरा पुनर्जन्म हुआ था। पिछला जीवन मैं भूल गया हूं और मैंने अपनी जिंदगी नए सिरेसे शुरू की है जिसमें न परिताप है न पश्चात्ताप। केवल आनंद-ही-आनंद है। इस आनंदका हिस्सा मेरे घरवाले और मेरे मित्र भी पाते है। आप भी पाएं अतः यह कहानी लिख दी है।

—श्रीगोविंदराम खेतान

: १५ :

मोटापा

आजसे दो वर्ष पूर्वकी बात है, उस समय मेरी आयु उनतीस

लेखक
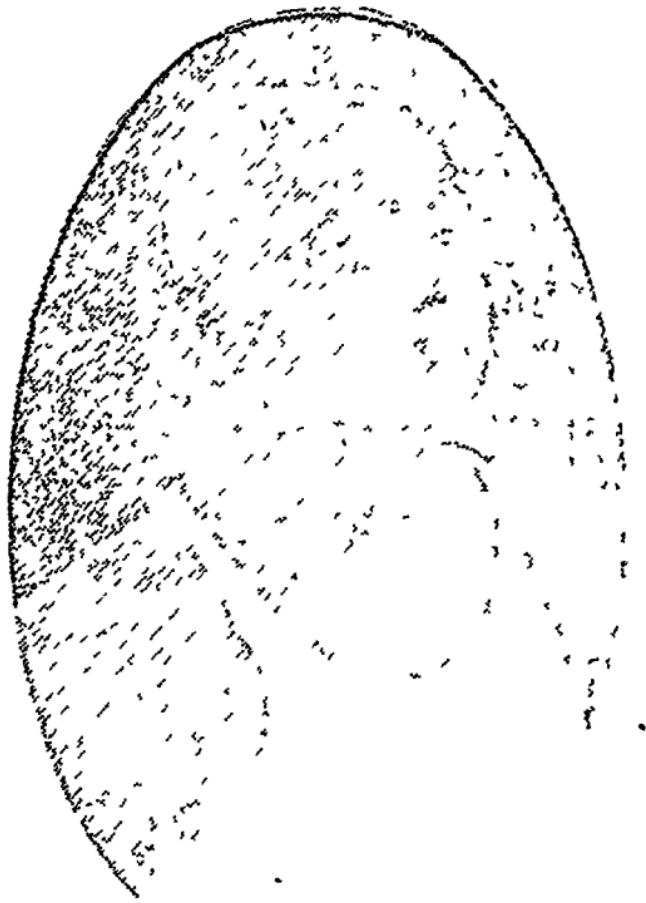
वर्षकी थी, शादी हुए पांच वर्ष हो चुके थे। माता-पिताकी एकमात्र संतान होनेके कारण खाने-पीनेमें कोई कमी नहीं थी।

आमदका ख्याल रखते हुए चाहे जो कुछ भी खाया-पीया जा सकता था। उस समय मेरा वजन दो मन आठ सेर, लंबाई पांच फीट छः इंच तथा वदन दोहरा था। इतना वजन होनेपर भी किसी विशेष स्थानपर वेढंगे तौरपर फूला न था।

उस समय मैं सवेरे स्नानके पश्चात् खूब मलाईदार तथा काफी चीनी पड़ा हुआ आध सेर दूध, दोपहरको रोटी-दाल, मुख्यतः उड़दकी दाल खूब गाढ़ी तथा प्रचुर मात्रामें घीसे छौंकी हुई, दो या तीन सब्जी (आलू भी), घीमें सने चावल इत्यादि लेता। इस खानेके साथ दो छटांकके लगभग कोई मिठाई कभी घरकी वनी, कभी वाजारकी लेता। तीसरे पहर प्रातःकालकी भांति एक गिलास दूध, रात्रिमें पराठे और तीन-चार सब्जियां। भूख न होनेके कारण सब्जियोंको वार-वार घीमें भुनवाता, फिर भी स्वाद न आता था। इस खानेके पश्चात् भी दोपहरकी भांति मिठाई लेता और फिर रात्रिमें सोते वक्त दूध आधा सेर पीता। आप विश्वास रखें मुझे कभी वदहज्मी या खट्टी डकारोंका सामना नहीं करना पड़ा था। वर्षमें आठ-नौ महीने वाजीकरण और पौष्टिक दवाएं सेवन करता रहता। पांच वर्षमें लगभग दो मन आसव अरिष्ट तथा पाव-सवा पाव भस्म आदि सेवन कर चुका था।

लोग आपसमें मेरे स्वास्थ्यकी तारीफ करते थे, दोहरा बदन देखकर वे रोवमें आ जाते थे। विशेप तौरपर न कभी वीमार ही पड़ा न दिखावेमें कोई रोग ही था परंतु वास्तविक दशा जो थी सो सुनिए। महीने-दो-महीनेपर विशेपकर गर्मीके मौसममें सिरमें दर्द हो जाता था जो वीस-बाईस घंटे रहता था। कोई भी दवा लगाने या खानेपर उसे दूर करनेमें सफलता प्राप्त नहीं होती थी। इस दर्दको डाक्टर-हकीम वायुका दर्द कहते थे। मैं इस दर्दसे मुक्ति पानेके लिए कई रसों तथा

चिकने पदार्थोंका सेवन करता था। दर्दके समय मुंहमें खुश्की होती थी। वैद्यजी पहलेहीसे कहते थे कि खुश्की है। पर मैं सोचकर असमंजसमे पड़ जाता था कि इतने घी-दूधपर हाथ साफ करनेपर भी खुश्की।

मन कभी-कभी घवराता था। क्रोध इतना था कि किसी काममे असफल होनेपर आत्महत्यातकके निर्णयको पहुंच जाता था। सहवासकी इच्छा रोज होती थी, गोया यह एक दैनिक कार्योंमेसे था, इसके विना न नींद ही आती थी और न रातभर चैन ही मिलती थी। दातोंकी हालत यह थी कि मसूढोंको दवानेपर खून आता था। जव कि मंजन दिनमे दो वार रोज करता था। मौसमी वीमारियां, खासी, जुकाम, वुखार, गर्मीमें सारे वदनपर अम्हौरी, वरसातमे दस्त मेरे लिए साधारण वात थी। लेकिन विशेष रूपमे चौंका देनेवाली जो चीज थी वेहद सुस्ती, आलस्य, थोड़ा कार्य कर चुकनेपर आरामकी आवश्यकता, वालोंका तेजीसे सफेद होना, ऐसा लगता था कि अव वूढे होनेमे थोड़ी ही देर और है।

जव मै इस हालतसे गुजर रहा था तो मुझे प्राकृतिक चिकित्सासंवंधी दो-चार लेख पढनेको मिले। उसमे प्रतिपादित सिद्धांतोंने प्राकृतिक चिकित्साका अध्ययन करनेको मुझे वाध्य कर दिया। जहांतक वन सका मैंने इस विपयका अध्ययन किया। पढकर मुझे लगा कि मै तो अपने जीवनके साथ खिलवाड कर रहा हूं। स्वास्थ्यके सवंधमे विल्कुल अधकारमे हू। मैंने प्राकृतिक चिकित्साके नियमोपर चलनेकी ठानी। पहला कदम यह उठाया कि मैंने अपने भोजनमे परिवर्तन किया। अव मै भोजन इस प्रकार लेने लगा।

प्रात मौसमी फलका नाश्ता, दोपहरको चोकरसमेत आटे-

की रोटी, साथमें एक या दो सब्जी और महीनेमें एकआध बार इस भोजनके साथ दालका पानी, शामको कोई एक मौसमी फल, और एक उबालका छः छटांक दूध। दूधमे चीनी नही डालता, मीठेके लिए वहुत जी चाहनेपर कभी-कभी दूधमें शहद डाल लेता या साथमे थोड़ी किशमिश ले लेता। इस भोजन-परिवर्तनका फल यह हुआ कि वजन घटना आरंभ हो गया और चार महीनेमें एक मन बीस सेरपर आकर टिक गया। बदनमें चुस्ती आ गई, काम करनेकी सदैव इच्छा बनी रहती, जल्द थकावटका आना दूर हो गया। बालोंके सफेद होनेकी गतिमें कमी आ गई, सिरदर्द तो बिल्कुल निर्मूल हो गया, मनके घबरानेका अवसर ही नही आता। क्रोधके स्थानपर सहन-शीलता तथा संतोषकी मात्रा बढ़ गई। सहवासकी इच्छा मेरे वशमें आ गई और हर दृष्टिसे स्वाभाविक हो गई। मसूढ़ोंसे खून आना बंद हो गया। इन सबके लिए अलग-अलग मैंने कुछ नहीं किया, सब अपनी इच्छासे चले गए। मै तो सिर्फ तमाशबीन था जो देख रहा था कि मेरे शरीरमें वर्षोंसे डेरा डाले मेहमान, अपना डेरा छोड़ रहे हैं। दो वर्षसे मैं इसी कार्य-क्रमपर चल रहा हूं। भोजनमें इस परिवर्तनके साथ मैंने आरंभसे ही सवेरे टहलना शुरू किया था और सवेरे टहलने जानेके पहले एक दस मिनटका कटिस्नान भी ले लेता था। कटिस्नान लेना मुझे विशेष सुखद प्रतीत होता। रोगोंसे छुटकारा मिले और फालतू वजनसे छुटकारा मिले मुझे दो ही वर्ष हो रहे है। मेरा अपनाया नूतन कार्य-क्रम मेरे लिए स्वाभाविक हो गया है, कितना औषधगुण है प्राकृतिक भोजन और टहलनेमें।

—ओंप्रकाश गर्ग

: १६ :

फाइलेरिया

(१)

२५ वर्षकी अवस्थातक में काफी तंदुरुस्त रहा, यदि कोई शिकायत थी तो सिर्फ कब्जकी। कब्जकी वजहसे मुझे कई

लेखक
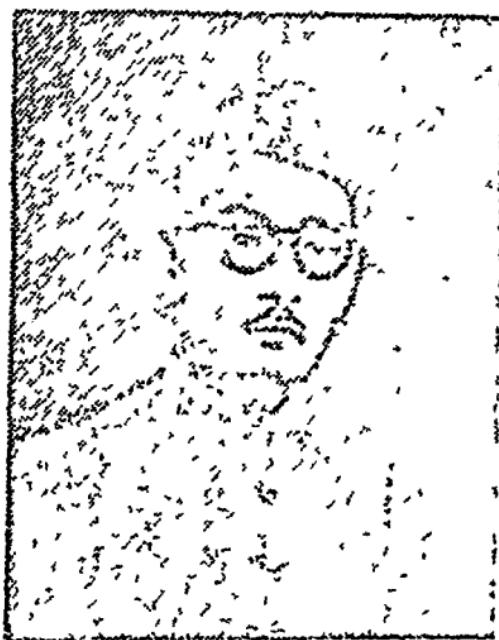
तरहकी बीमारियां शुरू हो गईं। पहले तो बहुत कष्टकर पेटदर्द हुआ करता था। इसके बाद गठिया और साथ ही फाइलेरिया और सांजरकी शिकायत शुरू हुई, जिसके फलस्वरूप हाईड्रोसीलकी वृद्धि भी। मैंने कई तरहके बाहरी उपचार किए। एकादशीके रोज फलाहार भी शुरू किया परंतु मुझे

दौरेकी कमीके वदले उनमें कुछ वृद्धि ही दिखाई दी। हर दसवें-पंद्रहवें दिन सांजरका दौरा आने लगा और इसके साथ मुझे गठिया भी हो जाया करता था। इन सवके लिए मैंने कलकत्तेके नामी डाक्टर डनहम ह्वाइटसे जांच करवाकर उनकी राय ली। उन्होंने आर्सेनी टायफायडकी सुई लेनेकी सलाह दी। उस समयतक मुझे चश्मा लगानेकी कोई आवश्यकता नही मालूम होती थी परंतु आर्सेनी टायफायडकी सुईका पूरा कोर्स लेनेके वाद सांजरका दौरा तो महीनेके अंदर रुक गया, पर मुझे चश्मा लगानेकी आवश्यकता मालूम पड़ने लगी और तवसे अवतक चश्मेकी जरूरत बढ़ती ही जा रही है। फायलेरिया भी दो सालतक एकदम रुका रहा। उसके वादसे फिर दौरा शुरू हो गया। मैंने दुबारा उक्त डाक्टर साहवकी राय ली तो उन्होंने वतलाया कि एक दूसरा कोर्स आर्सेनी टायफायडका लिया जाय। मैंने उनकी राय न मानकर प्राकृतिक चिकित्साकी शरण ली और सन् १९४४में प्रायः ११ दिन उपवास और डेढ़ महीने रसाहार करनेके वाद मैं फायलेरियासे एकदम मुक्त हो गया। अव मुझे कभी भी फायलेरियाका दौरा नही आता। परंतु आंखोकी रोशनीमें जो एक वार खरावी आई वह अभीतक दूर नहीं हो सकी यद्यपि चश्मेकी शक्ति वढानेकी विशेप आवश्यकता नही पड़ रही है पर दृष्टि कमजोर अवश्य हो गई है। यही है नतीजा जहरीली सूइयोंका जिसके पीछे आजकलकी अज्ञान जनता परेशान रहती है।

—श्रीरत्नेश्वरीनंदन सिंह

(२)

आजसे तीन साल पहले, मैं रोज बीमार बना रहता। सब तरहके इलाजोसे निराश हो चुका था। डाक्टरोने मुझे फाइलेरियाका मर्ज बतलाया था। भयंकर रोग है यह, उसका नाम सुनकर ही छाती दहल गई। सैकडो रुपए खूनकी जांच कराने और इंजेक्शनोमे खर्च किए पर रोगका पूरा निर्णय न हो पाया। फाइलेरिया असाध्य रोगोकी श्रेणीमे है, यह सुनकर मैंने दवा, इजेक्शन सब बंद कर दिए। उस समय भी मेरे यहा "आरोग्य" जाता था पर उसे पढनेमे कभी मेरी तबियत न लगती थी। इधर उसके एकाध लेख पढे तो ख्याल हुआ कि डाक्टरोंने तुम्हे भ्रमजालमे फसा दिया है।

'आरोग्य'के अनुसार मैंने अपने भोजनमे परिवर्तन किया। उसका नतीजा यह हुआ कि मेरा स्वास्थ्य जो बिल्कुल गिरा हुआ था, किसी काममे मेरा मन न लगता था, मैं सदा चिंतित रहता था, वह अवस्था कतई बदल गई। प्रसन्न रहने लगा, किसी काममें थकावट मालूम न होती, २४-२४ मील दिनभरमे चला। न थकान आई न सुस्ती। मैंने भोजनके सिवा और कुछ न बदला। शुरुमे फलोपर रहने लगा, फिर थोडी-थोडी कच्ची सब्जी भी लेने लगा। दिनके भोजनमे अकुरित गेहूंके साथ घी व पीली शक्कर लेता था। सुबह नाश्तेमे टमाटर तथा रातके भोजनमे दलिएके साथ हरी पत्तीदार कच्ची सब्जी। यह क्रम दो माह चला। फिर गेहूके अलावा दिनके भोजनमे अंकुरित चना, मटर, मूग, मसूर, बाजरा (मौसमके मुताबिक) दही व गुड़के साथ—जैसा जिसका मेल है,—आजतक चल रहा है। सुबहका नाश्ता बंद हो गया है। भोजन ९-१० बजेके

बीच खूब चबा-चबाकर करता हूं। रातके भोजनमें मौसमके अनुसार फल तथा कच्ची सब्जी लेता हूं। नमक तथा आगकी मुझे कोई आवश्यकता नहीं पड़ती। दही व घी बिना आगके ही तैयार हो जाता है। गुड़ ही एक वस्तु है जिसमें आगका काम रहता है।

मेरा यह तीन सालका अनुभव बतलाता है कि मनुष्यके लिए प्राकृतिक रहन-सहनके सिवा दूसरा कल्याणकर रास्ता नहीं है। प्रकृतिने जो खाद्य पदार्थ जिस शक्लमें पैदा किए हैं उसी शक्लमें उनमें मानव-जीवनके लिए सब जीवनतत्त्व मौजूद रहते हैं। किसी प्रकारकी कृत्रिमता लानेसे उनमेंके अनेक आवश्यक तत्त्व नष्ट हो जाते हैं। नमक, मीठा सब उन पदार्थोंमें मौजूद रहता है। जैसे अन्य जीवधारियोंके लिए आग गैर जरूरी है वैसे ही मनुष्यके लिए भी उसकी जरूरत नहीं है। जो लोग यह मानते हैं कि कच्चा भोजन पचनेमें देर लगती है, वे अनुभव करके देखें तो उन्हें मालूम होगा कि उनकी इस धारणाका कोई सही कारण नहीं है। कच्चा पचनेमें आसानी रहती है और प्राणीको स्वस्थ रखनेमें तो वह अपनी विशेषता रखता ही है।

—श्रीरासबिहारी सिंह

: १७ :

आमाशयका घाव

१९३६ ई०की बात है साल शुरू हुए बहुत दिन नही हुए थे कि मेरे हृदयके ऊपरकी पसलियोमे दर्द रहने लगा। वह

लेखक

खाना खानेके दो-तीन घंटे बाद शुरू होता और जबतक फिर कुछ न खा लेता बराबर बना रहता। पर दो-तीन घटे आराम

रहनेके वाद फिर वही हालत हो जाती। खड़े या बैठे रहनेकी हालतमें दर्द ज्यादा रहता, लेटे रहनेपर कुछ कम। दर्द दिन-दिन वढ़ता गया। यहांतक कि मुझे डाक्टरोंसे सलाह लेनी पड़ी और उन्होंने आमाशयमें घाव हो जानेका निदान किया और पेटका एक्सरे करा लेनेकी सलाह दी, जिससे घाव होने-न-होनेका निश्चय हो जाय। इसपर मैं एक मशहूर और साधन-संपन्न अस्पतालमें गया। वहांके बड़े डाक्टरने खुद सावधानीसे मेरे आमाशयका एक्सरे लिया और उससे उसमें बाईं ओर वड़ा-सा घाव होनेकी वात मालूम हुई। डाक्टरने कहा अभी कुछ साल पहलेतक तो आमाशयका घाव सांघातिक रोग ही माना जाता था, मगर इधर इसकी चिकित्सामें जो उन्नति हुई है उसकी वदौलत बहुतसे रोगी अच्छे हो गए हैं। पथ्य और ओपधिके विपयमें चिकित्सककी व्यवस्थाका अक्षरश: अनुसरण होना बहुत ही जरूरी है। पेट कभी खाली न रहे, थोड़ा-बहुत भोजन उसमें हर वक्त मौजूद रहना चाहिए। वह खाली रहेगा तो आमाशयमे पैदा होनेवाला पाचक रस घावको काटकर और गहरा कर देगा। उन्होंने यह भी कहा कि इस तरहका इलाज अस्पतालमें ही ठीकसे हो सकेगा, घरपर नही।

डाक्टरकी वातें सुनकर मैं डर गया और अस्पतालमें भरती कर लेनेको कहा। उन्होंने भरती कर लिया। मुझे आदेश मिला कि अधिक समय लेटा ही रहा करूं और रातके ११ वजेसे सवेरे ५ वजेतकके अलावा वाकी सारे समयमे हर २ या ३ घंटेपर कोई-न-कोई चीज खा-पी लिया करूं और दवा भी लेता रहूं। एक वार मुझे गोश्त दिया जाता, दूसरी वार मछली और सिकी हुई डवल रोटी तथा मक्खन। तीसरी वार दूध और दूधमें पकाया हुआ कोको। कभी-कभी शहद और रोटी

भी दी जाती। एक महीने वाद आमाशयका फिर एक्सरे लिया गया और मालूम हुआ कि घाव न भरा, न घटा, इलाज शुरू होनेके पहले जैसा था वैसा ही अब भी है। मेरा वजन अवश्य करीव एक सेरके वढ़ गया था। अब इस वारेमे सोचनेसे मुझे जान पडता है कि मेरा घाव इस कारण और नही वढा कि उस वक्त मैं वरावर ही लेटा रहता था और पेटमे सब समय थोडा-वहुत खाना भी मौजूद रहता था। वजन थोड़ा-सा वढ जानेका संभवत. यही कारण था। जो हो, डाक्टरने कहा, 'चूंकि एक महीनेके इलाजसे आपको कोई लाभ नही हुआ इस लिए यहा और रहना वेकार है। घर चले जाइए और जो दवा और खाना अस्पतालमे दिया जाता था वह वहां भी खाते रहिए। अगर ६ महीनेमे भी घाव न भरे तो फिर पेटके आपरेशनके सिवा और कोई उपाय नही है।' उन्होने कवूल किया कि खुद इस इलाजमे भी जानका खतरा हो सकता है। यह भी कहा कि अगर वजन महीनेमे आधा सेर भी वढता रहे तो मुझे समझना चाहिए कि घाव भर रहा है।

मै वहुत नाउम्मीदीके साथ घर लौटा। किसी और डाक्टरको दिखानेकी सोच ही रहा था कि अचानक प्राकृतिक उपचारकी किसी पुस्तकमे यह पढनेकी याद आई कि कुछ दिन केवल दूधपर रहनेसे आमाशयका घाव अच्छा हो जाता है। आखिर उस पुस्तकको ढूढा और पढकर निश्चय किया कि कुछ दिन केवल दूध पीकर रहूं। मैने रोज ३ सेर दूध और २ नारंगियोका रस लेना शुरू किया। दूध शुद्ध और घरकी गाय-का होता था। हर दो घटेपर चायके दो प्याले दूध लेता। सवेरे ७ वजेसे शुरूकर रातके ७ या ८ वजेतक कुल दूध पी डालता। आरंभमे हर वार दूध लेनेके एक घंटे वाद एक चुटकी खानेका

/३११

सोडा फांक लेता, जैसा कि अस्पतालमें कराया जाता था, पर पांच-छः दिन वाद ही बंद कर दिया। फल यह हुआ कि १५ दिनमे ही सारा दर्द और तकलीफ जाती रही और वजन लेनेपर देखा कि पूरे पांच पौड (करीब २॥ सेर) वढ़ गया हूं। दुग्ध-कल्प आरंभ होनेके ठीक एक महीने बाद, जव मेरा वजन करीव ५ सेर वढ़ चुका था, मै अस्पतालवाले डाक्टरके पास गया। वह वड़े अचरजसे मुझे देखने लगे और पूछा, कि क्या आप वही आदमी है और आपने क्या किया जो इतने तगड़े हो गये ? मैंने वताया कि मैं एक महीनेसे केवल दूधपर हूं और ३-३॥ सेर दूध पीता हूं। उन्होंने कहा, "कोई आदमी केवल दूधपर कैसे रह सकता है ?" मैने जवावमें कहा कि "मैं तो एक महीने केवल दूधपर रहा हूं। और सिर्फ जिंदा ही नही हूं, वल्कि पहलेसे वहुत अच्छा हूं, और मेरे आमाशयका घाव भी विलकुल अच्छा हो गया है।" मैं छः हफ्तेतक सिर्फ दूधपर रहा फिर मामूली खुराकपर आ गया।

कुछ महीने वाद उन्हीं डाक्टरने मुझसे कहा कि अस्पतालमें आपका इलाज नये तरीकेपर नहीं हुआ। एक इंजेक्शन (सुई) इस रोगकी अचूक दवा है। अच्छे हो जानेके वाद भी सालमें एक वार या हर दूसरे साल उसे लेते रहना होगा। इससे रोगके दुवारा होनेका डर न रहेगा। मुझे उस इंजेक्शनके वारेमें और कुछ मालूम नहीं और आमाशयके घावसे पीड़ित प्रत्येक रोगीको यही सलाह दूंगा कि वह कुछ दिन केवल दूधपर रहकर इस वीमारीको जड़से दूर कर ले।

—(रायवहादुर) श्री पी० एन० घोष

(२)

बचपनसे ही मैं बहुत खिलाड़ी था। कहना चाहिए कि मैंने खिलाड़ीपनकी सीमा पार कर दी थी। उसका फल यह हुआ कि पढ़ना मुझसे नही चला। प्राय: मैं स्कूलसे भाग जाता और मछली या चिड़ियाके शिकारके पीछे फिरा करता। ऐसी हालतमें फेल होना स्वाभाविक था। फल यह हुआ कि मेरे घरवालोंने मेरा पढना बंद करा दिया और स्थानीय रेलवेके कारखानेमें मुझे भर्ती करा दिया। इस समयतक पड़ोसकी एक लड़कीसे मेरी दोस्ती जम चुकी थी जिससे काम शुरू करते ही मैंने शादी कर ली।

पढ़नेसे ज्यादा मेरा मन काममे लगा। काम भी कुछ दिलचस्प था। इंजन बनाना होता, याने पुरजे जोड़कर इकट्ठे करने होते, फिट करने होते। जब मैं यह काम करता तो लगता कि मैं एक ताकतको जन्म दे रहा हूं जो सैकड़ों गाड़ी खींचेगी, हजारों यात्रियोको एक जगहसे दूसरी जगह ले जायगी।

काम करनेसे पैसे हाथमें आने लगे तो मैं सिगरेट पीने लगा और कुछ महीनोमें ही मैंने अपने पुराने साथी सिगरेट पीनेवालोको पीछे छोड़ दिया। रोज दस-पंद्रह सिगरेट अपनी पीता और जो दोस्तोसे मिल जाती वह भी पी डालता। नतीजा यह हुआ कि मेरा हाजमा खराब रहने लगा। कभी पेट फूल जाता, कभी दस्त होने लगता। कभी आव आने लगता। पेशावमे जलन मालूम होती। इन सबने मिलकर मेरे जीवनके आनंदको सुखा दिया। मैं जो हमेशा हंसता रहता, मायूस रहने लगा।

ओ० टी० आर०का अपना यहां बहुत अच्छा अस्पताल है। मैं अपनी तकलीफोसे निजात पानेके लिए बड़ी आशा

लेकर वहांके डाक्टरके पास गया। डाक्टरने मेरे पेटको इधर-उधरसे टटोलकर देखा, जैसे किसी मशीनको उलट-पुलट रहे हों और जब वे ऐसा कर रहे थे तो मुझे लगा कि कोई बेजान चीज
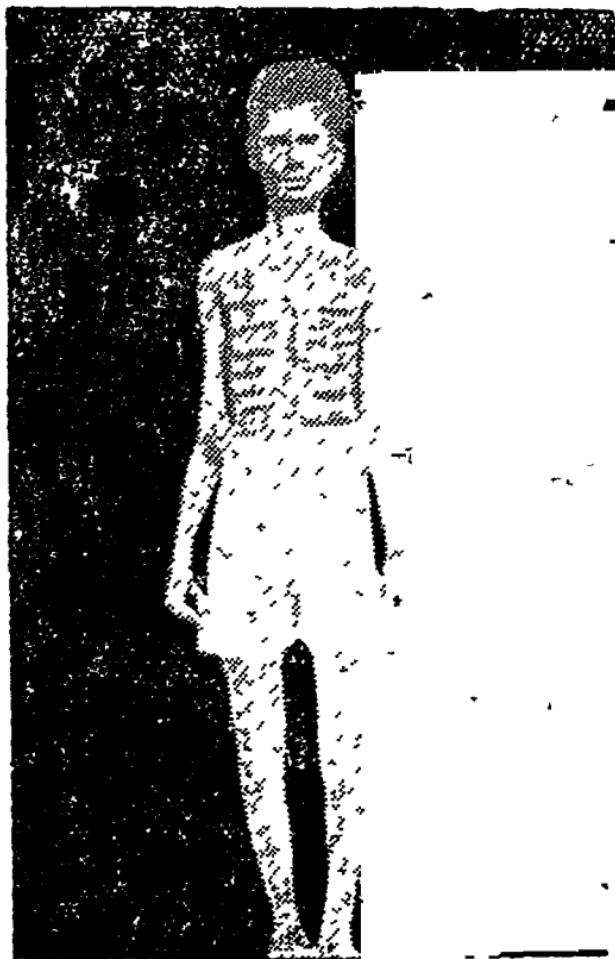
लेखक : चिकित्साके पहले

मुझे इधर-उधर करनेकी कोशिश कर रही है। दो मिनटमें उन्होंने दवा लिख दी। जिसे मैंने दवाखानेकी खिड़कीपर घंटों खड़े रहकर लिया और पीने लगा। यह क्रम तीन सप्ताह चला। मेरी हालतमें सुधार न होनेपर डाक्टरने सूइयां भी लगानी शुरू कर दी थीं। पर न मिक्श्चरने काम दिया न सूइयोंने। आखिर मैंने यह

समझकर कि मुफ्तकी दवा कोई काम नही करती दूसरे डाक्टरके पास गया। पर इससे भी कुछ लाभ न हुआ। फिर होमियो-

लेखक : चिकित्साके बाद
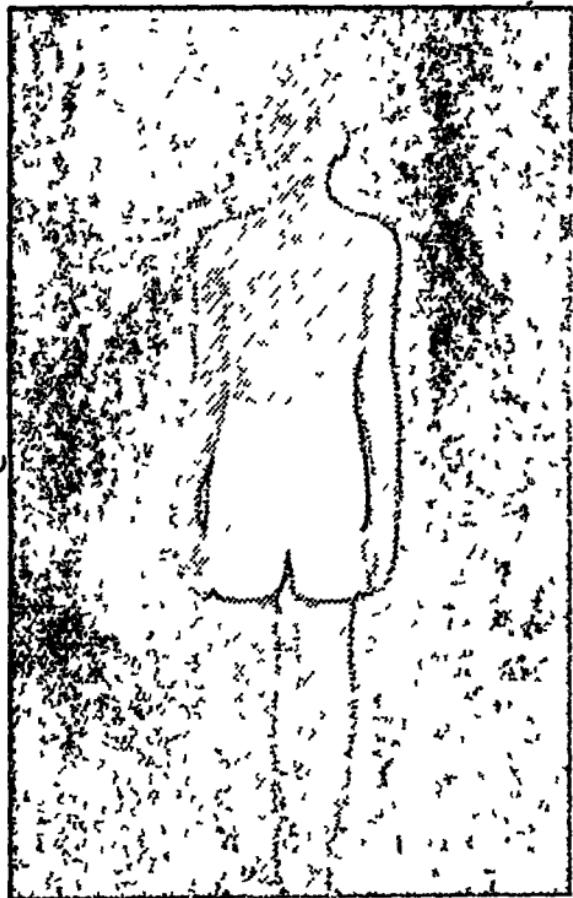
पैथके पास गया पर उसकी गोलियोने भी कोई फायदा नही पहुंचाया। वैद्यजीकी दवाएं भी मैने कुछ दिन आजमायी, पर सब बेकार। अब मैंने दवा बंद कर दी। दवा कुल मिलाकर आठ-नौ महीने की होगी। दवासे काफी निराश हो चुका था उसपरसे विश्वास भी उठ चुका था, फिर क्योकर दवा गले उतरती।

मेरी हालत धीरे-धीरे खराव होती ही गई। काम करना दूभर हो गया। मैंने छुट्टी ले ली और घरपर बेकार पड़ा रहने लगा। सोचिए उस नौजवानकी मानसिक हालत, जिसकी नौकरी चली गई हो और तंदुरुस्ती बर्वाद हो गई हो।

अव मेरी हालत यह थी कि खाना खाना मुश्किल हो गया था। खाता तो पेट फूल जाता, पेटमें जोरोंसे दर्द होने लगता। कब्ज बराबर बना रहता। ऐसी हालतमें मैं सिर्फ थोड़ा दूध पीकर रहता।

इस वक्त मेरे घरवाले मेरी जांचके लिए मुझे फिर एक डाक्टरके पास ले गए। उन्होंने मेरे पेटका एक्सरे लेनेकी राय दी। इसके लिए मुझे लखनऊ ले जाया गया। एक्सरेसे पता यह चला कि मेरे आमाशयमें घाव हो गए हैं और आंतोंमें सूजन आ गई है। जांचका यह नतीजा देखकर डाक्टरने निराशा प्रगट की और कहा मेरा बचना मुश्किल है। मुझे मरनेके लिए छोड़ दिया गया।

ऐसी दशामें मेरे एक दोस्तने कुदरती इलाज आजमानेकी राय दी। इस इलाजसे वे खुद स्थानीय आरोग्य-मंदिरसे फायदा उठा चुके थे। वे मुझे वहां ले गए। वहांके चिकित्सकने मेरे रोगका सारा इतिहास बड़े धैर्यके साथ प्रेमसे सुना। सारी बातें बतानेमें मुझे कोई घंटा भर लगा होगा। इसके बाद उन्होंने मेरी अपने तरीकेपर जांच की और इसके बाद बतलाया कि मेरे स्वस्थ हो जानेमें कोई शक नहीं है। सवाल सिर्फ वक्तका है—वह चार-छः महीने लगाना होगा। जान मिले तो वक्तकी क्या बात है, मुझे बड़ी खुशी हुई। महीनों बाद मेरे मुंहपर मुस्कराहट आई। फिर चिकित्सकने बतलाया कि भोजनमें ज्यादा संयमसे काम लेना होगा। जब कुछ खाया ही नही जाता

तो संयमका सवाल ही क्या था। मैं तो उत्सुक था जाननेको कि मुझे चिकित्सक चिकित्सा क्या बताते हैं। उन्होंने मुझे पहले थोड़ेमें कुदरती इलाजके सिद्धांत समझाए। फिर मेरे लिए नुस्खा लिखा कि दिनभरमें तीन-चार सेर पानी जरूर पीओ, रोज एनिमा लो और दिनभरमें चार बार लौकी, तुरई, परवलका सूप और मौसमीका रस एक-एक पावकी मात्रामें लो। पेड़ूपर ठंडी मिट्टीकी पट्टी भी रखनेका आदेश हुआ।

चार-पांच दिन बाद पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टीके बजाय कपड़ेकी गीली पट्टी लपेटकर ऊपरसे ऊनी कपड़ा लपेटनेको कहा गया। यह बंधन दिनमें दो बार मैं आध-आध घंटेके लिए लगाता।

रसाहार और उपरोक्त चिकित्साक्रम एक महीने चला। इतने समयमें पेशाबकी जलन चली गई, पेटका दर्द और फूलना भी कम हो गया और खास फायदा यह हुआ कि पेटमें हर वक्त जो हवा भरी रहती थी, किसी तरह निकलती न थी, वह खुलकर निकलने लगी, जिससे पेट काफी हलका मालूम होने लगा।

अब रसके बदले मुझे थोड़ा-थोड़ा दूध दिया जाने लगा। शुरूमें आध पाव दूध भी पचा सकना कठिन प्रतीत होता। पर धीरे-धीरे एक महीनेमें मैं एक सेर दूध लेने लगा, दूसरे महीनेके अंततक मैं तीन सेर दूध पचाने लगा। अब मुझमें बलका संचार हो रहा था। जहां मैं हर वक्त लेटा रहता था वहां अब थोड़ा चलने-फिरने लगा। तीसरे महीनेके अंततक तो मैं खुद ग्वालेके घर जाकर दूध लाने लगा और तीन-चार मील रोज टहलने लगा।

चौथा महीना शुरू होनेपर दूध कम करा दिया गया और दोपहरको दलिया दिया जाने लगा। मैं सवेरे-शाम दो सेर दूध लेता और दोपहरको दलिया। मेरी भूख बहुत तेज हो गई थी और रोगके सारे लक्षण चले गए थे। अब मुझे दोपहरको रोटी,

तरकारी और शामको दलिया तरकारी बतायी गयी और सबेरे आवसेर दूध । नमक अब भी बंद था । इसे साधारण भोजन कहना चाहिए । मुझे अच्छे हुए चार महीने हो गए पर मैं अब भी यही भोजन करता हूं । फल मिल जाता है तो खा लेता हूं वरना मेरे लिए इससे सस्ता और बढ़िया खाना सोच सकना भी मुश्किल है । इसी खानेपर मेरा वजन चार महीनेमें पैंतीस पौंड बढ़ा है । जैसी आज मेरी तंदुरुस्ती है वैसी कभी नहीं थी । ११२ पौंडसे मेरा वजन कभी बढ़ा ही नहीं था और न इतनी ताकत ही कभी मालूम होती थी । मैंने कारखानेका काम फिर शुरू कर दिया है जिसे मैं बड़े उत्साहसे और बखूबी कर पाता हूं ।

सारी चिकित्सामें मेरे भोजनमें जो खर्च हुआ हो वह तो हुआ पर चिकित्साके नामपर एक पैसा भी खर्च नहीं हुआ । चिकित्सालय मेरे घरसे नजदीक ही है । जब मैं जरूरत समझता आदमी भेजकर आगेका कार्यक्रम लिखवा मंगाता फिर ताकत आनेपर तो मैं खुद वहां जाने लगा । वहांके चिकित्सकके मुस्कराते चेहरेको देखनेको मेरी तबियत लगी रहती, जिसने मेरे मुर्दा मनमें आशा भरकर और उत्साह दिला-दिलाकर वह कार्यक्रम पूरा करवाया जो आज लोगोंको सुनानेपर असंभव-सा प्रतीत होता है ।

सिगरेट मेरी छूट चुकी है और भी बहुत-सी बुरी आदतें, जिन्हें मैं पाले हुए था और जिनका जिक्र न करना ही अच्छा है, मैं पूरी तौरसे छोड़ चुका हूं । अब मैंने चिकित्सकसे आसन करना भी सीख लिया है । सबेरे खूब टहलता हूं, आसन करता हूं, भोजन सादा करता हूं । मेरी जिंदगीमें खुशीने जैसे अपना डेरा डाल लिया है ।

—एल्फ्रेड बलवंत विक्टर

: १८ :

मलेरियाका असर

सन् १९४३मे मै व्यापारिक कामसे आसाम गया था। वहां दो महीने रहा। आर्थिक दृष्टिसे फायदा भी हुआ। पर वहासे मै एक ऐसा रोग लगा लाया कि जिसका निदान कोई डाक्टर, वैद्य या हकीम न कर सका। और अंतमें वह गया भी विना निदानके ही।

आसाममें पहले मुझे मलेरियाने पकड़ा। वहांकी यह आम वीमारी है। प्राय: प्रत्येक जानेवालेको भी इसका प्रसाद मिल ही जाता है। मुझे भी मिला। वहा जितनी आम यह वीमारी है उतनी ही साधारण इसकी दवा। मलेरिया दिखाई दिया कि कुनैन शुरू हुई। मैने भी ली और उस वक्त सात-आठ दिनमे मै अच्छा हो गया। मलेरिया तो गया पर मुंहसे थूक ज्यादा आने लगा। पांच-सात दिन ही वीते होंगे कि फिर मलेरिया आया। फिर कुनैन चली। मलेरिया गया पर थूक और ज्यादा आने लगा। मै घर लौट आया।

यात्रा तो सकुशल समाप्त हुई पर घर आते-आते मलेरियाने फिर धर दवाया। कुनैन दी गई और मलेरिया फिर गया। पर थूककी तेजी वंद न हुई। दिनभर आता रहता। सोनेपर ही वंद होता। तीन महीने एक वैद्यकी दवा करनेसे थूकमें थोड़ी-सी कमी आई।

पर एक साल वाद फिर थूकका दौरा शुरू हो गया। उसी दवासे फिर कुछ दवा। लेकिन अव थूकके दौरे जल्दी-

जल्दी आने लगे। दूसरी बार छः महीने बाद आया था फिर तीन महीनेपर आया। धीरे-धीरे वैद्यजीकी दवा बेकार हो गई और थूककी तेजी स्थायी हो गई।

लेखक : रोगकी अवस्थामें

पाठक शायद मेरी मुसीबतका अंदाज नही कर सकते। कही भी जाना-आना मुश्किल हो गया। बैठता भी, तो थूकता रहता, जिससे मेरे पास लोगोंको आनेमे हिचक होती थी। खाना मुश्किल था। खाऊं या थूकूं यही सवाल रहता। किसी तरह दूध या फल-तरकारीका रस झटसे पी लेता और जीता रहता।

जीवन दूभर हो रहा था। मुंहसे कोई एक सेर थूक रोज निकल जाता। ऐसी दशामें मै गोरखपुरके सबसे बड़े एलोपैथ

डाक्टरके पास आया। उसने मुझे देखा और कहा कि मैं इस रोग-का निदान नहीं कर पा रहा हूं। निदानके विना दवा क्या दूं?
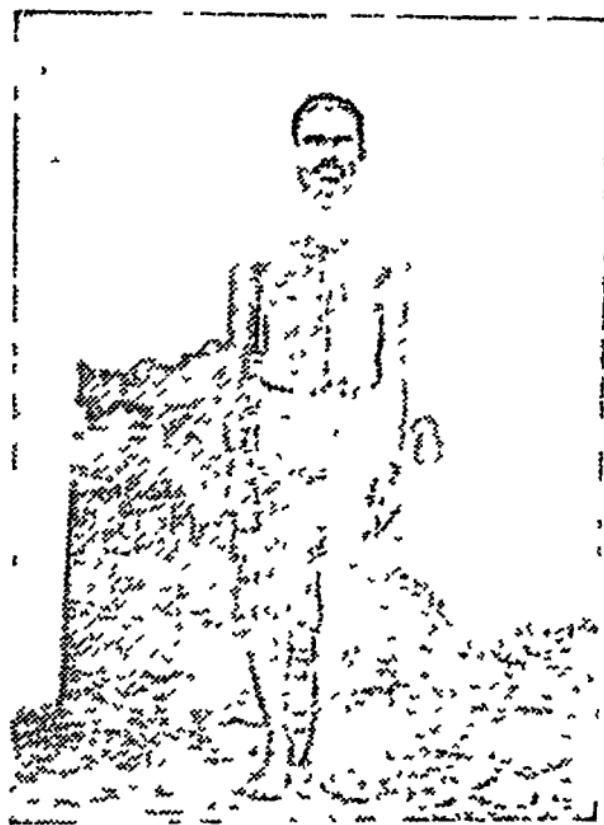
लेखक : स्वस्थ होनेके बाद

इस अवस्थामे मुझे गोरखपुरके आरोग्य-मंदिरका पता चला। वहां जाकर चिकित्सकसे वातें करनेपर समझमें आया कि सब रोग एक है, और सबकी चिकित्सा एक है। मालूम हुआ कि जो मलेरिया कुनैनके मार्फत गया समझा गया उसका विष शरीरमे रहकर यह उपद्रव कर रहा है। यदि उसे दूर कर दिया जाय तो रोग चला जाय।

बात सही लगी और मैंने प्राकृतिक चिकित्सा शुरू की। मैं जो खाता था अर्थात् दूध-फल, वही शुरूमे चलने दिया गया।

पेड़नहान, मेहनस्नान, मालिश तथा टहलना और जोड़ दिया गया। फिर मुझे भोजनमें केवल खीरेका रस मिलने लगा। मैं केवल खीरेके रसपर ४३ दिन रहा। खीरेका रस दिनभरमें चार वार सवा-सवा पावकी मात्रामें लेता। यही मेरा भोजन था।

पाठक समझते होंगे कि मैंने इस भोजनसे कमजोर होकर चारपाई पकड़ ली होगी। पर यह वात नहीं थी। खीरेके रससे मुझे अधिक स्फूर्ति प्रतीत होती थी। सवेरे-शाम मैं दो-दो मील टहलता और दिनभर कितावें पढ़ता। हां, इस रसाहारके आखिरी दिनोंमें टहलना कम हो गया था। पर किसी तरहकी और शिकायत नहीं थी। पढ़ना जारी रहा।

अव थूककी वात सुनिए। पहले वह जहां गाढ़ा-गाढ़ा आता था वह धीरे-धीरे पतला हुआ। फिर कुछ समयके लिए किसी वक्त रुका, फिर दो-एक दिनके लिए रुका। अंतमें जव साधारण हुआ तव इसके पहले एक वार खूव वढ़ गया। इतना कि मुझे परेशानी होने लगी। क्योंकि इसके कारण नींद भी चली गई थी।

दुग्ध-कल्प

थूकका आना पूरी तरह सुधरनेपर मुझे दूध दिया जाने लगा। दूध-कल्प छत्तीस दिन चला। पहले दो दिन तीन-तीन घंटेपर एक-एक पाव दूध मिला। फिर एक-एक घंटेपर इतना ही दूध लेने लगा। यहांतक कि साढ़े पांच सेर दूध रोज पीने लगा। इच्छा होनेपर पानी भी पीता। दस दिन वाद तो भूख इतनी वढ़ी कि हर घंटे पावके वजाय आध सेर दूध लेना पड़ता। इस प्रकार मैं रोज पांच सेरसे अधिक दूध पीने

लगा। इच्छा होनेपर पानी भी पीता, सवेरे उठकर और रातको सोते वक्त तो पानी जरूर पीता।

दूध बढ़नेपर शरीरपर मांस चढने लगा। सुर्ख तो बदन पहले ही हो गया था। खीरेके रसने त्वचाको सरक्त और कांतिमान बना दिया था। दूधका रसायन पाकर शरीरमे शक्ति दौड़ गई।

अब टहलना शुरू किया। सवेरे कोई छ: मील टहलता। दूधके बाद तरकारी, फल, दूध चला। फिर उन्नीस दिनतक दोपहरतक दूध और शामको रोटी-सब्जी ली। अतमे साधारण भोजनपर आ गया। इस विधिसे मेरा थूक ही नही गया शरीर बिल्कुल नया हो गया। पहले दांतोमें भी दर्द होता था, मसूड़े फूले रहते थे। वह सब कष्ट खत्म हुआ। मै कह सकता हूं कि मैंने नया शरीर ही नही, नया जीवन पाया है।

—श्रीहरिलाल आर्य

: १९ :

जीर्ण ज्वर

कुदरती इलाजसे मेरा कोई परिचय नहीं था। न मैं जानता था कि कुदरती इलाज नामका कोई इलाज है, और न किसीको इसे करते-कराते मैंने देखा ही था। कुदरती इलाजके संपर्कमें मैं एकाएक ही आया। जान-समझकर नहीं, इसके गुणोंसे परिचित होकर नहीं, पर इसलिए कि मेरे लिए तंदुरुस्ती पानेकी उम्मीद दिलानेवाला कोई रास्ता रह ही नहीं गया था।

रोग मेरा ज्वर था जो तीन महीनेसे मुझे छोड़ता ही नहीं था। सवेरे १०१°-१०२° डिगरी रहता था और यही शामको बढ़कर १०३°-१०४° डिगरी हो जाता था। दो महीनेसे नींद बिल्कुल नहीं लगती थी, रातभर जागता रहता था। मुंहका स्वाद फीका लगता था, भूख नही थी, पर खानेकी इच्छा थोड़ी होती थी। खानेपर भोजनमें स्वाद कुछ भी नहीं आता था। ज्वर जबसे था, डाक्टर-हकीमोंकी दवा हो रही थी, नहाना सबने बंद कर रखा था, अतः जगह-जगह खाज आती थी, फुंसियां हो गई थी और खुजलाते-खुजलाते जिल्द छिल गई थी।

धीरे-धीरे मेरे जन्मस्थान देवरियाके सभी डाक्टर, वैद्य, हकीमोंकी दवा हो चुकी, किसीसे कोई लाभ नही हो रहा था और जीवनके प्रति मेरी चिंता बढ़ती जा रही थी।

यों बचपनसे ही मेरा स्वास्थ्य बहुत बढ़िया नही था। मेरे पैदा होनेके दो दिन बाद ही मेरी माताकी और तीन

साल वाद मेरे पिताकी मृत्यु हो गई थी। मेरे दादाजीने जिस किसी तरह मुझे पाला था। कोई अमीर घरका भी नही हूं। जातिका लुहार, चाकू-छुरी वनाना मेरा काम था, यो मेरे यहा अधिकतर चांदीके वाजूवंद वनानेका कार्य होता था। काम करनेके अधिकतर समयमे मै आधसेर भारी हथौड़ेसे, चादीको गलाकर वनाए हुए पत्तरोको वढानेके लिए पीटा करता था और वाजूवद वन जानेके वाद उसको चमकानेके लिए आगमे पकाना भी मेरे सिपुर्द था। कौन जानता था कि वाजूवंद तो चमकते जा रहे है, पर मेरी चमक लेते जा रहे है।

मेरे रोगको ज्यादातर डाक्टर तो ज्वर ही वताते थे, पर एक हकीमने वताया था कि पेटकी आतोमें गिल्टी हो गई है। और जव मुझे देवरियामे कोई अच्छा नही कर सका तव मुझे गोरखपुरके एक रिटायर्ड सिविल सर्जनको, जिनको गोरखपुरका सवसे वड़ा डाक्टर समझा जाता था, दिखाया गया। उन्होने भी हकीमजीकी तरह पेटकी गिल्टियां ही वताई पर कहा कि ये गिल्टियां यक्ष्मा (टी० वी०)की है और राय जाहिर की कि मेरा वचना मुश्किल है, दवा करना वेकार है ! फिर भी उन्होने दवा लिखी। और दवा खरीदी भी गई, पर उनके निराशा प्रकट करनेकी वजहसे दवाके इस्तेमाल करनेको मेरा जी नही चाहता था। एक दूसरे डाक्टरको दिखाया तो उन्होंने वताया कि वायां फेफडा नीचेकी ओर खराव हो गया है। मैने अपने फुफेरे भाईको, जो मेरे साथ ही मेरे घरपर रहता था, फेफड़ेकी वीमारीसे मरते देखा था। इन डाक्टर साहवके मेरा फेफड़ा खराव वतानेपर, मै वहुत डरा।

इसी दशामें मुझे गोरखपुरके आरोग्य-मदिरका पता लगा, जहां मै चिकित्साके लिए लाया गया। यहाके चिकित्सकने

मुझे देखकर बताया कि मेरे फेफड़ेमें कोई खराबी नहीं है

लेखक : चिकित्साके पहले

और पटमें भी मामूली खरावी है जो आसानीसे अच्छी हो सकती है। मुझे आशा वंधी और मेरे घरवालोंके घवराए हुए दिलको तसल्ली हुई। मै यहां रहकर चिकित्सा कराने लगा।

चिकित्सामें सवेरे मेरे पेड़ूपर आध घंटेके लिए गीली

मिट्टी रक्खी जाती, दस बजे सारे शरीरको ठंडे पानीके भीगे तौलिएसे अच्छी तरह पोंछा जाता, और शामको चार बजे मेरी छातीके चारों ओर गीले पानीसे भीगा कपड़ा लपेटकर
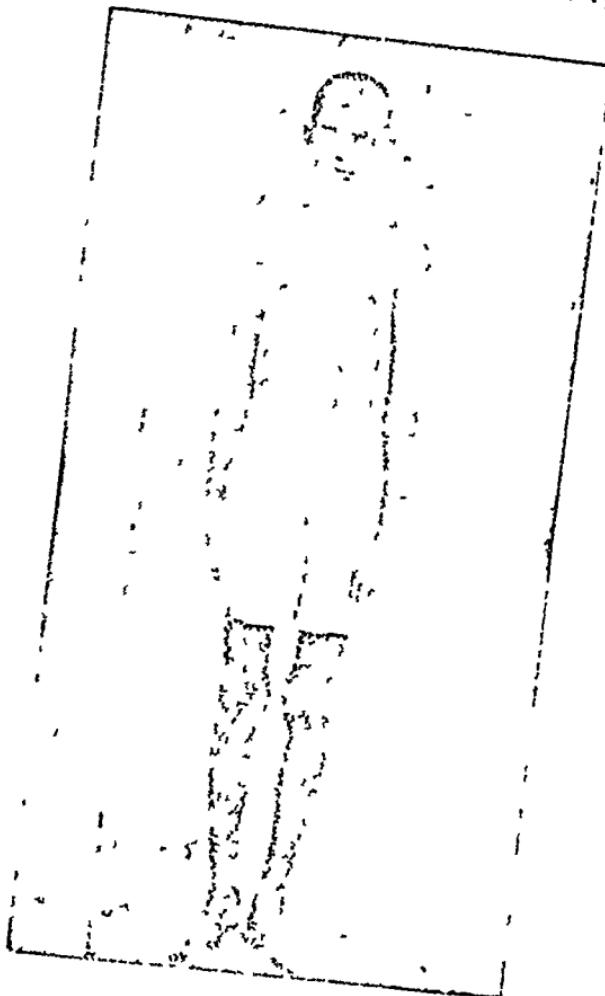
लेखक : चिकित्साके बाद

ऊपरसे ऊनी कपड़ा लपेट दिया जाता। मैं खूब खुली जगहमें रक्खा गया, जहां मुझे खूब हवा और प्रकाश मिलता। आरामसे

में लेटा रहता। डाक्टर-वैद्य तो मुझे दोनों वक्त रोटी-तरकारी और दो बार गरम करके चीनी मिलाया हुआ दूध पिलाते आए
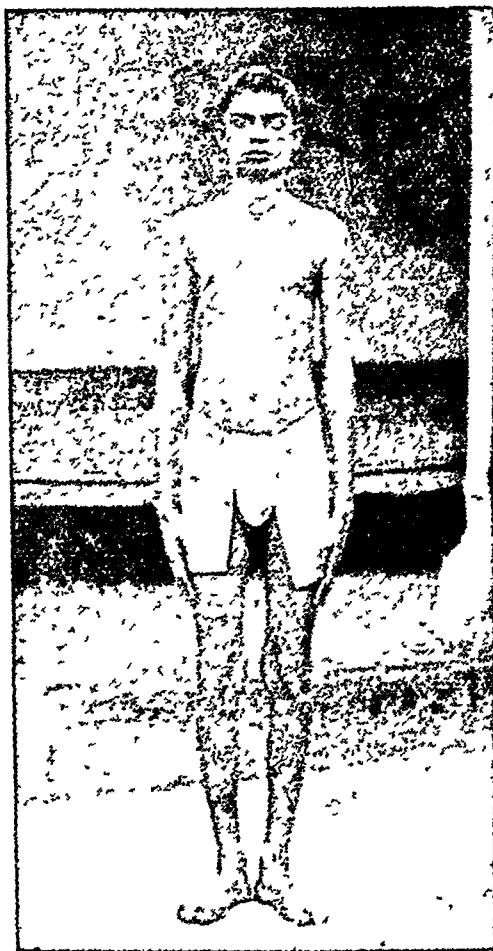
लेखक : चिकित्सा समाप्त होनेके पांच महीने बाद

थे, पर यहां भोजन हल्का और कम कर दिया गया। एक सप्ताहतक सवेरे मुझे पावभर गायका कच्चा दूध और कोई

फल मिलता। दोपहरको चोकरसमेत आटेकी रोटी और हरी तरकारी। शामको मैं पावभर दूधमें पावभर पानी मिलाकर और उसे गरम करके दो वारमें पीता। दूसरे सप्ताह रोटी विल्कुल वंद कर दी गई और तीसरे सप्ताह केवल फल दिए गए। चौथे सप्ताह फल-दूध और पांचवें सप्ताह में फिर पहले सप्ताहवाले भोजनपर लाया गया, जो वरावर चलता रहा। हां, अव शामको दूधमें पानी नही मिलाया जाता था और साथमें कुछ फल भी होते थे।

इस चिकित्साक्रमसे एक सप्ताहमे ही मेरा ज्वर सवेरे और शाम एक-एक डिगरी कम हो गया। मेरा शरीर गीले तौलिएसे पोछनेके वजाय मुझे अव नहलाया जाने लगा। ठंडे पानीसे मुझे मल-मलकर नहलाया जाता। पहले दिन मेरे शरीरसे मैल इतना उतरा, जैसे मैंने उवटन लगाया हो। नहानेके वाद मेरा शरीर मुझे वड़ा हल्का लगा और कुछ ताजगी मालूम होने लगी। धीरे-धीरे एक महीनेमें मेरा ज्वर चला गया। पेट मेरा दोनो वक्त अपने आप साफ होता था। इसलिए मुझे एनिमा लेनेकी कभी जरूरत नही पड़ी।

ज्वर चले जानेपर मैंने थोड़ा-थोड़ा टहलना आरंभ किया। मुझे कभी-कभी मालिश भी दी जाने लगी। कुछ ताकत आनेपर मुझे योगासन सिखाए गए। एक महीने वाद ही चिकित्सालयसे मुझे छुट्टी मिल सकती थी पर मैं अपनी कमजोरी दूर करनेके लिए यहा एक महीने और ठहरा जिससे मेरा वजन जो चिकित्सा शुरू होनेके पहले सिर्फ अस्सी पौंड था वढकर पचासी पौंड हो गया।

दो महीने वाद मैं अपने घर चला आया। घरपर मेरा भोजन था सवेरे दूध और कोई मौसमी फल, दोपहर और शामको

रोटी और तरकारी। मैंने सवेरेका टहलना जारी रखा। कुछ-कुछ काम भी करने लगा। धीरे-धीरे शरीर पुष्ट हो गया। पांच महीने बाद मैंने अपना वजन लिया तो ९८ पौंड निकला। इतना वजन मेरा कभी नहीं हुआ था और न कभी मैंने अपनेको इतना स्वस्थ ही पाया था।

—श्रीत्रिवेणीप्रसाद

: २० :

मुंहसे खून

मैं तेरह वर्षकी उम्रसे बराबर किसी-न-किसी रोगकी शिकार रही। इस उम्रमें मुझे हर आठवें दिन कै-दस्त आने लगते जो एक अंग्रेजी दवासे बंद होते। सालभरतक यह सिलसिला रहा होगा कि मुझे जोरोंसे चेचक निकल आई। यह बहुत कष्टके बाद डेढ़ महीनेमें ठीक हुई। इसके बाद दस्तका आना बंद हो गया पर कमजोरी गई नहीं थी कि मुझे मीयादी बुखारने आ घेरा। उससे छुट्टी मिली तो आए दिन जुकाम होने लगा, साथ-साथ खांसी भी आती। यह ठीक होती तो पेटमें दर्द उठता। इसी तरह मैं गिरती-पड़ती चली जा रही थी कि मुझे मलेरियाने पकड़ लिया। इसकी बहुत दवा की, बहुत-सी कुनैन पी, पर अंतमें कुनैनके इंजेक्शन लेनेसे इससे पिंड छूटा। मलेरियासे तो छुट्टी मिली पर हलका-सा बुखार रहने लगा। इसी बीच मुझे दूसरा बच्चा पैदा हुआ तो लोगोंने इस ज्वरको प्रसूतिका ज्वर बता दिया। इससे मुक्ति तो मिली नहीं एकाएक मुझे बड़े जोरोंसे सर्दी-जुकाम हो गया और जब उसके वेगमें थूकके साथ खून आने लगा तो मैं और मेरे घरवाले बहुत घबराए। तुरंत अच्छे-अच्छे डाक्टर-वैद्योंको दिखाया गया तो उन्होंने कहा कि इसको तो यक्ष्मा होनेका डर है, इसे पहाड़पर ले जाओ। मेरे पीहरमें कई आदमी यक्ष्मासे मर चुके थे अतः यक्ष्माकी संभावना लोगोंको अधिक लगी और मेरे पतिके एक वैद्य मित्रने तो उन्हें साफ कह दिया कि मुझे यक्ष्मा हो गया है, साधारण

डाक्टर-वैद्योंसे चिकित्सा कराना व्यर्थ है। मेरी चिकित्सा किसी यक्ष्माके चिकित्सालयमें पहाड़पर ही होनी चाहिए। यह सुनकर हम लोग चिंतित अवश्य हुए पर हताश नही। संयोगकी वात हमे गोरखपुरके आरोग्य-मंदिरका पता लगा

लेखिका

और हम लोग वहां गए। सोचा गया जरा वहां भी दिखा लिया जाय और वहांकी चिकित्सा भी समझ ली जाय। वहांके चिकित्सकने मेरी परीक्षा की तो कहा कि न इन्हें यक्ष्मा है और न इन्हे यक्ष्मा हो ही सकता है। यह सुनकर हम लोगोंको वड़ी आशा हुई और मुझे याद है कि मेरी जो सहज मुस्कराहट

मुझसे इधर महीनोसे रूठ चुकी थी वह वापस लौटी। पर यह भी लगा कि पहलेके अन्य चिकित्सकोकी तरह ये भी केवल आशा न दिलाते हों पर चिकित्सकने मेरी चिकित्साके प्रति पूरी सावधानी रखनेपर भी मेरे रोगके प्रति जो लापरवाही दिखाई उससे हमे एक सप्ताहमें ही पूरा विश्वास हो गया कि चिकित्सक मेरे रोगको बहुत साधारण समझते है और उनकी चिकित्सामे मेरा रोग ऐसा ही साबित भी हुआ।

अब आप यह सुननेको उत्सुक हो रहे होगे कि मेरी वहापर क्या चिकित्सा हुई। लीजिए वह भी सुनिए। मुझे वहांपर सवेरे-शामको कटिस्नान कराया जाता और उसके बाद थोडा-थोडा टहलने-घूमनेको कहा जाता। चिकित्सालयके चारो ओर बहुतसे हरे-भरे खेत है और उनके बीच छोटी-छोटी सुदर पगडंडियां। मुझे वहा नंगे पैर घूमना और खेतोके बीचमे जाकर बैठना बहुत अच्छा लगता। मै घूमती कम, पर मनोरम दृश्योके बीच अपना बहुत-सा समय बिताती और दिनभर लेटकर आराम करती। चिकित्सालयमे प्राकृतिक चिकित्सा-संबंधी बहुत-सी पुस्तके भी थी और पत्र-पत्रिकाएं, उन्हे कभी-कभी पढ़ती। इस प्रकार मेरा दिन बहुत आसानीसे कटता।

भोजनमे मुझे सवेरे खानेको मिलते फल और दोपहर और शामको चोकरसमेत आटेकी रोटी और उबली हुई हरी तरकारिया। पहले मेरा भोजन था दाल-भात और आलूकी तरकारी। एक-दो दिन तो यह नया भोजन थोडा अखरा पर फिर मुझे वही भोजन बहुत रुचिकर मालूम होने लगा। इससे मै इस खोजमे लगी कि आखिर इतनी स्वादिष्ट तरकारियां बनाई कैसे जाती है जो आध सेरतक खा लेनेपर भी तृप्ति नहीं

होती। इससे मेरा थोड़ा वक्त चिकित्सालयके रसोईघरमें भी कटने लगा।

एक सप्ताह इसी भोजनपर बीता होगा कि मुझे तीनों वक्त यानी सुवह, दोपहर और शामको केवल फल दिए जाने लगे। फलोंमें उस समय आते थे पपीते, खरबूजे और खीरे-ककड़ी। यही मुझे मिलते। पहले भोजनसे तो पेट ठीक साफ होने लगा था पर इस भोजनसे शौच अपने आप नहीं होता। इसके लिए एनिमाका प्रयोग होने लगा।

फलाहार करते चार दिन बीते होंगे कि मेरी तवीयत बहुत कुछ सुधर गई। थूकके साथ खून आना चिकित्सा शुरू होनेके तीसरे दिन ही बंद हो गया। जुकाम चला गया, खांसी कम हुई और सवेरेसे ही जो वदन टूटता रहता था उसमें वहुत कमी हुई। पर ग्यारहवे दिन मेरे बदनमें इतने जोरका दर्द पैदा हुआ कि मैं वेचैन हो उठी। यह शाम होते-होते इतना बढ़ा कि वर्दाश्तके वाहर हो गया। इसे दूर करनेके लिए मुझे शरीर-ताप इतने गरम पानीसे भरे आदमकद टबमे आध घंटेतक सुलाया गया। टबमे लेटते ही दर्द कम होने लगा और बीस मिनटके अंदर दर्द विलकुल चला गया। बदन पोंछकर कपड़े पहनकर मैं सोई तो तुरंत ऐसी नींद आई कि फिर जाकर दस घटे वाद ही मेरी नींद खुली। नींद खुलनेपर मैं अपनेको सदासे अधिक स्वस्थ पा रही थी।

फलाहार तीन दिन और चला और फिर मुझे फलोंके साथ गायका कच्चा दूध भी मिलने लगा और फिर एक सप्ताह वाद मेरे भोजनका क्रम हुआ सवेरे फल-दूध, दोपहर और शाम-को रोटी-सब्जी। टहलना-घूमना भी जारी रहा। जारी ही नहीं रहा वह वहुत वढ़ गया; क्योंकि अव मुझमें अधिक शक्ति

ही नहीं आ गई थी, मैं अपनेमें भरपूर स्फूर्तिका भी अनुभव कर रही थी। इस प्रकारकी कुल एक महीनेकी चिकित्सामें मेरे रोगके सारे लक्षण एक-एककर चले गए और मेरा शरीर एकदम नया-सा लगने लगा। उत्साह-उमंग जो मुझसे बहुत दिनोंसे विछुड़े हुए थे मुझसे फिर आ मिले। और मैं फिर अपने घर आ गई।

मुझे चिकित्सालयमे रहनेकी वजहसे एक लाभ और हुआ। चिकित्सालयमे जब कभी भात खानेको मिलता था वह होता था पूर्ण चावलोंका। इसके लिए वहां एक काठकी चक्की थी जिसमे धान दले जाते और कन (चावलके ऊपरका लाल पर्त) निकाले वगैर उनसे केवल भूसी अलग की जाती। ये चावल कुछ भारी अवश्य होते पर खानेमें बहुत ही स्वादिष्ट होते और पुष्टिकर बताए जाते। घर आकर ऐसी मैंने कई चक्कियां बनवाईं और मजूरिनें रखकर चावल दलाने लगी। वह राशन-का जमाना था। लोगोंको कठिनाईसे चावल मिलते थे। कुछ लोग इन पूर्ण चावलोंको पसंद करने लगे और इनके गुणों-की बात फैली तो इन चावलोंके ग्राहक बहुत बढ गए। इस प्रकार लोगोंको स्वास्थ्यप्रद और पूर्ण चावल मिलनेके साथ मुझे यथेष्ट आर्थिक लाभ भी हुआ।

यदि मैं पाठकोंको और खास तौरसे अपनी बहन पाठिकाओं-को एक बात और न बताऊं तो यह कहानी अधूरी ही रह जायगी। मुझे पहले कमरदर्दके साथ मासिककी भी शिकायत थी। वह समयपर न होता, मात्रामें कम होता और बदरंग होता। सभी शिकायतें मेरे मूल रोगके साथ इस प्रकार चली गईं जैसे मैंने इन्हींकी चिकित्सा कराई हो।

मैंने रहन-सहन, खान-पानकी जो रीति चिकित्सालयमें

सीखी थी वह मैंने घर आकर भी जारी रखी और मुझे उसका पुरस्कार भी मिला। इस वार मुझे जब बच्चा पैदा हुआ तो कहना चाहिए कि विना कष्टके हुआ। प्रसवकी पीड़ा नहींके समान सहनी पड़ी। पीड़ा आरंभ होनेके पंद्रह मिनटके अंदर बच्चा पैदा हो गया और यह बच्चा मेरे सभी बच्चोंमे अधिक स्वस्थ है। इसका स्वभाव देखकर लगता है कि विधनाने जब इसे रचा तब इसे रोना सिखाना ही भूल गए। चित्र उतारते समय यह कैमरेसे परिचय प्राप्त करनेमें लगा है अन्यथा आप भी इसका मुस्कराना और हँसना देख पाते।

प्राकृतिक चिकित्सासे जो लाभ मुझे मिला है उसका हिस्सा अब मेरे सारे परिवारको मिल रहा है। सभी अपना भोजन एवं रहन-सहन प्राकृतिक बना रहे हैं। किसी रोगके होनेपर उसके निवारणकी विधि वे मुझसे पूछते हैं और मुझे यह कहते बहुत खुशी होती है कि मेरा सुझाव बहुत बार उनके बहुत काम आता है।

—श्रीमती शकुंतला देवी

: २१ :

हैजा

पुराने रोगोकी चिकित्सामें प्राकृतिक चिकित्सा निश्चित रूपसे लाभ करती है, इसकी जानकारी प्राय: लोगोको हो गई है पर तीव्र रोगोमें अथवा महामारीमें भी प्राकृतिक चिकित्साके सीधे-सादे उपचार विना खर्चके कितने लाभकर सिद्ध होते है यह इस लेख और साथके दो पत्रोंसे जाना जा सकता है।—सपादक

वस्ती जिलेमें पिछले मई-जून महीनेमे हैजा जोरोसे फैला हुआ था। शहरमे कम पर गावोमे खूव प्रकोप था। इसके रोक-थामकी वड़ी कोशिशे हो रही थी। जिसमे खास वात थी गाववालोको हैजेसे वचावका (Cholera Preventive) इंजेक्शन लगाना। इस जिलेके डिप्टी कलक्टर श्री श्रीगोपालजी मिश्र विशेप रूपसे दिलचस्पी ले रहे थे। पर उनकी कठिनाई थी कि इंजेक्शन कम मिलते थे, और जव इजेक्शन मिलते तो उन्हे गावोमे पहुचानेको मोटरमे पेट्रोलकी कमी हो जाती। अत. यह सहायता भी मुश्किल हो रही थी। ऐसे समय दवाके अभावमे हैजेके रोगियोकी सहायताकी किसी दूसरी विधिकी तलाशमे गोरखपुर जाकर वे वहा आरोग्य-मदिरके चिकित्सक श्रीविट्ठलदास मोदीसे मिले। प्राकृतिक चिकित्सामे तो किसी दवाकी जरूरत ही नही होती। वहां तो मिट्टी, पानी, धूप, हवा ही वड़े साधन है। अत. वहासे जो विधि मिली उसके लिए पैसे-टकोंकी जरूरत न थी, न दवा

बांटनेके लिए डाक्टरकी मोटर चलानेको पेट्रोलकी। एक निहायत सीधा प्रयोग बतलाया गया। रोगीको रोगकी दशामें, गरम पानी, रोगीकी इच्छानुसार ज्यादा-से-ज्यादा पिलाते जाना, और पेडूपर मिट्टीकी पट्टी रखे जाना। प्राकृतिक चिकित्सालयसे प्राप्त यह नुस्खा डिप्टी साहबने मुझे बतलाया। वह इसलिए कि मैं जिलापटवारी एसोसिएशनका सभापति हूं, इसे वह मेरे मार्फत पटवारियोंको, और फिर जनताको बतलाना चाहते थे।

मुझे लगा कि इससे अवश्य लाभ होना चाहिए। सिसवा (बुजरुग) ग्राममें मैंने लोगोंको हैजेसे पीड़ित पाया। कै-दस्त चल रहे थे, पेशाब बंद था। कइयोंको ज्वर हो रहा था। मैंने तुरत खूब साफ मिट्टी मंगवाई, उसे कुटवाकर आटेकी तरह छनवाया और फिर ठंडा पानी मिलाकर गुंधवाया, रोटीकी तरह उसकी पट्टियां बनवाईं, जो आधा इंच मोटी, फुटभर लंबी और छः इंच चौड़ी होती थीं। मिट्टीकी ये ठंडी पट्टियां मैंने रोगियोंके उदर (नाभिके चारों ओर) पर रखवाईं और रोगियोंको गुनगुना पानी पिलवाया। मिट्टीकी एक पट्टी जब शरीरकी गरमीसे पंद्रह-बीस मिनटमें गरम हो जाती तो उसे बदल देता। इस तरह हर रोगीको दिनभरमें कोई छः-सात पट्टियां बदलनी पड़तीं। पट्टी रखते ही रोगीके कै-दस्त धीरे-धीरे कम होते गए और जो पेशाब बंद हो गया था वह मिट्टी रखनेके एकसे सात घंटेके अंदर जारी हो गया। मुझे इस गांवमें सोलह रोगी मिले थे, जिनकी चिकित्सा मैंने आरंभ की थी, उनमेंसे ऐसा कोई न रहा जिसकी चिकित्सा मैंने सुबह जारी की हो और उसे पेशाब शामतक जारी न हो गया हो। दूसरे दिन सभी रोगी चंगे थे।

मैंने अच्छे होनेपर सबको गीला भात, मांड-सा बनाकर थोड़ा खानेको दिया। वहां कोई दूसरी चीज मिलती भी न थी जो इससे ज्यादा हलकी होती। वह धान-प्रधान स्थान है, मैं उन गरीबोंको दूसरी चीज बता भी क्या सकता था?

मिट्टीकी बदौलत यह हुआ कि जिन सोलह कुटुंबोमें मृत्युकी आशंका की जा रही थी उन सभी कुटुंबोपर ये मृत्यु और भयके काले बादल हट गए। मेरा हौसला बढा। मैं डिप्टी साहबकी आज्ञानुसार इमिलियाशुमाली, पचौथ, औंधई आदि ग्रामोंमें गया और वहां भी इसी विधिसे रोगियोकी चिकित्सा करने लगा। मेरे सामने यह प्रश्न भी न था कि हैजा हुए कितनी देर हुई, रोगीकी हालत क्या है? मेरे पास तो एक ही नुस्खा था जिसे मुझे हर ऐसे रोगीपर चलाना था जिसे कहा जाय कि हैजा हो गया है। मुझे इन गांवोमें उन्नीस रोगी और मिले और सभीपर इस नुस्खेने काम किया। मुझे यह कहते खुशी होती है कि कोई भी रोगी मरा नही। गोकि रोगियोको अनेको दस्त आ चुके थे। कई तो ऐसे थे जिनको दो दर्जनतक दस्त हो चुके थे। इस संख्यासे अधिकके भी थे। ज्वर प्रायः सबको था।

अब मैं इस सस्ती और अद्भुत प्रभाववाली मिट्टीको अनेक रोगोपर आजमा रहा हूं। सबमें सफलता मिल रही है।

—श्रीपचमल्लाल आर्य

आरोग्य-मंदिर, गोरखपुर (उत्तरप्रदेश)

ता० २७-९-४८

प्रिय महाशय,

श्रीपंचमलालजी आर्य आज यहां आए थे। वे बताते हैं कि उन्होंने आपकी बताई विधिसे मिट्टीका प्रयोग हैजेके पैंतीस रोगियोंपर किया और वे सब-के-सब स्वस्थ हो गए। उनका कहना है कि आप इस चीजसे परिचित हैं। लिखनेकी कृपा करें।

श्री श्रीगोपाल मिश्र, डिप्टी कलक्टर
डुमरियागंज, बस्ती

विनीत
विट्ठलदास मोदी
संचालक

× × ×

उत्तर

श्रीरामः शरण मम

बस्ती
१२-११-४८

प्रिय महाशय,

आपका २७-९-४८का पत्र कुछ विलंबसे प्राप्त हुआ। कारण वह गल्तीसे दफ्तरके चक्करमें पड़ गया और बाहर रहनेके कारण आफिसकी भंवरसे निकलनेमें देर हो गई।

श्रीपंचमलालजीने आपसे जो कुछ कहा ठीक है। उनका लिखा लेख वापिस कर रहा हूं उसे आप सहर्ष छाप सकते है। मैं स्वयं भी श्रीपंचमलालजीकी बातोंकी जांच करने सिसवा गया था और उनके प्रयोगोंकी सफलता संतोषजनक पाई।

मैने हैजेके रोगीकी चिकित्साके लिए बतलाई आपकी तरकीब सैकडो रोगियोपर बीसियो ग्रामोमे प्रयोग की और पर्याप्त मात्रामे सफल रहा।

प्राकृतिक जीवनके—मै इसे चिकित्सा नही कहता—मेरे निजी अनुभव भी आश्चर्यजनक है, उनपर फिर कभी लिखूंगा। यहा केवल यही कहकर क्षमा-याचना करता हूं कि सोलह माससे मेरे कुटुबमे डाक्टर या दवा नही आई है।

श्रीविट्ठलदास मोदी
आरोग्य-मदिर
गोरखपुर

आपका अपना ही
श्रीगोपाल मिश्र
डिप्टी कलक्टर, डुमरियागज, बस्ती
(उत्तरप्रदेश)

: २२ :

अपेंडिसाइटिस

बचपनमें मेरा स्वास्थ्य बहुत अच्छा था। पाचनशक्ति खास तौरसे अच्छी थी। पर जवानीके शुरूमें ही मुझे बाहर ज्यादा रहना पड़ा। उस समय मुझे हमेशा हलवाईके यहां बनी चीजोंपर ही निर्भर रहना पड़ता था। तब खाने-पीनेका परहेज मैं जानता ही न था। अनजानेमें ही सही नतीजा यह हुआ कि मार्च सन् '४५में मुझे कठिन कब्ज हो गया। बिना जुलाबके पाखाना ही न होता था। भूख बंद, दिमागमें बेचैनी, मुंहका जायका बिगड़ा हुआ, जबानपर बेतरह छाले। शहरके खास डाक्टरोंका इलाज चला पर किसीने वायुविकार, किसीने रक्ताभाव, किसीने स्नायुदौर्बल्य और किसीने कुछ कहकर मुझपर अपनी दवाइयोंकी आजमायश की। आठ महीनेके अरसेमें करीब एक सौ इंजेक्शन भी लगवाने पड़े। मशहूर दवा पेंसिलिनका इंजेक्शन भी मुझे लगाया गया। डाक्टरोंसे निराश होकर मैंने एक प्रसिद्ध वैद्यकी चिकित्सा एक महीने कराई। कोई नतीजा न निकला।

अक्तूबर सन् '४५में रोगका भयंकर दौरा हुआ। डाक्टरोंने अपेंडिसाइटिस करार दिया। इस दौरेके समय खाना तो दूर रहा पानी भी नहीं पचता था। डाक्टरने मुझे छः रोजतक उपवास कराया, फिर एक सप्ताह अंगूरके रसपर रखा और प्रतिदिन साबुनके पानीका एनिमा दिलवाया। साथ ही पेंसि-लिनके अनगिनत इंजेक्शन भी दिये।

कुछ शांत हुआ। परंतु मूल शिकायत कब्ज और दिमागकी बेचैनी बनी ही रही। अब मुझे अपेंडिक्सके आपरेशनकी राय दी गई कि शीघ्र आपरेशन न करा लिया गया तो मृत्युका भय है।
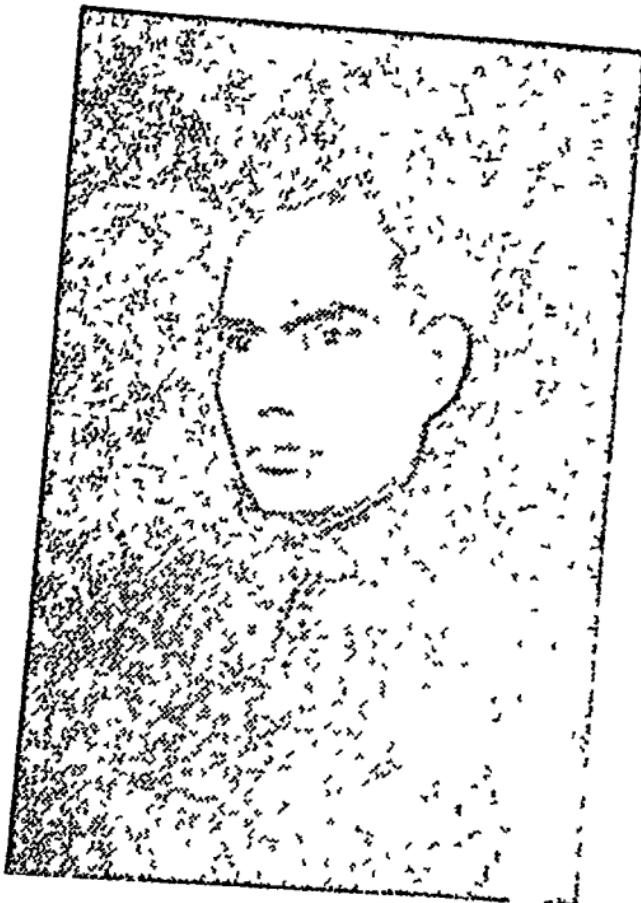
लेखक

इसी समय मेरे बड़े भाई कहीसे प्राकृतिक चिकित्सासंबंधी एक पुस्तक लाए। इस पुस्तकद्वारा सर्वप्रथम मेरा प्राकृतिक चिकित्सासे परिचय हुआ। मैं डाक्टरोके इंजेक्शन और दवाओसे ऊब उठा था इसलिए मैंने प्राकृतिक चिकित्साद्वारा अपने रोगका इलाज करानेका निश्चय करके इस बारेमे अपने मित्रोसे परामर्श

किया। मेरे एक मित्र गोरखपुरके आरोग्य-मंदिरसे बहुत फायदा उठा चुके थे, उन्होंने वही जानेकी राय दी। मैं जनवरी सन् '४६ की किसी तारीखको वहा जा पहुंचा। वहांके चिकित्सक महोदयसे अपना पूरा हाल वतलाकर परीक्षा कराई। मेरा रोग सुसाध्य माना गया और मुझे प्राकृतिक चिकित्साके बारेमे वहुत कुछ वतलाया और कहा कि प्राकृतिक चिकित्सा कोई इलाज नही है, वल्कि भूतकालमें किए हुए गलत रहन-सहन और गलत खान-पानका प्रायश्चित्त है। गलतियोंको सुधार लेनेसे रोग चला जायगा। मै वहां महीनेभर रहा। कुछ अनिवार्य कारणोंसे अधिक न रह सका। इतने दिनोंमे ही मुझे वहुत लाभ मालूम पड़ा। कब्ज चला गया, मेरे दिमागकी बेचैनीकी शिकायत दूर हो गई, शरीरमे स्फूर्ति आ गई। वहांकी चिकित्सा-पद्धति मुझे बहुत सुखकर लगी। चिकित्सक महोदयने मेरे लिए भोजन-सुधार, जलचिकित्सा, एनिमा, मिट्टीकी पट्टी, मालिश आदिका क्रम निश्चित किया था। प्रात.काल मैं शौचादिसे निवृत्त होकर कूनेका कटिस्नान पांच मिनटतक लेकर टहलने निकल जाया करता था। लौटनेपर पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी आध घंटेतक रखी जाती और फिर एनिमा दिया जाता था। उसके वाद गरम और ठंडे पानीका उदरस्नान कराया जाता। शामको फिर ठंडे पानीमें कटिस्नान लेकर टहलने जाता था। सप्ताहमें दो दफे मालिश व एक दफे वाष्पस्नान दिया जाता था।

भोजनमें दोपहरको कच्ची तरकारियां, उवली तरकारियां और चोकरसमेत आटेकी रोटी दी जाती और शामको मेरा भोजन फल और दूध था। आरंभमे मुझे ग्यारह रोज केवल संतरेके रसपर रखा गया था। इस रसाहारकी विशेषता यह थी

कि शरीरमें दुर्बलता तो अवश्य आई परंतु शक्तिमे कोई कमी नही हुई। मै अपने समस्त चिकित्साके कार्यक्रमोको पूरा कर सका और रोज आठ मीलतक टहलने जाता था। चिकित्सालयमे प्राकृतिक चिकित्साविषयक एक पुस्तकालय भी है। उन पुस्तकोंसे मुझे प्राकृतिक चिकित्साकी विशेष जानकारी हुई।

चिकित्सक महोदयने मुझे बतलाया कि चूकि आप काफी इंजेक्शन ले चुके है इसलिए आपको चिकित्सा आरंभ करनेके पाचवे-सातवे हफ्तेके अंदर एक दफे रोगका उभार हो सकता है परंतु मै अधिक समय नही दे सकता था इससे लाचार था। दूसरे मेरी हालत बहुत अच्छी हो गई थी इसलिए मुझे रोगके उभारकी बातपर विश्वास भी नही हुआ।

घर आनेके एक सप्ताह बाद मेरे रोगका उभार आया या कहना चाहिए कि अपेंडिसाइटिसका दूसरा दौरा हुआ। परिवारके लोगो और मित्रोने समझा कि मेरी एक महीनेकी प्राकृतिक चिकित्सा व्यर्थ गई और डाक्टरी इलाज शुरू करनेको कहा और अपेंडिसाइटिसके आपरेशन करा लेनेकी भी राय दी। परंतु महीनेभरतक प्राकृतिक चिकित्साके सिद्धान्तोके मुताबिक चलकर और प्राकृतिक चिकित्साविषयक पुस्तके पढकर मुझे इस चिकित्साके सिद्धांतोंपर पूर्ण विश्वास हो गया था इसलिए मैंने डाक्टरी इलाजसे इनकार कर दिया और अपनी चिकित्सा स्वयं सभाली। एक सप्ताहतक नीबू और पानी लेकर उपवास किया, फिर एक महीनेतक फलोंके रसपर रहा। साथ-साथ गोरखपुरके चिकित्सालयमे सीखा अन्य चिकित्साक्रम जैसे एनिमा, कटिस्नान, मिट्टीकी पट्टी आदि भी चलती रही। इतने दिनमे मै पूर्णरूपसे स्वस्थ हो गया। आज पाच वर्ष हो

रहे हैं मुझे कोई बीमारी नहीं हुई। मैंने अपेंडिसाइटिसपर पूर्णरूपसे विजय प्राप्त कर ली।

प्राकृतिक चिकित्सासे परिचय प्राप्त होना मेरे जीवनकी एक महान् घटना है। इसने मुझे आत्मनिर्भरता और आत्म-विश्वासका पाठ पढ़ाया। इसके पहले जरा-सा सिरदर्द होनेपर ही मैं डाक्टरोंकी शरणमें जाता था; परंतु इधर तीन वर्षोंमें मैंने डाक्टरोंके नामपर एक पाई भी खर्च नहीं की है। अब मुझे घरमे किसीके बीमार पड़नेपर जरा भी परेशानी नहीं मालूम पड़ती, क्योंकि मैं जानता हूं कि बीमारियां हमारे शरीरके विजातीय पदार्थोंको दूर करनेके लिए आती हैं और प्राकृतिक चिकित्सा-प्रणालीसे हम अपने शरीरके विजातीय द्रव्यों और बीमारियोंसे आसानीसे छुटकारा पा सकते हैं।

मैंने अपना भोजन सुधारकर प्राकृतिक चिकित्साके नियमानुकूल कर लिया है। भोजनविषयक प्रयोग अब भी चलते रहते हैं। गत वर्ष मैं तीन महीनेतक आम और दूधके भोजनपर ही रहा। इससे मेरा शरीर विशेष रूपसे सशक्त और स्फूर्तिपूर्ण हो गया है। मेरे मित्रोंको यह बहुत ही आश्चर्यजनक मालूम पड़ता है कि कैसे मैं बिना अन्न ग्रहण किए केवल फल और तरकारी और दूधपर महीनोंतक रह जाता हूं और शारीरिक शक्तिमे कोई कमी नही आने पाती। पर यह तो बतानेकी नहीं, करनेकी ही चीज है। अतः मैं चुप रह जाता हूं और अपने ढंगसे चलता रहता हूं।

—श्रीफतेहचंद शर्मा बी० ए०

(२)

मेरे लिए अपने मानसिक और शारीरिक विकासकी कहानी लिखना कठिन हो रहा है; क्योंकि इसमें एक ओर तो स्वास्थ्यके संबंधमें वैज्ञानिक दृष्टिकोणकी परमावश्यकता है तथा दूसरी ओर अपनी कमजोरियोंका ब्यौरा परिचितों एवं अपरिचितोंके सामने रखनेका साहस करना है। सबसे
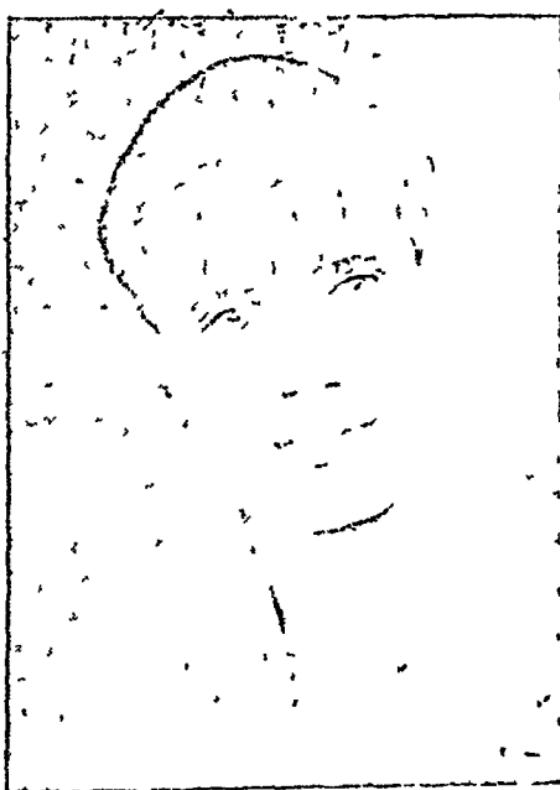
लेखक

बड़ी समस्या उन प्रचलित रूढियोंका विरोध करना है जिन्हें लोग वैज्ञानिक सत्य मानते हैं और उसके विपरीत कहनेवालेको मूर्ख ठहराते हैं। इस प्रकार मेरे इस नम्र प्रयत्नमें वैज्ञानिक

चेतना, मानसिक शक्ति एवं दृढ़संकल्प तीनोंकी ही आवश्यकता है पर यहां तो मेरा उद्देश्य सिर्फ यह प्रकट करना है कि प्राकृतिक चिकित्साने मेरे मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्यमें कैसे क्रांति कर दी और मुझे वैज्ञानिक रूढ़िवादिताकी परेशानियोंसे मुक्त कर दिया।

१९४५की गर्मियोंमे, जब मैं आई० ए०का छात्र था, मुझे सर्वप्रथम पेट-दर्द हुआ। मैंने विशेष खयाल न किया। परंतु हर दूसरे-तीसरे महीने यह दर्द होने लगा। मेरी आई० ए०की फाइनल परीक्षाके समय इसका भयानक रूप प्रकट हुआ। दर्द करीब चौदह घंटे बना रहा और बहुत करने-धरनेपर भी पूरा आराम होनेमें चौबीस घंटे लग गए। बी० ए०में तो दर्दके साथ ही जब-तब बुखार भी आ जाता। दर्दकी भयानकता बढ़ती गई और अब दर्द महीने-महीने और कभी-कभी तो पंद्रह रोजमें ही आने लगा। इस रोगकी परेशानीमें पढ़ाई-लिखाई कम होने लगी। मुझे आनर्स कोर्सकी पढ़ाई प्रथम वर्षमें ही छोड़ देनी पड़ी तथा बी० ए०के दूसरे वर्षमें ऐसा मालूम पड़ने लगा कि मुझे पढ़ाई ही छोड़ देनी पड़ेगी।

इस बीचके अपनी चिकित्साके मैं एक-दो उदाहरण देना चाहता हूं जिससे पता चलेगा कि कथित वैज्ञानिक चिकित्सक एवं दवावादी आम जनताकी अज्ञानतासे कैसे लाभ उठाते हैं। पटनेमें एक बड़े डाक्टरने मुझे खून, मल, मूत्र आदिकी जांच करानेको कहा। एकने तो छातीका एक्सरे लेनेकी आज्ञा दी, उनकी दृष्टिमें मुझे टी० बी०की संभावना थी। परंतु सौभाग्यवश मैं इन बखेड़ोंसे बच गया, कारण उसी समय मेरे पेटका दर्द एवं बुखार जोर पकड़ गया। बादको मैंने जाना कि यहां मरीजोंके शोषणके लिए ही थूक, खून, टट्टी जांचनेवाले

डाक्टरोंकी शृंखलाएं बनी हुई हैं। यहांका हर डाक्टर अपने रोगीको शृंखलाके सब डाक्टरोंके यहां केवल उन्हें पैसे कमवानेके लिए भेजनेकी चेष्टा करता है। इस पापाचारमय चक्करमें भोले-भाले देहाती और अपनेको अक्लमंद समझनेवाले लोग भी रोगमुक्तिकी मृगतृष्णामें फंसकर सैकडों-हजारों खर्च करके भी निराश वापस आते हैं।

बीचमें पटनेके एक प्रमुख होमियोपैथसे भी मेरी भेंट हुई। वह सिर्फ जीर्ण रोगोंका ही इलाज करते हैं। मरीजोंका उनमें (उनकी चिकित्सामें नहीं) अटल विश्वास होना ही उनकी चिकित्साका आधार है। मुझसे पूछा, "आपका मुझमें विश्वास है?"

जाहिर था कि प्रश्न देहातसे आनेवाले भोले-भाले श्रद्धांध रोगियोंके लिए था और बेवकूफीसे भरा हुआ था। मैंने उनसे अनुरोध किया कि वे मुझसे इलाजसंबंधी बातें करें। इसपर आपका प्रश्न हुआ "रामनाम जपते हैं?"

"नहीं"

थोड़ी बातें होनेके बाद उन्होंने १५०) पर अच्छा करनेका ठेका किया और आधे पेशगी मांगे। मैंने सिर्फ २५) दिये। न माननेपर १० और दिये। सालभर दवा हुई थी पर मेरी गाड़ी जहां थी वहां-की-वहां रही। पीछे भले ही हटी हो, पेटके दर्दका जोर बढ गया था।

मैं निराश होने लगा। पढाई-लिखाईमें जी नहीं लगता था। मनोरंजनके लिए सिनेमा, होटलों एवं काफी हाउसोंकी सैरकी मात्रा बढ़ गई। खाने-पीनेका समय भी अनियमित हो गया।

सोनेमें रातके प्राय एक-दो बजा देता, उठनेमें सुबह

नौ-दस। होस्टलके सैकड़ों साथियोंके वीचमें अपनेको अकेला महसूस करता।

मैं प्राकृतिक चिकित्सासे कुछ-कुछ परिचित था, गांधीजीका आरोग्य-साधन तथा कुछ और साहित्य भी पढ़ा था। बीच-वीचमें उसका सहारा लेनेकी सोचता था लेकिन अभी डाक्टरो-परसे मेरा विश्वास पूरी तरह चला नही गया था। डाक्टरोंके ठाट-वाट और अस्पतालोंके आडंबर मुझे अपनी ओर खीचते थे।

एक दिन दर्दसे वेहोश हो जानेपर मैंने पटनाके सरकारी अस्पतालकी शरण ली और वहांके या कहिए विहारके सवसे वड़े सर्जनने मेरे रोगका निदान अपेडिसाइटिस किया था। और उन्होंने मुझे रोगमुक्त करनेकी कोशिगमे इंजेक्शनोंसें मेरा सारा शरीर भर दिया। फिर भी चार रोज दर्द वना रहा। इस बीच मुझे उन्होंने ७४ इंजेक्शन दिए। और न मालूम कितने दिए जानेपर मैंने सुइयोंकी पीड़ासे परेशान होकर सूंई लेनेसे इनकारं कर दिया। मेरी वाहे, पुट्ठे और जांघ चलनी हो चुकी थी। उस पीड़ाके कारण वुखार भी हो गया था। डाक्टरोंने अव अपेडिक्स (आंत्रपुच्छ)का आपरेशन करना तै किया। आपरेशनके लिए मैं तैयार न था, न मेरे परिवारके लोग ही तैयार थे। मैं गांधीजीके विषयमें पढ़ चुका था कि आंत्रपुच्छके आपरेगनसे उन्हे कुछ भी लाभ नही हुआ था, साथ ही मुझे अव दवासे मुक्ति पानी थी। यहांकी पद्धतिसे भी मुझे घृणा हो चुकी थी। डाक्टरोंका रोगियोंमे दिलचस्पी न होना, उनका अफसराना तरीका, मिथ्याभिमान, हेकड़ी, नर्सोका दुर्व्यवहार, नौकरोंकी डांट-डपट सभी मुझपर एक अजीव दुष्प्रभाव डाल रहे थे। मुझे ऐसा लग रहा था मानों मैं एक युद्धवंदी हूं और दुश्मनके कारागारमें हूं। मेरी घृणाकी हद

तब आ गई कि जब मेरे एक सरजनसे अपने उपांत्र-प्रदाहका कारण पूछनेपर शरीरशास्त्र और दवाशास्त्रके अध्ययन करनेकी सलाह दी गई—"ऐसे क्या जानोगे, पढ़ो तब जानोगे।"

इस बंदीगृहसे मैंने किसी तरह छुटकारा लिया और प्राकृतिक चिकित्सा करानेका मनसूबा किया। कभी-कभी पटना स्टेशनके बुकस्टालसे 'आरोग्य' लेकर पढ़नेके कारण मैं गोरखपुरके प्राकृतिक चिकित्सालयसे परिचित था। मैंने २६ अक्तूबर १९४७को वहा जा पहुचा और उपचार कराना आरंभ कर दिया।

इलाज कराते हुए मुझे मालूम हुआ कि प्राकृतिक चिकित्सा इलाज नही जीवन जीनेका एक तरीका है जिसमे मनुष्य अधिकसे-अधिक अपनी प्राकृतिक आवश्यकताओको प्राकृतिक तत्त्वोसे ग्रहण करता है। इन तत्त्वोसे लाभ पानेके लिए पहले शरीरके अदरके विजातीय द्रव्योका—गदगीका निकलना आवश्यक है। इसका सर्वोत्तम तरीका फलाहार, उपवास, वायु-स्नान, जलस्नान, वाष्पस्नान, धूप-स्नान आदि है। शुद्ध रक्त-मांस, मज्जा और अस्थिके निर्माणके लिए उचित समयपर उचित आहार ग्रहण करना है। आहार-विहारकी भूलोके कारण विपाक्तता आ जाती है उसे दूर करनेकी इस इलाजमे सुदर व्यवस्था है।

मै यहा सिर्फ २७ रोज रहा, जिनमे छ रोज उपवास किया, पाच रोज फलाहारपर बिताये और छ रोज एक वक्त भोजन किया और दो वक्त फलाहार। साथमें जो कटिस्नान और मेहनस्नान चले उससे भी मुझे काफी लाभ हुआ। उपवासकालमे आश्चर्यजनक बात जो हुई वह दवा तथा इंजेक्शनोकी प्रतिक्रिया थी। जो रोग इंजेक्शनो एवं दवाओसे दब गये थे एक-एक करके आये पर एक रोजसे अधिक न ठहरे और एक-एक बार

मुंह दिखाकर सदाके लिए विदा हो गये। "सदा" इसलिए कहा कि आज उन्हें गये पांच वर्ष हो गए हैं।

फलाहार एवं उपवासकालमें एनिमाके प्रयोगसे आंतोंमें पुरानी इकट्ठी गंदगी एकदम साफ हो गई। गंदगीके साथ दो-एक छोटे-छोटे पथरीले एवं काले कंकड़से पदार्थ भी बाहर आये। आश्चर्यकी वात यह हुई कि उपचारके वाद मेरे बहुतसे रोग जिनकी ओर मैंने दवा कराते समय ध्यान नही दिया था, अपने आप चले गए। प्रतिक्रिया उपवासके तीसरे या चौथे दिन शुरू हुई थी। उस दिन मेरा वहुत ही पुराना दोस्त दाद इतना उभड़ आया कि मैं घवरा उठा। डाक्टरने वतलाया कि यह रोगकी प्रतिक्रिया मात्र है, इसके जानेमें सिर्फ दो-तीन दिन लगेंगे। वही हुआ। कानका दर्द वर्षों वाद उठा। पैरोंमें सूजन आ गई जो फाइलेरियाकी वचत थी। दांतके मसूड़े फूल उठे, क्योंकि मुझे दांतका पुराना रोग था। उपचारके समाप्त होते-होते मेरे किसी भी रोगका पता न था। अपेंडिसाइटिसका कोई भी लक्षण आजतक प्रकट नही हुआ।

इस थोड़े कालमे मै शरीर-विज्ञानके संवंधमे वहुत काफी जान गया। समुचित आहारका रहस्य एवं छोटे-मोटे मर्जोंका निदान भी समझ गया। सवसे अधिक फायदेकी चीज भोजन तथा उसके पाचन-क्रियाके ज्ञानके विषयमें थी। वास्तवमें ये आज भी मेरी थाती हैं एवं मेरे स्वास्थ्यकी दृढ़ भित्तिरूप ह। प्राकृतिक चिकित्साके उपचारके साथ ही, वहां अध्ययनकी भी व्यवस्था थी। सुंदर पुस्तकालय एवं सामयिक व्याख्यान किसी भी आरोग्यार्थीको शरीर-विज्ञान एवं स्वास्थ्यका ज्ञान अपने आप करा देते हैं। यहांका वायुमंडल भी व्यक्तिके शारीरिक और मानसिक विकासमें पर्याप्त सहायता पहुंचाता है। यहांके

अनुभवोंसे मैं पूर्णतया समझ गया कि भारतीय स्वास्थ्यके स्तरको ऊंचा उठानेके लिए प्राकृतिक जीवनका प्रचार आवश्यक है। दवा या इलाजका स्थान गौण होना चाहिए, प्रमुख स्थान तो स्वस्थ जीवनकी आवश्यकताओंका ज्ञान कराना है जो सिर्फ इसी प्राकृतिक चिकित्साद्वारा संभव है।

वहांसे मैं पूरा नीरोग वापस लौटा। मेरे अनुभवोंसे मेरे पिताजीको, जो दमेसे परेशान थे, बहुत ही लाभ हुआ। स्मरणीय बात यह हुई कि हमारे एक चचेरे भाई जिनको डाक्टर तथा वैद्योंने जीवनसे निराश कर दिया था, मेरे अनुभवोंसे लाभ उठाकर ५२ वर्षकी अवस्थामे फिर पूर्ण स्वस्थ हो गये तथा अब १५-२० मील आसानीसे एक दिनमे चल लेते हैं। मेरी शारीरिक उन्नतिके साथ-साथ मेरी स्मरणशक्तिकी सभी शिकायत दूर हो गई। अब भी जब मैं प्राकृतिक चिकित्सा करानेके पूर्वके अपने चित्रको देखता हूं तो घबरा उठता हूं। वह मैं पाठकोको दिखानेका साहस नही कर पा रहा हूं। वास्तवमें प्राकृतिक चिकित्सा मेरे शारीरिक एवं मानसिक उत्थानका क्रांतिदूत है जिसने अपना अमर संदेश मुझे सुनाया।

—प्रो० केशवप्रसादसिंह एम० ए० "विशारद"

: २३ :

जहरीले जानवरने काटा

डेढ़ साल पहलेकी वात है, कलकत्तेमे मैं रातको आठ वजे वैठा सिनेमा देख रहा था कि किसी जंतुने मेरे पांवके वायें अंगूठेमे काट खाया। जरा खून निकल आया, पर मैंने परवा न की, फिल्म देखता रहा। घर आनेपर लोग शंका करने लगे कि किसी जहरीले जीवने न काटा हो, डाक्टरको दिखा लेना चाहिए। डाक्टरने आते ही, घावको देखकर ही, जीवके जहरीला होनेकी घोषणा कर दी। अवतक मेरे दिमागमे जो चूहा था वह छिपकली, विसखोपरा और सांप होकर नाचने लगा। मै डर गया। और मेरे उस डरने मुझे इंजेक्शन लेनेपर मजवूर किया। सात दिनतक सूइयां (इंजेक्शन) चलती रही। सौ रुपयेसे अधिक डाक्टरके दक्षिणाके दिये, पर इतनेसे ही पिंड छूट गया हो सो नही हुआ। डाक्टरने अव मेरे पेशाव, पाखाने और खूनकी जांच करवाई। रिपोर्ट देखकर डाक्टरने वताया कि खूनमें तो कोई जहर नही रह गया है पर जांच वताती है कि आंतोंमे आंव (डिसेंटरी) के कीटाणु भरे हुए हैं। उसने और भी कुछ शक करके मेरे फेफड़ोंका एक्सरे कराया पर उसमे कोई खरावी नही मिली। अव आवकी दवा शुरू हुई। यहां यह कह दूं कि मुझे स्वास्थ्यके विषयमे कोई शिकायत नही थी, पर जव डाक्टरने रोगी करार दे दिया तव इलाज जरूरी हो गया। एमिटीनके इंजेक्शन, एंटोवायफार्मकी टिकिया और कई पेटेंट दवाएं चली। ये दवाएं करीव-करीव हर हफ्ते वदली जातीं। यह सिलसिला डेढ़

सालतक जारी रहा । मैं दवाओंसे तंग आ गया और खासतौरसे उन शिकायतोंसे, जो इन दवाओंने मेरे शरीरमें पैदा कर दी थीं । दवाएं लेनेके पहले कोई शिकायत मेरी जानकारीमें

लेखक

नहीं थी। अब मुझे शारीरिक और मानसिक कमजोरीकी शिकायत हो गई । बदनमें जहां-तहां दर्द होता रहता, पतले दस्त आया करते । दिनमें दस-बारह बारतक शौच जाना पड़ता । कभी-कभी पेटमें दर्द इतने जोरका उठता कि मैं रो पड़ता ।

वैद्यजीकी शरणमें

अब मैं डाक्टरसे हार मानकर वैद्यजीकी शरण गया । वे

वैद्यजी वहुत मशहूर हैं, इनकी खूब चलती है। हमारे कुटुंबका कायदा है कि चिकित्सा करानी तो किसी ऊंचे दरजेके डाक्टर या वैद्यसे करायें। वैद्यजीने नाड़ी पकड़ी और बोले, तुम्हारी पाचनशक्ति कमजोर हो गई है। भोजनसे रस नहीं बनता, वायुका प्रकोप है। मुझे कफ और वायुके प्रकोपका तो कुछ पता नहीं चलता था पर विधाताका प्रकोप मैं जरूर समझता था। दवाओंमें कई तरहके काढ़े, चूरन, गोलियां थीं। और था अजवाइनका अर्क। डाक्टरसे वैद्य मुझे अच्छा लगा। डाक्टर तो सूइयां चुभाता और कड़वी दवाएं पिलाता, पर वैद्यजी मधुके संयोगसे दवाओंको मधुर कर देते थे।

महीनों वैद्यजीका इलाज चला, पर कुछ वना नहीं। हां, कमजोरी जरूर वढ़ गई। शरीरकी हालत यह हो गई कि सीनेपरकी एक-एक हड्डी गिन लीजिए। दवाएं लेते मेरे दो वरस वरवाद हो गये थे, रुपये कितने हजार वरवाद हुए इसकी चर्चा मैं नहीं करना चाहता।

मेरा खान-पान

डाक्टरोंके इलाजमे एक मौज थी कि उन्होंने मुझे खान-पीनेकी पूरी आजादी दे रखी थी। चाय-विस्कुटकी उनकी खास सिफारिश थी और ज्यादा-से-ज्यादा मिठाइयां खानेको कहा गया था। मनाही थी तो केवल मिर्च-मसालेकी। मै उनकी आज्ञानुसार होटलोंमें जाकर खूब चाय-विस्कुट खाता और नित्य संदेश-रसगुल्लोंपर हाथ साफ करता। वैद्यजीने कुछ और तरक्की की। मेरी कमजोरी दूर करनेको उन्होंने शामको रोटीके वजाय पूरी कर दी। पर न वैद्यजीकी दवाने कोई गुण दिखाया न पूरियोंने। वैद्यजीसे भी निराशा हुई।

मैंने निश्चय किया कि अब कोई दवा नहीं लूंगा। मैंने दवा छोड़ दी, अपनी समझसे भोजनमे कुछ परिवर्तन किया। कभी-कभी फलोंके रसपर ही रह जाता। पर कोई लाभ न दिखाई दिया। इस समय नींद भी कम हो गई थी। चिंता वहुत वढ़ गई थी। कमजोरी जोरसे सताती थी। सब कुछ हुआ, पर मैंने हिम्मत नहीं हारी थी। मनमें पक्की आशा बांधे बैठा था कि इन दवाओं-द्वारा लाई गई दशासे मैं जरूर मुक्त हो जाऊंगा।

मेरे स्वास्थ्यके विषयमें घरवाले बहुत चिंतित थे। कहते, दवा नहीं लेता तो कम-से-कम कलकत्ता छोड़कर किसी स्वास्थ्यप्रद स्थानमें ही जा। मेरी कलकत्ता छोड़नेकी जरा भी इच्छा नही थी, पर घरवालोंके दबावसे राजी हो गया। अब कभी दार-जिलिंग जानेका प्रोग्राम बनाता, कभी समुद्रकिनारे पुरी जानेका। पर निश्चय न कर पाता कि कहां जाऊं। इसी समय कुछ लोगोंने मुझे कुदरती इलाज करानेकी राय दी। मैंने इसे भी आजमा देखनेकी सोची। अपने बड़े भाईसाहबसे अपनी इच्छा प्रकट की। वह गोरखपुरके आरोग्य-मंदिरमे कई बरस पहले अपना इलाज करा चुके थे। वहांके चिकित्सकसे उनकी मैत्री है। उन्होंने तुरंत उनके नाम एक पत्र लिखकर मुझे गोरखपुर भेज दिया।

कैसे क्या हुआ ?

आरंभ भोजन-सुधारसे हुआ। सवेरे फल और मट्ठा मिला। दोपहरको रोटी और भापसे पकी हुई तरकारियां। चार बजे मौसमीका एक गिलास रस और शामको दोपहरवाला भोजन। तरकारियोंमे मसालोंकी कौन कहे, नमकतक नदारद था। उस भोजनको देखकर मैं चौंका जरूर, पर हिम्मत करके खाना शुरू किया। दबाव यह भी पड़ा कि और बहुतसे रोगी मेरे साथ बैठे

हंस-हंसकर वातें करते और स्वाद लेकर यही भोजन कर रहे थें, और चिकित्सक भी मेरे वगलमे वैठे यही भोजन पा रहे थे। मैंने जो चवा-चवाकर खाना शुरू किया तो मुझे इसी भोजनमें स्वाद आने लगा, खास तौरसे तरकारियोंमे। वे वहुत मीठी मालूम होती थीं। पहले दिन मैने तरकारियां ही अधिक खायी।

इस भोजन-परिवर्तनके साथ मै सवेरे-शाम पांच-पांच मिनटका- कटि-स्नान लेकर टहलने जाता। टहलनेमे मेरा मन खूव लगता। चारों तरफ हरे-भरे सुंदर-सुदर खेत हैं। जिधर निकल जाता नया-सा लगता। हवामें अजीव जान मालूम होती जिसमें सांस लेते ही वड़ी ताजगी मिलती। दिनमे रोज करीव नौ वजे मुझे मालिश दी जाती और गरम ठंडा कटि-स्नान कराया जाता। सप्ताहमें दो वार सारे वदनकी गीली पट्टी भी दी जाती। और एक वार धूप-स्नान।

मेरे लिए यह सव कुछ अजीव था, पर था आनंदप्रद। हर चिकित्सामें मुझे आनंद आता और हर चिकित्साके वाद सजीवता वढ़ी हुई प्रतीत होती।

दो सप्ताहकी चिकित्सामें ही मुझमे स्फूर्ति दौड़ने लगी। वढ़िया नींद आने लगी। शौच दो वार वंधकर होने लगा। मुंहपरकी काली झांईका स्थान लालिमाने लिया और दो वर्षसे घटता हुआ वजन पांच पौंड वढ़ गया। मेरी सारी शिकायतें दूर हो गयी। फिर भी मै वहांका आनंद लेने, वातावरणसे लाभ उठाने और वहां जिन स्वास्थ्यार्थियोंसे मेरी मैत्री हो गई थी उनके दवावके कारण तीन सप्ताह और ठहरा तथा अपने स्वास्थ्य-को अधिक उन्नत वनानेमें सफल हुआ।

—श्रीश्यामलाल खेमका

: २४ :

गठिया

१९४६ के अप्रैलकी बात है। अचानक हाथकी कलाईके जोड़में कुछ मामूली दर्द हुआ। चार-पांच रोज उन दर्दको उसी तरह लिए फिरा। मुझे क्या मालूम था कि यह दर्द मुझे खाट पकड़ा देगा। १३ अप्रैलके सवेरे सारा शरीर दर्दसे आक्रांत था और मै उसकी असह्य पीडासे कराह रहा था। डाक्टर बुलाया। उन्होंने आते ही मेरी नाडी देखी, मेरे जोड़ोका निरीक्षण किया। थर्मामीटरसे मेरा तापमान भी लिया, जो १००° था। उन्होंने मेरा रोग 'रिउमैटिक फीवर' अर्थात् वात-ज्वर कायम किया। उन्होंने अस्पतालसे एक सफेद मिक्श्चर, लेपके लिए मरहम और किसी सफेद बुकनीकी पुडिया मेरे आदमीके हाथ भेजी। सुई लगानेके लिए भी कहला भेजा और काचकी पिचकारी, स्प्रिटकी एक छोटी शीशी और एक चारो तरफसे बंद सफेद दवाकी शीशी, जिसके ऊपर सोडियम साइलिस लिखा हुआ था, लेकर आ पधारे। मेरे मोटे होनेकी वजहसे उन्हे सुई लगानेको कोई नस नही मिली। उन्होने मेरे शरीरपर कई जगह सुई गड़ाई। डाक्टर बड़े सज्जन व्यक्ति होनेके नाते मुझे धीरज देते रहे। अतमे उन्होंने अपनी इच्छित नस खोज ली।

सुई दो महीने लगती रही। डाक्टरने काफी दिलचस्पीसे मेरा इलाज किया। काफी अच्छी दवाइयां दी। इलाज करनेमे उन्होने कुछ भी उठा न रखा। लेकिन फायदा सिर्फ इतना ही

होता कि सुई लगानेके आध घंटे वाद कुछ आराम मिलता जो छः-सात घंटेतक वना रहता । वे सवेरे सुई लगाते, शामतक उसका असर खतम हो जाता । फिर रात कटनी मुश्किल हो जाती । नींद तो मेरी चली ही गई थी । पाखाना-पेशाब भी खाटमे ही करता । दर्दके कारण मैं स्वयं हिल-डुल न सकता था । डाक्टरने भी हिलने-डुलनेकी मुमानियत कर दी थी । साथ एक वड़ा भारी डर भी बैठा दिया था, कि यदि थोड़ा भी हिलोगे तो दिल हमेशाके लिए खराव हो जायगा । और बताया कि दिल ठीक करनेके लिए दुनियांके किसी चिकित्साशास्त्रमें कोई उपाय नही है । इन दो महीनोंमें मेरे शरीरका वजन २२० पौंडसे घटकर सिर्फ १५६ पौड रह गया था ।

जव घरवालोंको डाक्टरके इलाजसे संतोष न हुआ तो उन्होने वैद्योंको आमंत्रित किया । वैद्य भी डेढ़ महीनेतक अपनी गोलियां, क्वाथ और रस वगैरह देते रहे । उनकी भी न चलनेपर मेरे घरवालोंका यह हाल हुआ कि जो भी आता और उनको जो उपचार बतलाता वह मेरे ऊपर आजमाते । परंतु चार महीने वाद मेरा दर्द अपने आप जाता रहा और मैंने फिर एक वार दर्द न होनेके सुखका अनुभव किया ।

इसके वाद छः महीने मुश्किलसे वीते होंगे कि फिर गठियाने दर्शन दिए । इस दफा वैद्यजीकी शरणमें पहले ही चला गया; क्योंकि पिछली दफा जव मैं ठीक हुआ था उस वक्त इनका ही इलाज चल रहा था । इससे घरवालोंको तथा मुझे उनमे पूरा विश्वास हो गया था । एक महीनेतक जहरकी घूटें पीते-पीते ठीक हुआ । इस दफा, ठीक होनेके बाद भी दवा लेता रहा ।

फिर भी जड़ न गई । दो महीने वाद तीसरी वार मुझपर गठियाका आक्रमण हुआ । इस वार बहुत निराशा हुई । सबको

कहीं बाहर जाकर इलाज करानेकी जची । लेकिन दर्दकी हालतमें जाना भी तो बड़ा मुश्किल था । इसलिए बीस दिन बाद जब दर्दसे पिंड छूटा तो इसे निर्मूल करनेके किसी इलाजकी खोजमें जयपुर गया ।

जयपुरमे लेडी विलिंग्डन हास्पिटल उन दिनोमे काफी नाम कमा रहा था । डाक्टर आर० ई० हेलिस वहाके प्रधान चिकित्सक थे । वे एक जर्मन थे; बड़े हंसमुख और नेक, कुछ हिंदी बोलना भी जानते थे । कई शब्दोका उच्चारण तो वे हिंदीवालोंसे भी अच्छा कर लेते थे । उनसे बंगलेपर मुलाकात की । उन्होने मेरा कई यन्त्रोद्वारा नीचेसे ऊपरतक निरीक्षण किया । इसके बाद उन्होंने कहा कि इस रोगका खास कारण कब्ज है । इसलिए उन्होने मुझे पेट साफ रखनेकी जोरसे सलाह दी । खानेके लिए उन्होने मुझे फल, हरी तरकारियां और सब्जियां, कच्चा प्याज तथा चोकरसमेत आटेकी रोटी बताई । उन्होने मुझे दोनो वक्त यानी सुबह और शाम खुली हवामें करीब पैंतालीस मिनटतक घूमनेका भी आदेश दिया । एलोपैथिकके सेवक होनेके कारण उन्होने कुछ मामूली दवाओके नाम भी लिखकर दिए । जो दवाइया उन्होने बताई थीं वे मैंने खरीद तो ली पर इस बीच कई प्राकृतिक चिकित्सासंबंधी पुस्तकें पढ़नेके कारण दवाओपरसे मेरा विश्वास प्राय. उठ चुका था । इसलिए मैंने उन्हें छुआतक नही । हा, धूप-पानीके कुछ साधारण प्रयोग अवश्य करने लगा । डाक्टर साहबकी बताई बातोका अमल मैं आजतक भी कर रहा हू । वे मेरी आदतमें दाखिल हो चुकी है । चार वर्षका समय हो गया और तबसे अबतक मुझे फिर गठियाका दौरा नही हुआ है ।

—श्रीहीरालाल अग्रवाल

ववासीर

मै छ.-सात सालोसे खूनी ववासीरसे भुगत रही थी। शुरूके दिनोमें सालमें दो-तीन वार दौरा आता था और दो-तीन दिनोंमें ही वहुत खून निचुड़ जाता; इससे मै काफी कमजोर हो जाती। पर वढ़ते-वढ़ते छ.-सात महीनोंमे तो यह हालत हो गई कि हर समय मसोंमें दर्द वना रहता और पाखानेके वक्त तो भयंकर पीड़ा होती, खून भी वहता। वहुत वड़े-वड़े छ-सात मसे वन गये थे। जिनकी असह्य वेदनाके कारण हरदम तड़पा करती थी। अंतमें कमजोरी यहांतक वढ़ी कि खाटसे उठना कठिन हो गया। कहावत है, 'माड़ा डंगर सरबस रोग', अन्य अनेक रोगोंने भी आ घेरा। जिगर, मेदे, अंतड़ियोंने अपना काम छोड़ दिया। कोई चीज हजम नही होती थी। हृदयकी हालत वहुत तेज रहती, देखनेवाला समझता वुखार है। हरकत कम होते ही वुखार भी जाता रहता। कमजोरीके कारण वेहोशी शुरू हो गई।

अपने घर लायलपुरमें लायक डाक्टर, वैद्योकी वहुत दवाइयां कीं, पर फायदा नही हुआ। हर समयके दर्द और कमजोरीके कारण जीवनसे निराशा हो गई। मेरे घरवाले भी मेरा जीवन-दीप अव वुझा तव वुझा यही समझ रहे थे। मैंने अपने पतिदेवसे अपने वहन-भाइयोसे मिला देनेकी प्रार्थना की। तदनुसार वह मुझे लुधियाना लाये। यहां भी देखनेवालोने मुझे चंद दिनोंका मेहमान वताया। पर जवतक सांस तवतक आस। मेरी वहनने

कहा कि उसके पति प्राकृतिक चिकित्सक हैं, मैं उनसे इलाज करवाऊं शायद फायदा हो। मुझे कुछ धीरज आया और मैंने अपने वहनोईका इलाज शुरू किया। इलाज तो साधारण था। पर इसके सामने डाक्टरी और वैद्यक तो घरमें खोई चीज वाहर ढूंढते फिरनेके समान नजर आये। उन्होंने जो परहेज करवाये वह आश्चर्यजनक थे :

(१) पहले तीन दिन उवले पानीमें सिर्फ शहद और नीवूका रस पिलाया।
(२) उसके वाद दो दिन सेव और संतरेका रस निचोड़कर।
(३) फिर तीन दिन सेव और सतरे खाकर।
(४) वादको एक समय पतला दलिया।
(५) फिर तीन दिन वाद साथमें सब्जी विना घीके।
(६) फिर कुछ रोटी (घरके पिसे, मोटे, विना छने आटेकी)।
(७) एक मास वाद जरा घी भी शुरू किया।

लोग कहते हैं 'अन्नमें ही प्राण है।' पर मैं तो अन्न खाते-खाते ही कमजोर हुई थी और मेरी यह हालत हो गई थी कि किसी खानेकी चीजकी ओर देखनेको भी जी न चाहता था। अव कमजोरी दूर हो गई, भूख खूव वढी, खाना हजम होने लगा, सव अंग अपना काम करने लगे। भोजनकी वात तो ऊपर मैंने कही ही है, इलाज यह हुआ कि मुझे पंद्रह मिनट सहते-सहते गरम पानीके टवमें विठाते, उसके वाद तुरत तीन मिनट ठंडे पानीमें। फिर वदन पोंछकर गर्मी लानेको एक घंटा रजाई ओढाकर लिटाते। मस्सोंपर चिकनी मिट्टी सानकर, टिक्की वांधी जाती, जो थोड़ी-थोडी देरपर वदल दी जाती। उन उपायोंसे मैं दिनोंदिन तंदुरुस्त होने लगी। कहा तो मेरी यह

हालत थी कि मैं विस्तरेसे उठ न सकती थी और अव चार-चार मीलका चक्कर काटने लगी। और तिसपर भी थकावट नहीं आती। हड्डियां जो मांस छोड़ चुकी थीं, पुट्ठे कमजोर होकर मांस ढीला पड़ गया था और नाखून जो सफेद हो गये थे, उनमें फिर सुर्खी आ गई। पुराना साथी दर्द चला गया और नींद जिसने मुद्दतसे किनारा कस रखा था, वह आने लगी। मस्से सूखकर झड़ गये। जिन्होंने मुझे रोगी देखा था, अव मेरा यह स्वास्थ्य देखकर हैरान होते थे।

यह सारी दया प्राकृतिक इलाजकी थी। मैं अपने रोगी और दु:खी निराश भाई-वहनोंसे प्रार्थना करती हूं कि इस इलाजकी शरण लेकर अपना जीवन सुधारें। दवाइयां रोगकी जड़ नहीं खोतीं वल्कि दवाती हैं। यह इलाज रोगकी जड़ मिटाकर शरीरकी हालतको वदल देता है।

—श्रीमती मायादेवी

(२)

मेरे वारह वर्षकी उम्रकी वात है मुझे शौच जाते डर लगता था, हाजत होती और मेरी जान जाती। अधिक जोर होनेपर जाता पर डरते-डरते। पाखानेके लिए बैठते ही पहले मलके वदले खून गिरता। खून देखता और घवराकर हाजतको रोकनेकी कोशिश करता। पर जवतक मल न निकलता, चैन न पड़ती, इसलिए वैठा रहता, घंटों लगता। हारे जुआरीकी शक्ल लेकर पाखानेसे लौटता। वड़ी मजवूरी थी। खुद कुछ जानता न था और किसी डाक्टर या हकीमकी शरण लेना नहीं चाहता था। लेता तो तव जव देनेको पासमें कुछ होता ? सालभरमें घरसे ३०-४० रुपये आते थे जो फीस और पुस्तकोंको

भी काफी न होते थे। जिनके यहां रहता, उनकी स्थिति भी ऐसी नही थी कि उनसे अपनी वीमारीको दूर करनेमे कुछ आर्थिक सहयोग लेता। वह रहने और भोजनकी मदद देते थे, वही क्या कम था। कभी मैंने उनसे अपना दुःख नही कहा। पाखानेकी देरके लिए वह कभी-कभी नाराज भी होते, मजाक करते। वहुत वुरा लगता, पर लाचार शांत रह जाता।

कुछ दिन इसी तरह वीते और भी कई वीमारियोने घेरा। इन सवमें खुजली प्रधान थी। मैट्रिकमें खुजलीके कारण छः महीने वीमार रहा, पूरा एक वर्ष वेकार गया।

कालेजकी पढाईके लिए हैदरावाद आनेपर विद्यार्थी-गृहके मंत्री श्रीसत्यनारायणजी लोया (एडवोकेट)से परिचय हुआ। परिचय आत्मीयतामें परिणत हुआ। मेरे विवाहमें उन्होंने उपहारस्वरूप मेरे नाम एक वर्षके लिए 'आरोग्य' (गोरखपुर) शुरू करवा दिया। पैसोके ख्यालसे इस उपहारका महत्त्व दुनियाकी दृष्टिमे गौण हो सकता है पर मेरे लिए तो उपहार जीवनदाता वन गया। इसे पढनेसे प्राकृतिक चिकित्साकी ओर झुकाव हो गया। 'आरोग्य' के नियमित अध्ययनने स्वास्थ्य-लाभके सरल और सहज साधनोका ज्ञान करा दिया। श्री-लोयाजीके प्राकृतिक चिकित्सामे होनेवाले प्रत्यक्ष अनुभवोंने तो प्राकृतिक चिकित्सामे मेरी आस्थाको और भी दृढ वना दिया। मैंने श्रीलोयाजीसे लेकर प्राकृतिक चिकित्सासंवधी और भी साहित्य पढा इससे प्राकृतिक चिकित्साके मूल मंत्रोंकी जानकारी हुई। मिट्टी, पानी, हवा, धूप, एनिमा, उपवास, फल, तरकारी आदिकी विशेषता समझमे आई। इन प्राकृतिक साधनोसे लाभ उठानेकी इच्छा प्रवल होती गई। धीरे-धीरे इनपर अमल शुरू हुआ। रोजानाके आहारमें दूध, फल और सब्जीकी मात्रा

वढ़ा दी । बीचमें एक महीने तो फलाहार ही करता रहा । फलोंकी मात्रा वढ़ाकर अन्नकी मात्रा कम करता गया । धीरे-धीरे अन्न छूट गया । केवल तीन वार फल और एक बार दूध लेकर रहने लगा । पहले कुछ कमजोरी मालूम हुई पर काम करनेका उत्साह वढ़ने लगा ।

कब्ज धीरे-धीरे दूर हुआ । पेशावकी जलन दूर होकर पेशाव साफ और निर्विकार होने लगा । पाखानेमें घंटोंका समय व्यर्थ नष्ट होता था वह वचने लगा । अव पांच-सात मिनटसे ज्यादाकी जरूरत नही रही ।

सवसे वड़ा लाभ तो ववासीरसे छुटकारा मिला । पहले ज्यों-ज्यों गरमीका मौसम समीप आता मैं घवराता; क्योंकि गरमीमे इसका जोर वढ़ता था पर इस वर्ष गरमी अधिक होनेपर भी कभी मुझे ववासीरकी पीड़ाने नही सताया । मुझे विश्वास हो गया है कि मेरी वीमारीकी जड़ जाती रही है । हां, इस भयंकर वीमारीसे पिंड छुड़ानेके लिए मुझे कुछ 'वलिदान' भी करना पड़ा है । पाठक, 'वलिदान'के नामसे घवरायें नहीं, कारण, यह वलिदान सवके लिए साध्य है और संभव भी । मिर्च, मसाले और चटपटी चीजोंके स्वादका त्याग । कुछ दिन पहलेतक मै नमक, मिर्च, मसालोंसे लथपथ चीजोंको ही स्वादिष्ट, रुचिकर समझता था । शायद अधिकांश लोग ऐसा ही समझते है पर आज अपने स्वतःके अनुभवसे कह सकता हूं कि यह स्वादका भूत केवल काल्पनिक है । आप जिस दिन इस विचारको छोड़ देंगे कि मिर्च-मसालेसे रसोई स्वादिष्ट वनती है, उसी दिनसे आपको साग-सब्जीमें विना मिर्च-मसालेके ही आनंद आने लगेगा । जरूरत दृढ़ निश्चयकी है ।

संभव है अनुभवके लिए मिर्च-मसालेके विना काम चलाना

चाहनेवालोंको दृढ़ विश्वासके अभावमे हफ्ते-दो-हफ्ते रसोई फीकी लगे पर एक वार वरदाश्त कर लेनेपर उन्हे जीवनके वास्तविक आनंदका अनुभव होगा। निसर्गने जो चीजें स्वयं पूर्ण वनाई है उनमे कृत्रिम स्वाद लानेकी चेष्टा करना स्वत के लिए गड्ढा खोदना है। फलोंका नैसर्गिक रूपमें सेवन करना केवल उनके सुस्वादका आनंद लेना ही नही वल्कि उनका रसके रूपमें अमृतपान करना है। जो जीवनशक्ति उससे प्राप्त होती है वह न केवल स्वादका ही कारण वनती है वल्कि मनुष्यकी वीमारियोको जड़से निकालकर उनमें नवजीवनका संचार करनेमे सफल सिद्ध होती है।

—रामानुजदास भूतड़ा

: २६ :

पैर सीधा हो गया

जीवनके पैंतीस वर्ष पहलेकी वह घटना मेरे लिए आज भी महत्त्व रखती है। प्राकृतिक चिकित्साका यदि मुझे अवलंवन न कराया जाता तो मैं आज लंगड़ा तो होता ही, और न जाने और क्या दुरवस्था होती, जिसकी मै इस समय कल्पना भी नहीं कर सकता। उस समय मेरी आयु दस वर्षकी थी। यह घटना १९१५-१६की है। गवर्नमेंट हाईस्कूल वारावंकी (अवध)में पांचवीं कक्षामें पढ़ता था। अकस्मात्, बिना किसी दुर्घटनाके, मेरे दाहिने पैरमे घुटनेके ऊपर हलका-हलका दर्द होने लगा और ऐसा प्रतीत हुआ कि पैर टेढ़ा होता जा रहा है। चलने-फिरनेमें पराश्रित हो गया। मुझे याद है कि मेरे पिताजी मुझे गोदमें या कंधेपर लेकर अस्पताल ले जाया करते थे। थोड़े दिनों कई इलाज चले। मुझे याद नहीं कि कौन-कौन-सी दवाएं दी गयीं पर पैरकी अवस्था सुधरी नही, बिगड़ती ही गई।

वारावंकीसे लखनऊ थोड़ी ही दूर है। मेरे पिताजी उस समय गवर्नमेंट स्कूलमें अध्यापक थे, संभवतः ७०-८० रुपया वेतन था। वह मुझे लखनऊ किसी योग्य डाक्टरके पास ले गये। उसने क्या वताया, क्या नही—यह तो उस समय मेरी समझके वाहर था। पर यह स्पष्ट था कि पिताजीको इससे संतोप न हुआ। वे चिंतातुर अवश्य थे, और यह वात मै आज अच्छी तरह समझ सकता हूं कि लखनऊमे रहकर मेरा इलाज कराना उनकी सामर्थ्यसे वाहर भी था। यह अच्छा ही हुआ

नहीं तो, न जाने मेरे पैरकी क्या-क्या दुर्दशा की जाती।

संयोगकी बात है कि बाराबंकीके आर्यसमाजमे पंडित गणेशप्रसादजी नामक एक सदस्य थे, जो वहीं किसी सरकारी दफ्तरमें नौकर थे। उनको जल-चिकित्साका थोड़ा-सा परिचय था। उन्हे अनुभव तो अधिक न था, पर इस पद्धतिमे उनकी निष्ठा अवश्य थी। उनके परामर्शसे यह निश्चय हुआ कि मेरे पैरकी प्राकृतिक चिकित्सा की जाय। अस्तु, क्रम आरभ हुआ। भोजनका नियंत्रण हुआ। चोकर मिले हुए आटेकी रोटी, लौकी, तरोईकी तरकारी और साग-पात इन सबका जिस दृढतासे (रुचिके प्रतिकूल) मैंने सेवन किया उसकी प्रशसा मेरे सबधी आज भी किया करते है। क्रमसे कटि-स्नान और मेहन-नहान दिनमे तीन-चार बार लिये जाने लगे। प्रति सप्ताह भाप-स्नान कभी-कभी समस्त शरीरको और कभी-कभी केवल घुटनेको कराया जाने लगा। मुझे यह भी याद है कि कई बार धूपमे लिटाकर घुटनेपर केलेका पत्ता और ऊपरसे चादर उढाकर मुझे धूप-स्नान भी कराया गया था।

लगभग दो मासके अनंतर मेरे दाहिने घुटनेके ऊपरका दर्द खिसककर घुटनेकी बायी ओरके पार्श्वमे आ गया। यह पार्श्व कुछ सूज गया और लाल पडने लगा। भाप और धूपका प्रयोग तो चलता ही रहा, पडित गणेशप्रसादजीके परामर्शसे साफ चिकनी मिट्टीकी पट्टी सूजनपर रखनी आरंभ कर दी गई और कभी-कभी ठंडे पानीकी गद्दी भी रक्खी जाने लगी। मुझे उस दिनकी अबतक याद है जिस दिन मिट्टीकी पट्टी उठाते ही उसके नीचे एक छोटा-सा छेद दिखाई दिया। ऊपर बताये गये सभी उपचार चलते रहे। सूजनके ऊपरका छिद्र धीरे-धीरे बढ़ने लगा, और एक बड़ा-सा फोड़ा बन गया। और

इसके पास ही एक दूसरा छेद आरंभ हुआ। मित्रोंको आशंका हुई कि कही व्रण सेप्टिक न हो जाय। पर पं० गणेशप्रसादजी और पिताजीकी दृढ़ताके कारण उपचार-पद्धतिमे परिवर्तन न हुआ। घावपर मिट्टी और पानीकी गद्दी बराबर क्रमसे रक्खी जाने लगी। संपूर्ण उपचारमें ५-६ मासका समय लगा। घावसे पीव निकलना धीरे-धीरे वंद हो गया और फिर घाव अपने आप भरकर सूख गया। तवसे मेरा लंगड़ापन सदाके लिए मिट गया और आजतक मेरा यह पैर पूर्णत. स्वस्थ है। केवल उस घटनाकी याद दिलानेके लिए मेरे घुटनेके पार्श्वमें दो चिन्ह है—एक तिकोना (एक इंच भुजाका समत्रिबाहु त्रिभुज) और एक पाई वरावर गोल। हम लोगोंकी दृष्टिमें प्राकृतिक एवं जल-चिकित्साका यह प्रयोग एक चमत्कार था। मै इसके लिए पं० गणेशप्रसादजीका आभारी हूं।

तबसे आजतक प्राकृतिक जीवनके मैंने अनेक प्रयोग किये। ज्यों-ज्यों मैने रसायनशास्त्रका अधिक अध्ययन किया और शरीर-रसायनको समझनेका प्रयत्न किया, ओषधि-सेवनकी ओरसे मुझे उपेक्षा होती गई। ओषधिपानका क्षेत्र मै वहुत सीमित समझता हूं। साधारण रोगोंमें ही नहीं, वहुतसे जीर्ण रोगोंमें भी उपवास और भोजन-नियंत्रणसे जितने लाभ होते हैं, उतने ओषधि-पानसे नही। मैं अपने दो अनुभव और देकर इन विचारोंकी पुष्टि करना चाहता हूं।

मुझे भलीभांति स्मरण है कि सन् १९३१ तक जव कभी ऋतु-परिवर्तन होता था, तो मुझे हलका-सा जुकाम और कुछ ज्वर हो जाता था। वर्षमें चार-पांच वार ऐसा होना साधारण वात थी। मैंने अपने अनेक मित्रोंको इस प्रकारका पाया है कि वे ऋतु-परिवर्तनका सहन नही कर सकते। उन दिनों शीतकालमें

में रुई या ऊनके वस्त्रोंका, विशेष प्रयोग करता और कंबल ओढकर वायु-सेवनके लिए निकलता था। सन् १९३२मे मैंने दृढ़तापूर्वक गरम वस्त्रोका परित्याग कर दिया। शीतकालमें भी खुलेमे सोया। फलत तबसे आजतक मैं ऋतु-परिवर्तनसे निरपेक्ष हो गया हूं, और पूर्व प्रकारके जुकाम और ज्वरसे कभी पीड़ित नही हुआ। मेरी कुछ ऐसी धारणा है कि प्रकृतिका विरोध करके मनुष्य स्वास्थ्यका लाभ नही कर सकता। सच्चा स्वास्थ्य प्रकृतिके सहयोगसे ही मिल सकता है।

डाक्टरी उपचारोंके थोथेपनके अनुभवका मुझे एक और अवसर मिला। सन् १९३३ और १९३४के ग्रीष्मावकाशमे मैं कलकत्ते चला जाता था। कलकत्तेके क्लोरीन-मिश्रित पानीका मुझपर बुरा प्रभाव पडा। फलत. मेरा सांस फूलने लगा और मलबद्धता हो गई। मुझे श्वासरोग होनेकी आशका हुई। अपने कुछ और मित्रोसे पता चला कि उन्हें कलकत्तेके पानीसे ऐसा ही कष्ट उठाना पडा था। उन दिनों प्रयाग वापस आकर मैंने कुछ डाक्टरो और वैद्योका भी आश्रय लिया, पर कुछ लाभ न हुआ। बादको मैंने देखा कि यह रोग कालांतरमे स्वयं ही आहारादिके नियंत्रणसे दूर हो गया। संयम और सात्त्विकाहार स्वास्थ्यकी कुंजी है। हां, इस बातकी मैंने शपथ तो नही खाई कि औषधियोका सेवन किया ही न जायगा, पर इसका मुझे पूर्ण निश्चय है कि जिस विस्तारसे औषधियोंका सेवन किया जा रहा है वह न केवल अनावश्यक प्रत्युत हानिकारक है।

—डॉ० सत्यप्रकाश एम० एस-सी०, डी० एस-सी०

: २७ :

गर्भपात

मुझे यह लिखते बड़ी प्रसन्नता होती है कि प्राकृतिक चिकित्साने मुझे एक सुंदर स्वस्थ बच्चेकी मां बननेका सुअवसर दिया। चि० अरविंदके पैदा होनेके पहले मुझे तीन बच्चे हुए थे, पर तीनो ही मरे हुए। गर्भ रह जानेपर ज्यों-ज्यों वह बढ़ता त्यों-त्यों गर्भमें पानी इकट्ठा होता जाता। पेट इतना बड़ा हो जाता मानों दो बच्चे हों। कमजोरी बढ़ती जाती, मेरा मुह पीला पड़ जाता, बच्चा समयसे डेढ़-दो मास पहले ही हो जाता। तीनों बार ऐसा ही हुआ। पहला बच्चा पैदा करानेवाले डाक्टरका कहना था कि पहलेसे जच्चाकी देखभाल की जाती तो ऐसा न होता। अतः दूसरी बार गर्भवती होनेपर मुझे उनकी देखभालमें रखा गया। वह अनेक पेटेंट दवाइयां शुरूसे ही खिलवाते रहे, कई प्रकारके इंजेक्शन दिए। भोजन भी उन्होंने जो बताया वही किया। पर इस बार भी जब मेरी हालत वैसी ही होने लगी तो सब बहुत चिंतामें पड़े। उन डाक्टर साहबकी सलाहसे और भी कई बड़े डाक्टरोंको दिखाया गया, उनकी दवा भी ली। पर बच्चा पहलेकी भांति ही वक्तसे पहले और मरा हुआ पैदा हुआ। डाक्टरोने इसे मेरा भाग्य बताकर छुट्टी पाई। तीसरी बार गर्भवती होनेपर मैंने वैद्योंकी शरण ली। गर्भमे बच्चा बढ़नेपर जब फिर मेरी पहले-जैसी हालत होने लगी तो मै अच्छे डाक्टरकी तलाशमें बंबईके चिकित्सकसमुदायसे निराश होनेके कारण, बंबई-जैसी

बड़ी जगहको छोडकर नागपुर, जबलपुर, दिल्ली, शिलाग,

लेखिका और चि० अरविंद

अहमदाबाद गई। वहाके सभी बडे-बड़े डाक्टरोमे राय ली,

उनकी जेबे भरी, उनके अनुसार चली पर फल पहले दो बार-जैसा ही निकला। अब मेरी निराशाकी हद न रही। मैंने मां बननेकी आशा ही छोड़ दी।

चौथी बार जब मैं फिर गर्भवती हुई तो मेरी बड़ी बहन सौ० सरयू लोथाने आरोग्य-मंदिर, गोरखपुर जानेकी राय दी। वह वहांसे परिचित थी। वहांसे सलाह लेकर बहुत लाभ उठा चुकी थी। मैं उनके साथ गोरखपुर गई। साथमें उनके पति अर्थात् मेरे जीजाजी भी थे। प्राकृतिक चिकित्सा-पर विश्वासके साथ-साथ उन्होंने प्राकृतिक चिकित्सापर साहित्य भी पढ़ा है। रास्तेमे उन्होंने मुझे प्राकृतिक चिकित्साके सिद्धांत समझाए तो मुझे आशा हुई कि मेरी मनोकामना पूरी हो सकती है।

आरोग्य-मंदिरके वातावरणसे मुझे बड़ी खुशी हुई, लगा जैसे, मैं एक बड़े परिवारमे आ गई। वहां आठ-दस बहनें अपने भिन्न-भिन्न रोगोंके लिए चिकित्सा ले रही थी। मेरी उनसे शीघ्र ही जान-पहचान हो गई और फिर मैत्री।

चिकित्सकने मेरे स्वास्थ्यके बारेमे देख-सुनकर बताया, कि यदि स्वास्थ्य स्वाभाविक और कटिप्रदेश पुष्ट हो जाय तो स्वाभाविक रूपसे स्वस्थ बच्चा होना ही चाहिए। इसके लिए उन्होंने मेरा भोजन स्वाभाविक किया—रोटी, सब्जी, फल, दूध। यहांके भोजनके कारण मुझे पता चला कि भूख किसे कहते है और यह भी ज्ञात हुआ कि भूख सादे भोजनको कितना स्वादिष्ट बना देती है।

इस भोजन-सुधारके साथ मुझे सुबह-शाम कटि-स्नान कराया जाता, कभी मालिश मिलती, कभी सारे बदनकी गीली पट्टी। मैं धूप-सेवन भी करती। यही आकर मुझे ज्ञात हुआ

कि मुझे कब्ज रहता था, क्योंकि मैंने यहां जाना कि कब्ज न रहनेपर शरीरमें कितनी ताजगी और हल्कापन प्रतीत होता है और शौच कितनी आसानीसे और थोडे समयमें होता है।

ऊपर बताए भोजनका अभ्यास होनेपर मुझे नमक छोडने-की राय दी गई जो मैं बड़ी सरलतासे कर सकी और शामको रोटी-सब्जीके बजाय फल-दूध दिया जाने लगा। यह परिवर्तन मेरे आनेके दो सप्ताह बाद किया गया।

मैं आरोग्य-मंदिरमें अढाई महीने रही। मेरे स्वास्थ्यमें बड़ा अनुकूल परिवर्तन हुआ। सुस्ती जाकर चुस्ती आ गई। मैं सुबह चार-पाच मील टहलती और शामको तीन मील, पर टहलनेसे मेरी तबियत नही भरती। लगता, और टहलू कि थोड़ी थकान तो आए। हर समय काम करनेको तबियत चाहती रहती। मेरी त्वचाकी रंगत बदली, वह स्वाभाविक सुंदर रक्तवर्ण हो गई। चेहरेपर विचित्र ताजगी छा गई। मैं आश्चर्य करने लगी कि क्यो कोई चेहरेको सजानेके लिए पोमेड पाउडर लगाता है, क्यो नही स्वास्थ्य बढिया बनाता? मैंने घर आकर भी आरोग्य-मंदिरका-सा भोजन रखा और टहलना-घूमना, धूपका सेवन जारी रहा। पूरे नौ महीनेपर सात पौंडके अरविंद बाबू हुए। सारे परिवारमें प्रसन्नता छा गई। मेरी खुशीका तो ठिकाना ही क्या था। सुंदर नन्हा-सा मुन्ना मिला और दवाओंसे पिंड छूटनेके साथ-साथ स्वस्थ रहनेका एक बड़ा उपाय हाथ लगा। इन सबके लिए ईश्वरका धन्यवाद!

—श्रीमती पुष्पा तोशनीवाल

: २८ :

पेटका दर्द

करीव दस साल पहलेकी वात है, दिसंवरका महीना था। उस समय आर्यपुत्र[1] मैट्रिककी परीक्षा दे रहे थे, उसी वीच एक दिन हठात् स्कूलमें ही जाड़ा देकर वुखार आ गया। इलाज

श्रीकमलादेवी और श्रीगोकुलचंद राठी

चला। पर वुखारने उग्र रूप धारण कर लिया। परीक्षा करके डाक्टरोंने मलेरिया कायम किया। दवाई खाते रहे, पर वुखारने कम होनेका नाम न लिया। दो महीने वाद डाक्टरों-

---

[1]श्रीकमलादेवीके पति श्रीगोकुलचंद राठी

ने कहा, मलेरिया निमोनियामें वदल गया है। निमोनियाका इलाज शुरू हुआ। अंतमे हारकर उन्हे अपनी जन्मभूमि बीकानेर ले गए कि वहांकी अच्छी जलवायुका लाभ मिलेगा। वहां भी वड़े डाक्टरोके फेरमें पड़े। एक दिनका अंतर देकर इंजेक्शन शुरू हुए। इंजेक्शनोंसे एक वार वुखार दव जाता, पर कुछ दिनो वाद एक नए उपसर्गसहित उपस्थित हो जाता। डाक्टरी इलाजसे निराश होकर वैद्यक उपचार आरंभ हुआ। ज्वर गया, पर पेटकी पीडा देता गया। जव-तव पेट दुखता, खाना हजम नही होता। मलेरिया भी कभी-कभी दर्शन दे जाता। कुछ दिनो वाद जलवायु-परिवर्तनके लिए दूसरी जगह गए उससे वुखार तो विलकुल जाता रहा, और भी तवियत ठीक हो गई, लेकिन पेटकी शिकायत तो वनी रही। पर उसकी खास परवा न की गई। जव शरीर कुछ स्वस्थ दीखने लगा तो शादी हो गई, मेरे साथ।

दो सालतक शरीर अच्छा रहा। इसी समय एक दिन भागते हुए इक्केसे गिर पडनेसे पेटका दर्द वहुत वढ गया। मालिश वगैरह हुई, पर कुछ लाभ न हुआ। हालत यह हो गई कि खाई हुई चीज हजम न होती। वीच-वीचमे पेटमें जोरका दर्द उठता। दर्दसे छटपटाने लगते। सारे घरवाले घवरा जाते, पर किसीका कोई वश न चलता था। डाक्टर आता, इंजेक्शन, मिक्श्चर तथा दवाईकी गोलिया दे जाता। दवाके नशेमें पाच-छ. घंटे पड़े रहते, घटते-घटते दर्द अपने आप घट जाता। कुछ दिनो वाद फिर वही दौरा और फिर डाक्टर हाजिर। उसे फीससे काम था। वही नशेकी दवा दे जाता। यह देख-देखकर दवासे मेरा विश्वास उठता जाता था। अब कलकत्ता ले गए। वहांके नामी-गिरामी डाक्टरोंको दिख-

लाया। उन्होंने आपरेशनकी सलाह दी। लेकिन हम आपरेशन नहीं करवाना चाहते थे और मेरा तो उससे खास विरोध था।

चारों ओर निराशाका साम्राज्य था, उसी समय एक उत्साही सज्जन, जिनका नाम शायद श्रीहीरालाल था, आरोग्यके ग्राहक बनाते हमारे निवासस्थान पुरलिया आए। आरोग्यकी एक प्रति दूकानपर दे गए। मेरे पतिने सात आने एक प्रतिका दाम उन्हें देने चाहे, लेकिन उन्होंने ग्राहक बननेका आग्रह किया। शामको आनेका वचन देकर वह बिना पैसे लिए ही चले गए। इस बीच हम लोगोंने आरोग्यका वह अंक अच्छी तरह पढ़ा। इस पत्रिकाका रंग, रूप तथा लेख हमें बहुत पसंद आए। उस अंकमें व्यायामसंबंधी भी एक-दो लेख थे। मेरे पतिको व्यायामका शौक पहलेसे था लेकिन नियमित व्यायाम करते नही थे। इन लेखोंके कारण आरोग्य हमें विशेष पसंद आया। हम तबसे उसके ग्राहक बन गए। बराबर आरोग्यका अध्ययन करते रहनेसे हमे प्राकृतिक चिकित्साके प्रति श्रद्धा हो गई।

अब यह विश्वास होने लगा कि प्राकृतिक चिकित्सासे रोग जरूर चला जायगा, शरीर पूर्ण स्वस्थ हो जायगा। आरोग्य पढ़नेका यह परिणाम हुआ कि खाना बहुत सादा खाने लगे। हाथके पीसे आटेकी रोटी, हरी तरकारी और फल, यही खानेमें रहता। पेटके दर्दमें कमी हुई और खाना भी हजम होने लगा। लेकिन खानेमें ज्यों ही विपरीतता होती वापस वही हालत हो जाती। पहले भी दूध लेते ही आंव बनते और अब भी दूध किसी तरह नहीं पचता था। पर शरीरकी कमजोरी नहीं जाती थी, न काम करनेकी हिम्मत आती थी। बीच-बीचमें

आरोग्य पढ़कर उपचार करते, लेकिन उपचारका सही तरीका मालूम न होनेके कारण कुछ फायदा न होता।

बच्चीको लिवर

इसी दरमियान १९४८मे मेरी सालभरकी बच्चीको लिवर्-की शिकायत हो गई। मैं सुनती कि लिवरसे बहुत बड़ी संख्यामें बच्चोंकी मृत्यु होती है तो मेरा हृदय आशंकासे कांप उठता। लेकिन प्राकृतिक चिकित्सामें प्रेम हो जाने और अपने पतिके इलाजमें डाक्टरीकी असफलता देखकर डाक्टरी इंजेक्शनो और दवाइयोंसे तो मुझे खास घृणा हो गई थी। पर घरवालोंकी रुचि मेरे खिलाफ थी। मेरी न चलकर उनकी चली। एलो-पेथीका हरेक उपचार किया गया। कोई फायदा न हुआ। बल्कि दो-तीन नए रोग और हो गए। पेटमे केचुए हो गए और मिरगी आने लगी। हारकर इलाज छोड़ना पड़ा और वह ईश्वरके भरोसे छोड़ दी गई। संयोग, इन्ही दिनों आरोग्यमें "यकृतका उपचार" शीर्षकसे एक लेख प्रकाशित हुआ। मैंने उसके अनुसार अपनी बच्चीका इलाज किया। मिट्टीकी पट्टी, एनिमा और कभी-कभी तेलकी मालिश। खानेके लिए गेहूंका सादा दलिया और फल। बस, इतने ही उपचारसे वह चंगी हो गई। इसी उपचारसे उसके और रोग भी चले गए। अब तो हमें प्राकृतिक चिकित्सापर पूर्ण भक्ति हो गई। इसी समय किसी कामसे मेरे पतिको बंबई जाना पड़ा। वहां अपने कुटुंबियोंके बहुत कहने-सुननेसे इन्हे फिर डाक्टरके चक्करमें पड़ना पड़ा। पेटका एक्सरे करवाया गया। डाक्टरोंने बताया पेटमें बाईं ओर नाड़ीमें सूजन आ गई है और जब उसी नाड़ीपर ज्यादा दबाव पड़ने लगता है तो पेट दर्द करता है। आपरेशन

करवानेकी सलाह दी। लेकिन आपरेशनसे तो वह भागते ही थे। उस डाक्टरका भी कुछ चुकना था सो उसने ले लिया। बंबईसे वापस लौटनेपर हमने आरोग्य-मंदिर, गोरखपुर जानेकी तैयारी की।

गोरखपुरके चिकित्सालयमें हमारे इलाज और रहन-सहन-की उचित व्यवस्था हो गई। वहां हमें बिल्कुल घर-सा वाता-वरण मिला। हम यह न जान पाए कि हम कहीं बाहर हैं।

इलाज

पहले तीन रोज पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टीके बाद एनिमा दिया गया। खानेके लिए चोकरसमेत आटेकी रोटी, उबली तरकारी और सलाद फिर समूचे शरीरकी गीली पट्टी और बादमें फौरन फुआरेका ठंडा स्नान। इसी प्रकार कभी धूप-स्नान, कभी मालिश तथा कभी-कभी गरम ठंडा स्नान और एनिमा वगैरह दिया जाने लगा। पहले हमेशा सुबह उठकर शौच आदिसे निवृत्त होनेके बाद कटिस्नान पांच मिनटका लेकर बादमें दो-तीन मील घूमने जाना पड़ता। शामको भी कटि-स्नान लेकर कुछ व्यायाम कराया जाता फिर कुछ टहलना।

तीन दिन संतरेका रसाहार करानेके बाद तीन दिनोंका निराहार उपवास। इन दिनोंमें पानीके साथ संतरे या कागजी नीबूका रस। उपवासके समय रोज एनिमा दिया जाता था। उपवासके जब तीन रोज निकल गए तब दो रोज एनिमा देनेपर पेटसे मल इतना बदबूदार निकला कि किसीका पास खड़ा होना मुश्किल था। कुछ समझमें न आता था कि पांच दिन कुछ न खानेके बाद यह मल कहांसे आया। फिर ध्यानमें आया कि यही मल आंतोंमें जमा हुआ था, जो कभी-कभी

अपना उग्र रूप दिखाता था। डाक्टर लोग उसीको नाडीकी सूजन कायम करते, आपरेशनकी सलाह देते। भला, इस जमे हुए मलको डाक्टर आपरेशनसे कैसे निकाल पाते? पेट काट डालते और नतीजा कुछ न होता। अब हम दोनो सोचते हैं कि भगवानने ही इन्हें डाक्टरके फदेसे बचाया। अन्यथा, मालूम नही उस आपरेशनका क्या दुष्परिणाम होता। उस मलरूपी विपके निकलनेके साथ-साथ रोग भी निकल गया। उपवाससे अधिक कमजोरी मालूम पडनेपर उपवास तोड दिया गया, फिर उसी पहलेवाले क्रमसे रस-फल देते हुए फिर रोटीपर लाया गया।

इलाज करानेके बाद आज करीब दो सालसे मेरे पति पूर्ण रूपसे स्वस्थ हैं। जो दूध कि अमृत होनेपर भी पहले इनके लिए विप था वही दोनो वक्त अब पीते है और नियमपूर्वक कसरत करते हैं। अब तो सपनेमें भी पेटमें दर्द नही आता। इस प्रकार इन्होने नया जीवन पाया।

देखा गया है कि मनुष्य दूसरे सब उपचारोसे हार जानेपर प्राकृतिक चिकित्साको आजमाने आता है और इससे एक बार ठीक हो जानेके साथ-साथ उसका शेप जीवन भी बडे आनदपूर्वक बीतता है। कारण, जिंदगीमे किस प्रकार रहना चाहिए यह इस चिकित्सा-प्रणालीमे रोगी अपने आप जान लेता है।

हैजेका रोगी

इसके बाद प्राकृतिक चिकित्साको आजमानेके घरमे कई मौके आए। एक गरीब नौकरानीकी लडकीको हैजा हो गया। गरीबके पास डाक्टरी इलाजके पैसे कहा। फिर भी, उस गरीबके पास जो कुछ था सब अपनी लड़कीके दो रोजके इलाजमें

डॉक्टरके हवाले कर दिया। जब उसके पास खानेतकके पैसे न रह गए तब वह एक रोज अपना पानी भरनेका तांबेका गगरा लेकर मेरे पास पहुंची और बोली "मेरा गगरा गिरवी रख लें और मुझे दस-बारह रुपए दे दें। जब मेरे पास होंगे, मैं लौटाकर ले जाऊंगी या आपके यहां नौकरी करके कटवा दूगी।" मैंने कहा, गगरा हमारे तो कुछ कामका नहीं है, और तुम्हें पानी भरनेका कष्ट होगा। इसे तो तुम ले जाओ, रुपए भी ले जाओ, नौकरीमें कट जायंगे। उसे पंद्रह रुपए देनेके साथ-साथ मैंने यह भी कहा कि डाक्टरोंके फंदेमे मत फंसो, भगवानपर भरोसा रखो, वह जरूर तुम्हारी लड़कीको अच्छा करेगा। मैंने उसे बतलाया कि एक-एक घंटेके अंतरसे उसके पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी रखना, खाने-पीनेमें गुनगुने पानी और कागजी नीबूके रसके अलावा और कुछ मत देना। उसने घर जाकर ऐसा ही किया। ईश्वरकी कृपा, इतने ही उपचारसे वह लड़की बिल्कुल अच्छी हो गई और तीसरे दिन अपनी मांके साथ हमारे घर भी आ गई। यह नया जीवन है या नही ?

बच्चीको छोटी माता

गोरखपुरसे लौटनेके दो महीने बाद मेरी उसी बच्चीको, जो अब पांच सालकी है, छोटी माता निकली। हमें तो अब प्राकृतिक इलाजसे प्रेम और डाक्टरीसे नफरत थी। उसका भी यही इलाज किया गया। एनिमा, मिट्टीकी पट्टी और एक दिन सारे शरीरकी गीली पट्टी। रसाहार तथा दो दिनके उपवाससे बच्ची दस दिनमे अच्छी हो गई। घरके सब डर रहे थे, लेकिन हम दोनोंको पूरा विश्वास था कि इस इलाजसे यह जरूर अच्छी हो जायगी।

चार साल होने आए हमने आरोग्यके ग्राहक बननेके बाद कोई डाक्टरी दवाई नही ली और न बीमार ही पडे। एक तरहसे डाक्टरका हमारे घर आना ही बंद है। कभी कोई फोड़ा हुआ, कोई जल गया या किसीको चोट लग गई बस ली मिट्टी और लगाई। घरमें मिट्टी, पानी और एनिमाका राज चलता है। पहले तो अंग्रेजी दवाइयोंकी शीशियोका राज था। शीशियां आलमारीकी शोभा बढाती रहती थी। मानो घर कोई डिस्पेंसरी हो। अब हमारे पास उनकी जगह स्वच्छ मिट्टीका मटका भरा है।

जिस मिट्टी और पानीका हमारा यह पुतला बना है उसकी मरम्मतके लिए हमे किसी दवाकी क्या दरकार है? मिट्टी, पानी, पवन, सूर्य और आकाशको हमारे हजार-हजार नमस्कार!

—श्रीमती कमलादेवी राठी

(२)

मेरे पेटमे मीठा-मीठा दर्द हमेशा बना रहता। न खाता तो बंद हो जाता। दो-चार दिनमे फिर शुरु हो जाता। पिताजी कही बाहर गए थे, उनके आनेमे देर थी। मेरी माने वैद्यजीका इलाज करवाया। वैद्यजी लवणभास्कर चूर्ण और हिंगाष्टककी गोलियां देने लगे। कुछ समयके लिए दर्द होता और फिर बंद हो जाता। इस प्रकार तीन महीने बीते।

फिर मुझे बिहारशरीफ ले गए जो हमारे समीप ही है। वहां मल, मूत्र तथा खूनकी जाच करके डाक्टरका इलाज हुआ पर कुछ बना नही। अतमे पटनेकी बारी आई। एक्सरे किया गया और हर तीन-तीन घंटेपर सूइया भोकी जाने लगी।

मेरी तबियत दिन-प्रतिदिन ज्यादा खराव होने लगी। जी मिचलाता रहता, कै भी होने लगी। दर्द और वढ़ता गया। इस प्रकार तीन हफ्ते गुजरे। मेरी हालत सुबहके चिराग-सी होने लगी। डाक्टरोंने राय दी राजगृहका हवा-पानी अच्छा है वहां जाना चाहिए।

राजगृह गया। वहांके मशहूर तथा अनुभवी वैद्यकी दवा शुरू की। दवा मुंहमे जाते ही कै होने लगती। अंतमें दवा छोड़कर रसाहारपर रहने लगा। दर्दमें कुछ घट-वढ़ चलती रही। किसीने कहा, पेटमें जख्म है। घरके लोग घवड़ा उठे, मुझे पटना जनरल हास्पिटल ले गए। वड़े-वड़े अनुभवी सिविल सर्जनोंने जांचकर देखा। पेटमें जख्म वतलाया। मैं आपरेशनके लिए भर्ती किया गया। उसी समय मेरे पेटमें जोरोंका दर्द हुआ, हरे रंगकी उल्टी हुई, पैखाना बंद हो गया। और कभी-कभी वेहोशी होने लगी। वे मेरे जीवनसे निराश हो गए। आठ दिन वाद उसी हालतमें मैं हास्पिटलसे निकाल दिया गया। कहा गया कि आपरेशनके पहले ही लड़का मर जायगा। आपरेशन होना संभव नही है; क्योंकि मरीज बहुत कमजोर हो गया है। आपरेशन मुलतवी करके होशियार डाक्टरोंकी सलाहसे खानेकी दवाकी फेहरिस्त वनी। दवाइयां खरीदी गईं। पर शरीरमें दवाकी तेजीको वरदाश्त करनेकी शक्ति नहीं रह गई थी और घरमे रुपयोंकी अत्यंत कमी हो गई थी। कर्ज देनेवाले भी तंग आ गए थे।

अंतमे पिताजी घर ले आए और अपनी पुरानी चिकित्सा आरंभ की। कटिस्नानका टव घरमे था ही। पिताजीकी आज्ञासे दिनमें तीन वार पानीमें वैठने लगा। पिताजीको कइयोंने कहा कि तुम पागल हो गए हो, इतने कमजोर वच्चेको

पानीमें विठाते हो। पिताजी कभी-कभी मुझसे पूछते, "कैसी है तबियत भूषण?" मैं रोने लगता। पिताजी कहते दवा खाते-खाते तुम्हारी यह दशा हुई है। अब प्रकृतिके सिवाय तुम्हारी रक्षा कोई नहीं करेगा। तीन-चार दिन बाद दर्द घटने लगा। कुछ-कुछ नींद भी आने लगी। संतरेका रस लेने लगा।

लगभग पंद्रह-बीस दिनमें दर्द मिट गया। भूख चमकी। अब दूध भी पचने लगा। इस तरह मैं कुछ दिनोंमें ही स्वस्थ हो गया।

अब मुझे हर दवासे घृणा हो गई है। जब कभी कोई तकलीफ होती है तो पिताजीकी आज्ञानुसार प्राकृतिक चिकित्सा कर लेता हूं और तकलीफ रफा हो जाती है।

—श्रीभूषणप्रसाद

: २६ :

आंव और ज्वर

मैं मुंगेर—विहारका रहनेवाला हूं। जहां अधिकतर चावल मुख्य खूराक है। दोनों वक्तके भोजनमें तो लोग चावल खाते ही हैं जलपानमें भी भूजे अथवा चूड़ेके रूपमें वही मुख्य रहता है। देहातोंमें ढेंकीका चावल चलता है पर उसका कन (लाल परत) निकाल दिया जाता है। उससे वड़ी वुराई भातसे मांड़ भी निकाल देना है। दोनों वक्त इसी प्रकारका भात, दाल तथा थोड़ी-सी तरकारी और चूड़े-भूजेका जलपान मेरे विद्यार्थी-जीवनभर चलता रहा। इससे मुझे सिर्फ एक वार सवेरे पाखाना होता और कब्ज रहता। पर मैं नही समझता था कि कब्जके भी निवारणका उपाय करनेकी जरूरत होती है। इसकी बुराई मैंने वहुत पीछे जानी, शौच दोनों समय जाने लगा। पर मेरे जानेमात्रसे होने तो नही लगा। भोजनालयके व्यवस्थापकजीसे शिकायत की तो उन्होंने मुझे सवेरे उठते ही और दिनमें कई वार पानी पीनेकी सलाह दी। फल यह हुआ कि मेरा कब्ज पचास प्रतिशत दूर हो गया। काफी पानी पीनेपर मेरा विश्वास जो उस समय जमा वह आजतक मौजूद है और उससे लाभ पा रहा हूं लेकिन सिर्फ पानी पीनेकी मात्रा वढ़ानेभरसे तो मनुष्य स्वस्थ नही रह सकता। ऊपर वताया गया भोजन किशोरा-वस्थासे युवावस्थाकी ओर जानेवाले व्यक्तिके लिए कैसे उपयुक्त हो सकता है? दूध, दही, फल, शाक, भाजी और गेहूंके पूर्णतः अभावमें शरीरका विकास कैसे हो सकता है और रोगसे कैसे

वचा जा सकता है। आजसे वीस साल पहले जिस आंवकी वीमारीका सूत्रपात हुआ उसका यही कारण था। स्वादेंद्रिय और जननेंद्रियका असंयम भी मैं दूसरा कारण मानता हूं।

आजसे पांच साल पहलेतक मैं अपनी वीमारीको टालता रहा। टालता रहा इसलिए कि मैं अपना साधारण काम-काज किए जा रहा था। कोई विशेष वाधा नही होती थी। सन् १९४७ ई०के प्रारंभमें आंवने भयंकर रूप धारण किया। कमजोरी वढने लगी और नियमित वुखार भी रहने लगा। आंवके साथ वुखार—यह वात समझमें नही आती थी और जव थोड़ा कफ और खांसी भी आने लगी तव मुझे यक्ष्माका महारोगी मान लेनेमे क्या देर हो सकती थी? दौड़ा-दौड़ा पटने पहुंचा और छ. महीनेतक अंग्रेजी दवाएं चली। सात सौ रुपए स्वाहा हुए दवाके पीछे।

चिकित्साके प्रारंभकी घटना, जिसे मैं जीवनभर नही भूल सकता—पाठकोके सामने रखनेमें अपनेको रोक नही सकता। पटनेके प्रसिद्ध चिकित्सक डाक्टर शरणसे मैंने जाच कराई। उन्होने आंवका और वुखारका नुस्खा दिया। उससे एक हफ्ते-तक लाभ नही नजर आया, तव दुवारा शारीरिक जाच हुई। इस वार उन्हे मेरे वाए फेफड़ेमे प्लुरसीके चिह्न मिले। दो माहतक विस्तरपर रहने और काफी सावधानीसे रहनेकी चेतावनी मिली। और अंतमे उन्होने एक्सरे करानेकी आज्ञा दी। जिन दिनो मेरी चिकित्साका इस प्रकार क्रम चल रहा था, मैं प्लुरसीके वाद टी०वी० और उसके वाद मृत्युकी कल्पनामे घड़ियां विता रहा था। दिलसे मृत्युका वह भूत तव भागा, जव पटनेके ही सर्वश्रेष्ठ डाक्टर श्री टी० एन० वनर्जीसे अपनी जांच कराई और उन्होने वताया कि प्लुरसी होनेकी वात

गलत है, बुखार आंवके कारण ही है।

अव श्रीवनर्जीका इलाज चला। सारी दवाओंकी आजमाइशके वाद भी जब आंवका कीड़ा पाखानेमे मौजूद ही पाया गया तो माननीय डाक्टर साहवने कहा, कि "मैं क्या करूं, मैं तो अंतिम दवातकका प्रयोग कर चुका हूं।" और जब पाखाना जांचनेवाले डाक्टरने अंतमें यह कहा कि "यह बीमारी तो मुझे भी है" तव तो मेरे आश्चर्यका कोई ठिकाना नहीं रहा और धीरज तथा संतोष लेकर मैं घर वापस आया।

इस चिकित्साके चक्करके बाद दो वर्षोंतक मुझे स्वास्थ्यप्रद जलवायुमें रहनेका मौका मिला। अच्छे जलवायुका मेरे स्वास्थ्यपर अच्छा असर रहा और आंव तथा बुखार दोनों उपरोक्त अवधिमे नही रहा। गतवर्ष जव मेरी वदली खड्गपुर (मुगेर)मे हुई तो कुछ दिनों बाद मुझे पुनः आंवके आसार दिखाई पड़ने लगे। आरोग्य-मंदिर, गोरखपुरके संचालकसे मैंने पत्र-व्यवहार किया। उन्होंने पूरी सुविधाओंके साथ मुझे अपने आरोग्य-मंदिरमें चिकित्सा करानेकी स्वीकृति दी। सिर्फ पचीस दिन मै आरोग्य-मंदिरमें रहा और मुझे विशेष आश्चर्य और प्रसन्नता हुई जव इसी अवधिमें मैंने अपने रोगको पूर्णतः निर्मूल पाया। वहां मेरी चिकित्सामें मुख्य बातें यह थी—१–एक सप्ताहका पूर्ण उपवास, २–लगातार सोलह दिन मिट्टीकी पट्टी (पेड़ूपर) और एनिमा, ३–कटिस्नान और वायु-सेवन (प्रतिदिन)। समय-समयपर कमरकी गीली पट्टी, धूप-स्नान, वाष्प-स्नान और मालिश आदिका प्रयोग भी मुझपर हुआ। वहां मुझे कई नए अनुभव हुए। एक सप्ताहतकका उपवास मैंने जीवनमें कभी नहीं किया था और जव इतने लंबे—पर वास्तवमें छोटे उपवासको घूमते-फिरते

निर्विघ्न समाप्त कर लिया तो मैं बहुत उत्साहित हुआ। मेरी चिकित्साका सबसे बड़ा काम इसी उपवाससे निकला। दूसरा महत्त्वका काम एनिमाद्वारा आंतोंकी सफाईका था। एनिमा-द्वारा उपवासकी पूरी अवधिभर आंतोंसे मल-निष्कासन होता ही रहा। एक दिन पाखानेकी जगह काला तरल पदार्थ निकला।

आरोग्य-मंदिर छोडनेके बाद महीनोंतक मेरा भोजन उबली तरकारियां, मट्ठा, फल तथा दलिया रहा। अब भी अधिकतर मैं इन्हीं चीजोंका व्यवहार करता हूं। अंग्रेजी दवाकी चिकित्साके अंतमें मैं वजनदार हो गया था पर रोग मौजूद था। प्राकृतिक चिकित्साके अंतमें मैं काफी दुबला हो गया था पर रोग निर्मूल हो चुका था। हां, धीरे-धीरे वजन बढ़कर अब साधारण हो गया है। बल और स्फूर्ति तो मेरे अंग-अंगमें नाचती रहती है। कामसे थकना मैं भूल गया हूं।

—श्रीजयदेव सिंह

: ३० :

मीयादी बुखार

मेरी छः वर्षकी बच्ची अलकाने पांच तारीखकी शामको अपने पेटमें दर्द बताया। मामूली अपचका दर्द समझा गया। श्रीमतीजीने बताया कि दर्द कई दिनोंसे हल्का-हल्का चल रहा था और अकसर इसी वजहसे वह बीचमें रोटी छोड़कर उठ जाती है।

उसे एक शामको जोरका बुखार चढ़ा। पेटपर मिट्टीकी पट्टी रखनेसे सुबहतक उतर गया। लेकिन सातको सुबहसे फिर चढ़ा। मामूली उपचारसे उस दिन न उतरा। सोचा प्रकृतिने रोगको बाहर निकालनेका रास्ता खोज निकाला है अब ठीक हो जायगी।

पर प्रकृतिका रास्ता चौड़ा होता गया। ज्वर अविराम गतिसे बढ़ा और १०३, १०४ डिगरीपर जाकर ठहर गया। पेटका दर्द भी कुछ बढ़ गया। पहले सप्ताहमें ज्वर १०५ डिगरीपर जाकर रुका। गलेपर लाल दाने खोजे गये, किंतु दिखाई न पड़े। पर लक्षण मीयादी बुखारके थे सुबह ज्वर प्रायः कम रहता, शामको बढ़ जाता।

बुखार चढ़नेके बाद खानेको उसे दूध तक भी न दिया गया। मौसमी और पालकका रस मिलाकर दिया जाता रहा। दूसरे हफ्ते कुछ खांसी भी रही। रोज नीबू मिले पानीका एनिमा दिया जाता रहा। किन्तु ज्वर शामको रोज बढ़ जाता।

इस लड़कीकी तंदुरुस्तीपर मुझे नाज था। अब उसकी हालत देखकर कलेजा मुंहको आता था।

दूसरे सप्ताहके अंतमें जब उससे पट्टी रखनेके लिये कहा, तो उसने जागते हुए भी सुना ही नही। परीक्षा करने-के लिये और भी कई प्रश्न पूछे। प्रकट हुआ कि कुछ-कुछ बहरापन भी हो चला था। मनमे भय समा गया। डाक्टरीके नामपर किसी भले आदमीको नही न्यौता गया था। हम अपनी डाक्टरी चला रहे थे, और बच्ची मौतके मुहमें थी। सुनभी रखा था कि इस बुखारके लिए नव्वे नव्वे रुपएकी गोलियोंका सेट डाक्टरोंने ईजाद कर रखा है, और बहुत दिन पहले एक मित्रको वह प्रयोग करते देख भी चुके थे। उसके मुकाबलेमें मिट्टी, एनिमा और मौसमी का रस बड़ी हल्कीसी चीजें मालूम देने लगी।

मेरे मनकी इस डावाडोल दशामें बच्चीके दस्तोंकी तादाद बढ़नी शुरू हुई। दिनमें दस-पंद्रह और रातको आठ-दस। सारी रातका जागरण रहने लगा। मलमे कभी आव निकलता, कभी रंग हरा-पीला होता, कभी बिलकुल काला दिखाई देता। एक दिन शामके समय वह सन्निपातकी हालतमें बड़बड़ाने लगी, तो होश फाख्ता हो गए। मनने कहा कि घरमे ही प्राकृतिक चिकित्सा आजमानेमें कही गलती तो नही की। माथेपर गीली पट्टी रखी। दिनमे प्राय तीन चार बार उसके पेटकी ठंडी गरम सिकाई की जाती और ठंडी पट्टी बदल बदलकर रखी जाती। रातको जागनेके लिए कभी मेरी कभी पत्नीकी ड्यूटी रहती। लेकिन बच्चीके हाड़ निकल आए थे। ज्वर कम नही हो रहा था।

अब मलमे खून भी आने लगा था। चिकित्सा सूत्र

अध्ययन करके विधिवत् की जा रही थी। दिनमें एक बार उसका सिर ठंडे पानीसे भिगोकर पोंछा जाता फिर सारा बदन अंगोछा जाता। मिट्टीकी पट्टी और एनिमा चलता। इस कमजोर अवस्थामें विना विस्तरेसे उठाये शरीरका विष वाहर निकालनेके सारे प्राकृतिक साधनोंका संतोषके साथ प्रयोग किया गया। कई वार पैरोका गरम स्नान भी दिया गया।

तीन सप्ताहके भीतर मौसमी और पालकके रसके अलावा उसे खानेको कुछ भी न दिया गया। एक दिन तीसरे सप्ताहके आरंभमें दोपहरको ज्वर पांचकी सीमा भी पार कर गया। मैं वहुत अधिक घवरा गया, तो वड़े भाई साहवने मुझे आश्वासन दिया। निश्चय हुआ कि वच्चीको सारे बदनकी गीली पट्टी दी जाय।

गरम पानीकी दो वोतलें उसके दोनों पैरोंके पास रखीं। एक चादर भिगोकर वदन नंगा करके उसपर लपेटी। ऊपरसे गरम चादर लपेटकर पौन घंटेके वाद देखा तो बुखार एक डिगरी कम हो गया था। अधिक कम करना ठीक नहीं था। अतः उसे सूखे चादरमें लेकर वदनको अच्छी तरहसे रगड़-रगड़कर पोंछ डाला। फिर हाथसे गरमी पैदा की। अव उसकी तवियत काफी खुश थी। आध घंटा वाद उसका वुखार आधा डिगरी और वढ़ गया। फिर भी वह साढ़े चार डिगरी तक ही रहा, और वह खतरेसे वाहर थी।

तीसरे सप्ताहके वीचमे ही वुखार एक दिनमें कभी एक डिगरी घट जाता कभी दो डिगरी और शामके समय वढ़ जाता। वाइसवें दिन वुखार विल्कुल उतर गया। फिर भी नौ दिन तक उसे मौससी और पालकका रस ही दिया

जाता रहा। निश्चय किया था कि चिकित्साके सिद्धांतोंके विरुद्ध न जायंगे, क्योंकि अपने लिये अंतिम संतोष यही हो सकता है। इस बीमारीमें बुखारके लौट आनेका बड़ा डर रहता है।
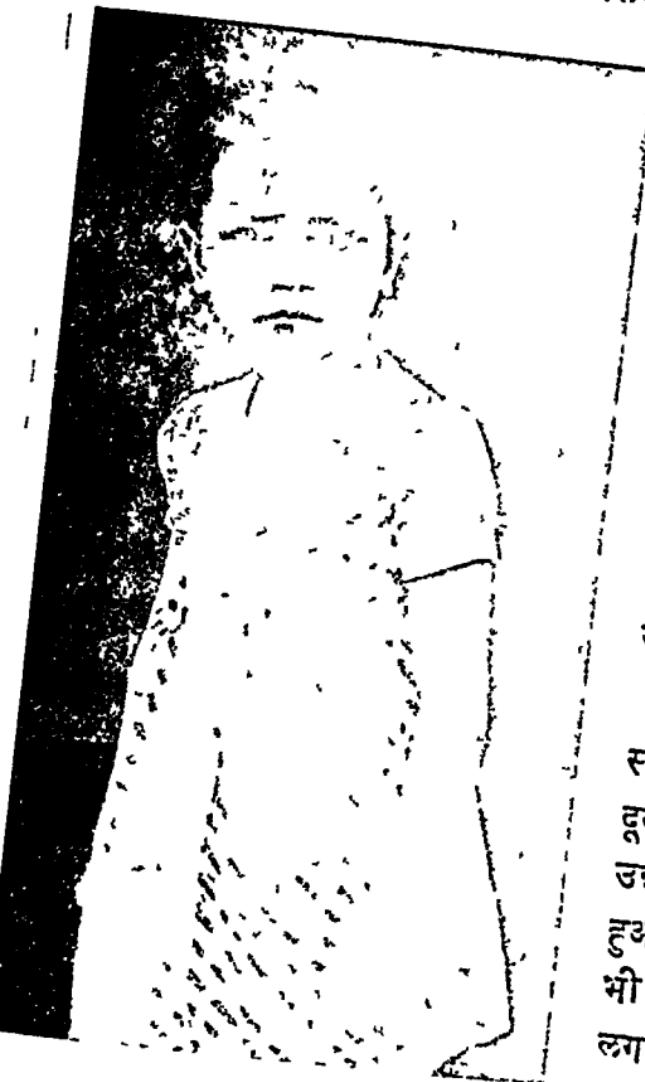
अब टमाटर बिना पकाये, लौकीकी बिना मसालेकी तरकारी उसे दी गई। बुखार उतरनेके दो सप्ताह बाद उसे रोटी दी गई।

फिर उसका स्वास्थ्य जो दिन दूना रात चौगुना उन्नत होना शुरू हुआ तो स्वयं हमें भी आश्चर्य होने लगा। अब किसीको प्राकृतिक-चिकित्साका सिद्धात समझानेके लिये अलकाको नमूनेके रूपमें सामने खड़ी करता हूं।

—आनंदप्रकाश जैन

: ३१ :

विविध

दिनमें सात वजेका समय होगा, पासके इंटोंके भट्ठेका रखवाल एक मिट्टी ढोनेवाली मजदूर लड़कीका हाथ पकड़े लाया। लड़की रो रही थी। मैंने समझा कि किसीने इसे मारा है, उसीकी फरियाद लाया है। दरियाफ्त करनेपर मालूम हुआ कि लड़कीको किसी आदमीने नहीं वल्कि विच्छूने डंक मारा है, वाएं हाथकी कानी (कनिष्ठिका) अंगुलीके विलकुल सिरेपर। पर पीड़ा व्याप रही थी उसके सारे शरीरमें। उस आदमीने कहा, वावू, 'एके विच्छी मरले वा, कौनो दवाई हो तो दे देईं, मैंने बैठानेको कहा। तीन-चार सेर साफ मिट्टी मंगवाकर सनवाई। लड़कीको वहीं पक्केपर लिटा दिया। सनी हुई मिट्टीकी एक तह नीचे विछवाकर उसके ऊपर उसका पूरा वायां हाथ फैलाया और ऊपरसे पूरे हाथपर मिट्टी छोप दी गई। दो-तीन मिनटके वाद मैंने पूछा, दर्द कम हुआ? लड़की रोती हुई वोली, 'ऊ विछिया मार नाहीं गईल, एहसे करकत वा (वह विच्छी मारी नहीं गई इसलिए कड़क रही है)। देहाती समझ है कि जो विच्छू डंक मारे उसे मार डालना चाहिए, तो जहर कम चढ़ता है। मैंने लड़कीसे कहा कि इस मिट्टीमें जादू है, देखो अभी जहर उतारती है। दस मिनटके वाद उसके रोनेमें कुछ कमी हुई। मैंने पूछा, अव क्या हाल है? वोली, 'अवहिन रेंगत वा' (अभी रेंग रही है)। मुझे इससे अंदाज मिला कि आधा दर्द जाता रहा है। फिर नई मिट्टी वदल दी।

अब लड़कीका रोना बिलकुल खतम हो चुका था और उसकी कुछ सोनेकी प्रवृत्ति थी। सिरहाने एक टाट रख दी गई, जिसपर सिर रखकर उसने आखे बंद कर ली। पद्रह मिनट बाद फिर
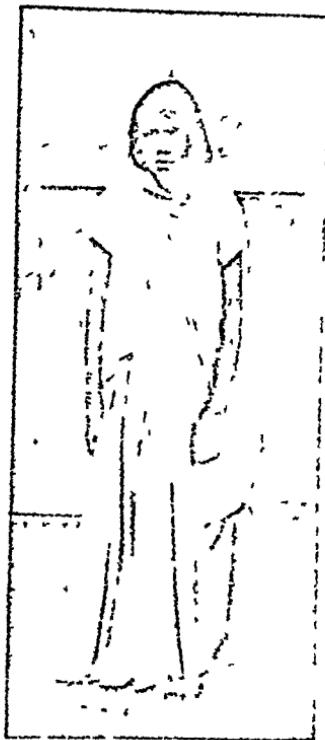
मिट्टी ढोनेवाली मजदूर लड़की

नई मिट्टी बदल दी। इतना करनेमे कुल घंटा सवा घंटा लगा होगा। लड़कीने आंखे खोली और पूछा, 'जाई' ?' (जाऊ) मैंने कहा, दर्द न हो तो जाओ। उठी और हाथ सामने करके जानेको तैयार हुई। मैंने कहा, हाथ क्यो सामने कर रक्खा

है, दूसरे हाथकी तरह लटकानेमें कोई कष्ट होता है ? बोली, कुछ नहीं। मैंने कहा, तब दूसरे हाथकी तरह लटका लो और दोनों हाथ हिलाती अपने कामपर चली जाओ। यही किया उसने।

जिस मिट्टीने मुझे हमेशा ही सफलता और संतोष दिया है आज ही वह व्यर्थ क्यों होती ?

आरोग्य-मंदिरमें तो मैं मिट्टीके चमत्कार रोज ही देखता हूं। लेकिन वहां तो अधिकांश डाक्टर-वैद्योंसे निराश हुए मंद–जीर्ण (Chronic) रोगोंके रोगी ही आते हैं, उनपर मिट्टी, धूप, हवा, पानी, भोजन, उपवास, मालिश आदि कई अस्त्रोंका उपयोग होता है, इसलिए ठीक पता नहीं चलता कि इनमेंसे किस अस्त्रने रोगको दूर करनेमें कितना काम किया। पर जहां मिट्टी-ही-मिट्टीका उपयोग करके फायदा उठाया गया हो तो उसीकी महिमा मानी जायगी।

मैंने बहुत अवसरोंपर खालिस मिट्टीका उपयोग करके लाभ पाया है—कब्जपर, सूजनपर, दर्दपर, किसी जीवके डंक मारनेपर, फोड़ेपर, फुंसियोंपर। इच्छा होती है जिन-जिन रोगोंपर प्रयोग किया है उनमेंसे प्रत्येकके उदाहरण दूं, पर पहले इस विषयपर लिख चुका हूं और आगे भी लिखना ही है, न मिट्टी कहीं जाती न मैं ही अभी मिट्टीमें जाता हूं। इसलिए आज अधिक उदाहरणोंसे लेखको लंबा नहीं करूंगा।

लेकिन एक नए उदाहरणका लोभ तो नहीं छोड़ सकता। कलकत्ताके प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक श्रीकुलरंजन मुखोपाध्यायकी—जो कलकत्ता मारवाड़ी-रिलीफ-सोसाइटीके प्राकृतिक चिकित्सा-विभागके मुख्य चिकित्सक भी हैं—बहन

श्रीमती सावित्री देवी अपने पतिके साथ यहां रहती हैं। बहनपर भी भाईके प्राकृतिक चिकित्सक होनेका असर खूब पड़ा है। वह

श्रीमती सावित्री देवी और रंजन

अपने और अपने बच्चोंके छोटे-मोटे रोग प्राकृतिक चिकित्साके ही सहारे दूर करती है। पिछले दिनों उसके बड़े लड़के "रंजन" को मियादी बुखार हुआ। दौरा हल्का नहीं था। मांका हृदय बच्चेकी कठिन बीमारीसे बहुत घबरा गया था। कभी-कभी श्रीसावित्री देवीका विश्वास डांवाडोल होने लगता। सोचतीं कि मैं डाक्टर-वैद्यको न बुलाकर सिर्फ मिट्टी, पानीके सहारे लड़केको रखकर कोई अपराध तो नहीं कर रही हूं। यहीं

लड़केको हाथसे न खो बैठूं। एकाध बार कह उठती, "दया करे उचित परामर्श दिवेन (ठीक राय दीजिएगा), आमि पूर्णतः आपनादेर भरसाय आछि (मैं आपलोगोंके भरोसे हूं), आपनारा मायेर हृदय जानेन (आप मांका हृदय जानते हैं) आमार ऐक भाई छपराय एई रोगे मारा पड़ेन (मेरे एक भाई छपरामें इसी बीमारीसे चले गये) ताई आमार हृदय भय पाच्छे (इसलिए मेरा जी डरता है)। वलून, आमार छेले कतदिने आरोग्य हते पारिवे (वताइए मेरा बच्चा कबतक ठीक हो जायगा)।" बावजूद घबराहटके, उपचार जो बताया गया उसमे रत्तीभर भी फ़र्क नहीं किया उसने, लड़केसे सारे नियम ज्यों-के-त्यो पलवाये। २७ दिनके बुखारमें लड़का सूखकर कांटा हो गया था। लड़केका बुखारके अंतिम दिनोंमें खानेकी कई चीजोंपर मन चलता। एक दिन वह बोली, "दया करे ऐक दिन एसे छेलेरसमुखे जान कि ताके कखन की खेते दिते हवे (आप कृपा करके लड़केको देखकर उसके सामने वतला दीजिए कि उसे कब क्या खानेको दिया जायगा)।" मैं गया तो लड़का चुप था। वह सशंक था कि क्या यह मेरे खानेकी इच्छाकी पूर्ति करेंगे ? मैंने पूछा, कहो, रंजन, क्या खाना चाहते हो ? उसने मक्खन, दही, किशमिश तथा और कुछ चीजोंपर अपनी इच्छा जताई। मैंने कहा, सब चीजें तुमको बड़ी जल्दी मिलेंगी। किशमिश तो उसी दिनसे देनेको कह दिया। लड़का बहुत खुश हो गया कि उसकी एक मांग तो आज ही पूरी हो गई। मैने देखा कि मांनें लड़केको अबतक कभी कोई विना वतलाई चीज खानेको नही दी थी। एनिमा, स्पंज वगैरह वरावर जारी रखा था। अच्छे होनेके कुछ दिनों वाद उस लड़केको मैंने देखा। मियादी बुखारके पहले वह जितना तंदुरुस्त था अव उससे अधिक तंदुरुस्त था।

अधिक कमजोरीके कारण लड़केको खाटसे अलग करके टब बाथ नही दिया जा सकता था। वह काम पेटपर बराबर मिट्टीकी पट्टीसे ही लिया गया था। रंजन चित्रमें अपनी माके पास खड़ा है।

लेकिन मिट्टीका खास फायदा तो श्रीसावित्री देवीने स्वयं उठाया।

एक दिन तीसरे पहर अपने पतिके साथ मेरे यहां आयी। हमेशा खुश रहनेवाली सावित्री आज पीड़ित थी। बोली, मैं कल कलकत्ता जानेको हूं, मेरी मां बहुत बीमार है। मैंने समझा कि मांकी बीमारीकी चितासे उसका चेहरा उदास है। पर फिर उसने अपने बायें हाथकी काखके पास पहुंचेपर एक फोडा दिखाया। बोली, कल मुझे कलकत्ता तो जाना है और फोडेमें बेतरह वेदना है। मैंने पूछा, इसके लिए क्या कर रही हो? बोली, पानीकी पट्टी बांधती हूं। मैंने कहा, मिट्टीकी बाधो। उसने पूछा चिराना तो नही पडेगा? मैंने कहा, यह कोई नहीं कह सकता पर कुदरतपर भरोसा रखो।

मिट्टीको मौका देकर देखो। जिस रिक्शेपर वह आई थी उसीपर एक छोटे बोरेमें आधा बोरा मिट्टी घर ले गई। संयोगवश दूसरे दिन उसकी माका कलकत्तामें देहात हो गया। उसके कलकत्ता जानेकी जरूरत रफा हो गई। तीसरे दिन आदमीसे कहलाया कि मेरा फोड़ा फूटकर साफ हो गया है। काफी बड़ा फोडा था और बडा दुखदायी। मिट्टीने उस-पर अपना पूरा जौहर दिखाया।

इस लेखका तीसरा चित्र 'ताईजी' का है। 'ताईजी' ने एक स्थानीय वैद्यने पूछा, आप भी ताऊजीके मतमें, यानी प्राकृतिक चिकित्साकी माननेवाली हैं क्या? जवाब मिला

'नहीं, मैं इन लोगोंकी सब बातें नहीं मानती, लेकिन दवासे तो मुझे बचपनसे ही नफरत है। इन लोगोंसे इतना मैंने जरूर जान लिया है कि शरीरमें कुछ खराबी दिखाई दे तो खाना तुरंत बंद कर देना चाहिए। दूसरी बात, कहीं दर्द हो तो मैं

ताईजी

गर्म पानीकी थैलीका इस्तेमाल करती हूं, इससे बहुत राहत मिल जाती है। वैद्यने कहा, यह तो हम लोग भी बतलाते हैं। 'ताईजी' बोलीं, 'आप लोग भी बतलाते होंगे, गरम पानीपर किसीका इजारा थोड़े ही है। हां, इन लोगोंकी एक चीज जो मुझे ज्यादा

पसंद है, वह मिट्टी है। यह कई चीजोंपर चलती है। वैद्यजीको मिट्टीके गुणोंका पता नही था। पूछने लगे, मिट्टीका प्रयोग ये लोग किन-किन वीमारियोमें करते है? 'यह मत पूछिए, ये लोग मिट्टीके पीछे पागल रहते है। यो तो इन्हे मै वडा पागल गिनती हूं, जिस चीजके पीछे पडते है पागलकी तरह लगते है, आगे-पीछे कुछ देखते ही नही। लोभी जैसे मानता है कि "सर्वे गुणा काचनमाश्रयन्ते"—सोनेमे सारे गुण देखता है वैसे ही ये लोग मिट्टीमें सब रोगोको दूर करनेकी शक्ति मानते हैं। मैं इनकी वड़ी-वड़ी डीगोकी वात तो नही समझती लेकिन कई तरहके दर्द, फोडे, फुंसी, कटे, जलेपर, मैंने मिट्टीका फायदा देखा है। उस दिन रातको खौलते दूधका 'टोपिया' नौकरके हाथसे छूट गया। दूध मेरे दोनो पावोपर गिरा। पाव जल-से उठे। कुछ न सूझा कि क्या करूं। वह पास ही कुर्सीपर बैठे थे। उस नौकरको दूध गिरनेके लिए तो कुछ न बोले, पर जोरसे डपटकर कहा, दौड़कर मिट्टी सानकर ला। दो-तीन मिनटके अंदर ही वह दो-तीन सेर मिट्टी लाया और मेरे दोनो पैरोपर खूब मोटी-मोटी लगा दी। पद्रह मिनटके वाद दूसरी वदल दी गई। यह भी पंद्रह-वीस मिनट रही होगी। उन्होने तो कहा, एक पट्टी और वदल लो, वाधे-वाधे सो जाओ, आग खुले तब उतार देना। पर मुझे वहुत भारी लग रही थी, इसलिए मैंने पट्टी उतार दी। मुझे शंका थी कि फफोले पड़ेगे, क्योंकि जलेपर मैंने कभी मिट्टी लगाते नही देखा था। पर सुवह मैंने देखा कि पैरमे कोई फफोला नही पड़ा। मिट्टीकी तो मै भी कायल हूं।

टव वाथ भी मैंने कभी-कभी लिया है, लेकिन ठंडे पानीमें मै कांपने लगती हूं, इसलिए उसके उपयोगकी मै हिम्मत नही करती।

सूरदास कहते हैं :—

'यशोदा देख्यो कृष्णहि माटी खात'

कृष्ण कुछ समझकर ही मिट्टी खाते होंगे। पर कृष्णकी देखा-देखी हम मिट्टी खाने लगें तो हानि उठायेंगे। बड़ोंकी रीस—देखा-देखी करनेमें नुकसान होता है। बड़े जो करें वह न करके जो वह कहें सो करना चाहिए। हमें तो मिट्टी लगाकर ही संतोष करना चाहिए।

'मारूफ' नामके एक उर्दू कविने मिट्टीके बखानमें एक उम्दा शेर कहा है, जो पाठकोंकी नजर है—

यह आदमी जो, है इसका तन बदन मिट्टी,
जो चाहता है बने आदमी, तो बन मिट्टी।

—श्रीआनंदवर्धन

(२)

मिट्टीमें भी इतने गुण हो सकते हैं इसका मुझे खयाल ही नहीं था। कभी मित्रोंसे इसकी गुणावली सुनता भी तो विश्वास नहीं जमता। पर "आरोग्य" मे मिट्टीके गुण पढ़ते-पढ़ते कुछ-कुछ विश्वास पैदा होने लगा। मैंने अपने घरमें मिट्टीका प्रयोग शुरू किया। मिट्टीके बारेमें आजतक जैसा पढा-सुना था, लाभ उससे अधिक मिला। आज तो इस मिट्टीकी कृपासे मेरे घरसे रोग एक तरहसे विदा हो गए हैं। डाक्टरोंसे भी पीछा छूट गया है। रोजाना उनकी फीस और दवाईके बिल चुकानेमें पैसा खर्च होता था वह बच रहा है और जब घरमें बीमारी नहीं तो फिर चारों ओर आनंद-ही-आनंदका अनुभव होता है।

मेरी स्त्रीका सिर बराबर दुखा करता था और गरम भी

रहता था। डाक्टरों और वैद्योंसे काफी इलाज करवाया, पर कोई लाभ न हुआ। वैसे कई वार इसके लिए मिट्टीके प्रयोगका विचार किया पर प्रयोगमें विश्वासकी कमीके कारण विचार टलता गया। आखिर एक रोज दृढ निश्चय करके मिट्टीकी पट्टीका प्रयोग किया। वंबई-जैसे शहरमे मिट्टीका मिलना भी तो आसान नही था। हमारा एक भैया (दरवान) गांवमे रहता था हमने उससे रोज थोड़ी मिट्टी लानेको कहा। उस मिट्टीको ठंडे पानीमे सानकर कोई आधसेरकी मात्रामें ठंडी-ठंडी माथेपर रखने लगे। इससे वीस दिनमें सिर दुखना वंद हो गया और सिरकी गरमी भी विल्कुल चली गई। तवियत खुश रहने लगी। अव मिट्टीपर मेरा विश्वास वढा। मेरी पत्नीका पेड़ू भी भारी रहता था। उसपर भी मैंने वैसे ही मिट्टी-की पट्टी रखनी शुरू की। इससे उस भारीपनमे भी कमी आई।

आश्चर्य तो मुझे तव हुआ जव मेरी स्त्रीके पैरका दर्द डाक्टरकी दवाईसे और घरेलू मालिश वगैरहसे न जाकर ठंडी गीली मिट्टीके लेपसे चला गया। वह दर्द अचानक वाए पैरमें घुटनेसे लेकर जंघातक, पैदा हो गया था। दर्द वहुत जोरका था। इसके लिए नारायण तेलकी मालिश की पर कुछ फायदा न हुआ तो डाक्टरके पास पहुंचे। उसने कोई जहरीला तेल मालिशके लिए दिया मगर दर्द वजाय घटनेके वढने लगा। उस समय मिट्टीके प्रयोगका विचार आया। मगर सोचा वह तो ठंडी होती है, शायद ठंडसे दर्द वढ जाय। पर जव तकलीफ भोगते एक सप्ताह हो गया और दर्द किसी तरह न गया तव हारकर एक दिन मिट्टीकी पट्टी चढाई। यह प्रयोग रातको सोते वक्त किया था। दूसरे दिन सवेरे दर्दमें वारह आना कमी थी।

फिर क्या था, दूसरे दिन फिर पट्टी चढ़ाई गई। इस दूसरे प्रयोगसे दर्द कतई नही रहा।

मेरे बंगलेके दरबान बंशीधर शुक्लको एक दिन कै और दस्त होने लगा। बंबई-जैसे शहरमें पड़ोसी इसे बरदाश्त नही कर सकते और न छिपा सकते हैं। ऐलान हो गया शुक्लको हैजा हो गया है। लोग कहने लगे अस्पताल भेज दो। शामको छः बजे मैं आफिससे लौटा तो कुल किस्सा सुना। मैंने तुरंत सलाह दी कि मिट्टीकी पट्टी पेटपर रखी जाय। ऐसा ही किया गया। कोई बीस-बीस मिनटके अंतरपर बदल-वदलकर तीन पट्टी रखी गई। कै और दस्त तो पहली पट्टीसे ही बंद हो गए। मगर तीसरी पट्टीके बाद तो बंशीधर शुक्ल हँसने लगा और खड़ा होकर मेरे पास आया और बोला कि मुझे भूख लगी है। मैंने उसे कलतक कुछ न खानेको कहकर बिदा किया।

हमारे भवानी-भवन बंगलेपर मल्लूसिंह राजपूत रहता है। उसको मलेरियाने आ घेरा। डाक्टरसे हाथमे इंजेक्शन लिया, जिससे उसका हाथ सूज गया और टेढ़ा हो गया। दर्द तो वढ़ा हुआ था ही। मैंने उसको मिट्टीकी पट्टी चढ़ानेकी सलाह दी। तीन दिनमें ही हाथ सीधा हो गया। दर्द चला गया। वुड्ढा खुश हो गया। बिना पैसा खर्च किए विना तकलीफसे ऐसा फायदा ! वहां रहनेवाले सभी लोगोंको आश्चर्य हुआ। अव तो वह जरा ही शिकायत होनेपर मिट्टीका ही प्रयोग करता है और मैं भी अपने आपको एक छोटा-मोटा डाक्टर मानने लग गया हूं। मुझमे इस वातका विश्वास पैदा हो गया है कि इस मिट्टीके प्रयोगसे सव वीमारियां अवश्य ठीक हो सकती हैं, शर्त है समझकर प्रयोग करनेकी।

—श्रीश्यामदेव देवड़ा

(३)

लोग वटाऊ—राह चलतो तकसे अपना इलाज पूछते है, फिर मुझसे न पूछे यह कैसे संभव था, जब कि वे जानते थे कि मै एक प्राकृतिक चिकित्सालय चलाता हूं । जेल जाकर मै वहुत चाहता तो नही था कि वहा इन अडंगोमे पड, पर ससारमे केवल अपनी चाही होती ही कहां है। दो-चार दिन ही वीते होंगे कि पूछताछ शुरू हुई, "हमे यह रोग है, क्या करे, उन्हे वह है तो क्या करे ।" मैने जेलमे जो कुछ हो सकता था तदनुसार उपचार वताना शुरू किया। वाहर तो और चीजे भी मिल जाती है पर जेलमे सुलभतासे मिट्टी ही मिल सकती है, इस-लिए पहले उसीकी ओर निगाह गई । वाहर चिकित्सालयमें एक साथ वहुत-सी चीजें चलनेके कारण मिट्टीके जौहर देखनेके अवसर कम मिलते है पर जेलमें तो वह खूव देखनेको मिले।

(१) एक भाई स्वप्न-दोपसे सताये हुए थे । जेलमें चौदह महीनोसे थे और आनेके चार महीने वादसे प्राय नित्य स्वप्न-दोप होता था उन्हे । उनके रोगकी वात सारा वैरिक जानता था । लोग कुशलक्षेमकी तरह सवेरे उनसे पूछते "रात कैसी रही ?" और वह मुह लटका लेते। कोई कुछ वता दे, करनेको तैयार, खानेको तैयार, जो दवा दी खाई । जेलरतकने उनपर अपनी दवा आजमाई । इमलीके चीये (वीज) मगाये, उनकी गुद्दी दूधमें पकाकर पाक वनवाया । चालीस दिन खाया, पर व्यर्थ । सिविल सर्जन साहव भी हार मान चुके थे । कह दिया था, रोज सवेरे दौडा करो, अच्छे हो जाओगे। कमजोरी-की शिकायत करनेपर दूध वढा देते थे । मुझसे उन्होंने पूछा—"क्या मै अच्छा हो सकता हूं ?" मैने कहा "जरूर" । पर ऐसे आश्वासन वह वहुत पचा चुके थे । इस कथनसे उनके मनमें

कोई आशा न जागी। उन्होंने कहा "अच्छा! आप यह बताइए कि क्या करूं ?" मैंने बतलाया सेर-डेढ़-सेर साफ मिट्टी ठंडे पानीसे भिगोकर हलुआ-सरीखा बनाकर पेड़ूपर रातको सोते समय बांधना और सवेरे उठनेपर या बीचमें नींद खुलनेपर उसे हटा देना। इस प्रयोगसे तीन दिनतक उन्हें स्वप्न-दोष नहीं हुआ, किंतु इससे उन्हें कोई विशेष प्रसन्नता नहीं हुई। पर चौथे दिनसे बहुत खुश थे। पर छः दिन स्वप्न-दोष रुककर दो दिन लगातार हुआ तो वह खुशी गायब हो गई। अब मैंने इन्हें खान-पानकी बात बतलाई। दाल-भात बंद, रोटी-साग खाना और मक्खन निकाला हुआ दूध या उसका दही। जेलमें जो दूध मिलता था उसमें मक्खन निकालनेके लिए मथनी खोजनेकी जरूरत नहीं थी। ठेकेदार लाता ही ऐसा दूध था कि जिसमें चिकनाई शायद नामकी ही हो। इस भोजनके सिवा बेलकी दस-पंद्रह पत्तियां पीसकर सवेरे पीनेकी सलाह दी। मिट्टीकी पट्टी तो रही ही। लगातार दस दिनतक उन्हें स्वप्न-दोष नहीं हुआ। इसी बीच उनकी रिहाई आ गई। संभव है बाहर इसी इलाजपर चलकर उन्होंने रोगसे रिहाई पाई होगी।

उक्त भाईको स्वप्न-दोषमें लाभ होते देखकर और अनेकोंने भी पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी बांधनी शुरू की। लोग रातको अपनी थालियोंमें मिट्टी लाकर रख लेते थे और ९-१० बजे बांधकर सो जाते थे। पाठक सुनकर ताज्जुब करेंगे कि बाहर तो धन-दौलतकी चोरी होती है पर यहां लोग एक दूसरेकी मिट्टी चुरानेमें भी न चूकते थे।

(२) एक नवयुवक खांसीके मरीज थे। रातको जो खांसी चलती तो रुकनेका नाम न लेती। इसकी वजहसे औरोंको भी बड़ी परेशानी थी। मैंने इन्हें भी पेड़ूपर मिट्टीकी पट्टी रखनेको

कहा, तो ये समझे कि मैं मजाक कर रहा हूं, कहने लगे "मैं आपसे गलत नही कह रहा हू, मुझे स्वप्न-दोपकी शिकायत विल्कुल नही है।" मैंने कहा, "तो मै कहां कहता हूं कि आपको स्वप्न-दोपकी शिकायत है, मैंने आपकी खासीके लिए ही मिट्टी वताई है।" वह आश्चर्यसे वोले, "स्वप्न-दोपमे मिट्टीकी पट्टी पेड़ूपर रखना समझमे आता है, पर खासीमें भी पेडूपर मिट्टीकी पट्टी ?" मैंने कहा रोगोका आरंभ तो आतोंसे ही होता है, उसीकी चिकित्सा है यह। आपका पेट साफ होने लगेगा, आतोकी गरमी कम होगी, विकार निकलेगा और जो विकार यो न निकल सकनेके कारण खासीके रूपमे मुहसे निकलनेका प्रयत्न कर रहा है उसे रास्ता मिल जानेपर आपकी खासी जाती रहेगी। वह समझ गये। पाच-सात दिनमे ही उन्हे लाभ प्रतीत हुआ। दस-पद्रह दिन वाद उन्हें इस प्रयोगकी जरूरत नही रही।

(३) इन भाईको दस वर्ष पहले उपदंश हुआ था। कहने लगे, मैंने इसकी चिकित्सा की, पर मेरा खून अभी साफ नहीं हुआ है। मुझे दो-तीन वर्पपर गुदाके पास एक फोडा होता है जो महीनो लेकर जाता है। वडी देरमे पकता है, चीरे जानेपर भरनेका नाम नही लेता, वैसे ही फोड़ेकी शुरुआत दो सप्ताहसे हो रही है। डाक्टर रोज ही प्लास्टर वाधता है पर वह सूजता ही जाता है, यही हालत रही तो मुझे उसका आपरेशन कराना पडेगा। किसी तरह यह आफत टल जाती तो अच्छा होता। इन्हे वताया कि आपका खून तो साफ, महीनो फल-दूध तथा तरकारियोपर रहनेसे होगा, जिसकी सुविधा तो वाहर ही हो सकती है, पर यहां आप मिट्टीकी पट्टी जहा फोड़ा हो रहा हो, दिनमे तीन-चार वार घटे-घटेभरके लिए वाधिए, उससे आपका

फोड़ा दवना चाहिए। प्रयोग करके पांच-छ. दिन वाद उन्होंने वतलाया कि कुछ कम जरूर हुआ है, पर वहुत नही। तव मैंने फोड़ेपर दिनमें एक वार वीस मिनटतक भाप देने और उसके वाद मिट्टी वांधनेकी वात वताई। किया उन्होंने, और एक सप्ताहके वाद वे विल्कुल ठीक हो गये।

(४) ये दोनों पैरोंपर उकवत (एक्जिमा) के मरीज थे। ठेहुनेसे लेकर नीचे अंगुलियोतक पैर खराव हो रहा था। मैंने उनसे भी कहा कि यहां तो मिट्टी ही है। दिनमें दो वार पैरोंपर मिट्टीका लेप कीजिए, लाभ होगा। वन सके तो नमक भी छोड़ दीजिए और दाल भी। पांच-सात दिन वाद वे फिर आये। रोगमें विशेष फर्क नही था, पर वे कहते थे कि इतना फ़ायदा तो अवतक किसी भी दवाने नही किया था। मैंने उन्हें वतलाया कि आपके रोगकी जड़ तो आपके रक्तमें है, मिट्टी ऊपरी जहरको खींचकर साफ कर देगी। पर जवतक रक्त साफ नही होगा तवतक यह रोग जायगा नही। उन्होंने कहा, साहव, देखा जायगा जव जड़ जायगी; आज तो खाज नहीं आती, नीद ठीक आ जाती है इतना ही क्या कम है।

(५) इनके शरीरकी सारी ही त्वचा सूखी रहती है, मोटी हो गई है, खाज आती रहती है। इन्हें सारे वदनमें मिट्टी लगाकर धूपमें आध घंटे रहनेके वाद स्नान करनेकी हिदायत की। वह इसे पांच-सात ही दिन कर पाए। वाकी सव ज्यों-का-त्यों था पर खाजमें कमी हो गई थी।

(६) एक विल्कुल अपरिचित भाई एक दिन आकर कहने लगे, मेरे पेटमें जलन और सिरमें दर्द होता रहता है। आंखोंपर भी गर्मी वनी रहती है। सवेरे तो कुछ पेट साफ हो जाता है पर शामको तो दस्त होता ही नहीं। कोई सरल प्रयोग

बतावें। मैंने इन्हें हाथ-मुंह धोकर सवेरे दस-पंद्रह बेलकी पत्ती चबानेको कहा और रातको मिट्टीकी पट्टी पेडपर रखनेको। पंद्रह ही दिनमें उनकी सभी व्याधियां चली गईं। मिले तो बोले, "मिट्टीकी पट्टी मैंने रखनी बंद कर दी है पर बेलकी पत्ती अब भी चबाता हूं। और सब ठीक है पर अब मुझे सवेरे ही ४ बजे शौचकी तेज हाजत होती है और अड्गड़ा सवेरे छः बजे खुलता है। कैसे रोकी जाय हाजत?" मैंने कहा इसे रोकनेकी जरूरत? यह तो जरूरी चीज है। अगर आप हाजतको छ. बजे बुलाना चाहते हैं तो दोपहरको आप भोजन अब जिस समय करते हैं उससे दो घंटे बाद कीजिए। सवेरेकी हाजत दो घंटे बाद होगी। यह कहनेपर उन्हें हाजत ४ बजेके बजाय ६ बजे होने लगी।

मिट्टीकी पट्टी और बेलकी पत्तीके अलावा उपवासका भी प्रयोग काम करता है पर एनिमाका सुभीता और लंबा उपवास तोड़नेके लिए फल-तरकारियोंकी सुविधा न होनेके कारण एक दिनसे ज्यादा उपवास किसीको नहीं कराया। इस एक दिनके उपवाससे लोगोंका साधारण जुकाम, हलका ज्वर, शरीरका भारीपन, तबियतका उचाट आसानीसे चला जाता। जीर्ण रोगी हर चौथे दिन एक दिनका उपवास करते थे और उससे लाभ बतलाते थे।

गरम मिट्टी

दो कैदी आपसमें बेतकी सजापर बातें कर रहे थे—

"बारह महीनेकी सजा अच्छी पर बारह बेत नहीं अच्छे।"

"मैं तो बेत ही पसंद करूंगा, सालभर रोजकी तकलीफसे तो बच जायगा आदमी।"

"आप वेंतकी चोट नहीं जानते, इसीसे वेंतपसंदकी वात करते है।"

"एक महीनेके लिए एक वेंत। कितनी ही तकलीफ क्यों न हो, वेंत ही सहना अच्छा है।"

"आप किसीको बेत खाते देख लेते तो कभी यह न कहते। वताइए तो यहांकी बेत कैसी होती है? कही आप स्कूलके मास्टरवाली वेंत तो नहीं समझ रहे हैं ?"

"उससे कुछ ज्यादा मोटी होती होंगी और क्या।"

"अरे, कुछ नहीं, वहुत ज्यादा मोटी होती है और इस्तेमाल करनेके वारह घंटे पहले उसे तेलमे भिगों देते है और जिसे मारते हैं उसे टिकटीपर वांध दिया जाता है। हाथ-पैर वंधे रहते हैं, चूतड़ खुला रहता है। डोम दस गजकी दूरीसे वेंत भांजता दौड़ता हुआ आता है और पूरी ताकतसे चूतड़पर मारता है, जेल अधिकारी खड़ा देखता रहता है और कहता है "और जोरसे !" डोम और हुमचकर मारता है। कैदी चिल्लाने लगता है, सारा जेल कराह सुनकर कांप उठता है। उस कैदीसे हफ्तों उठा नही जाता। पाखाने जाते वक्त प्राण निकलने लगते हैं।"

"सवसे वुरी वात तो यह है कि वेंत खानेके वाद वड़े जोरसे गुस्सा आता है" एक तीसरे भाई वोले।

मैने पूछा, "किसपर ?"

"अपनेपर, और मजिस्ट्रेटसे लेकर मारनेवालोंतकपर।"

"यह ज्यादा कष्टका है या मारकी चोट।" पहले भाईने सूत्र पकड़ा।

यह वात हो ही रही थी कि एक भोला-सा देहाती मेरे सामने आकर खड़ा हो गया।

"आप ही कुदरती इलाजके डाक्टर है ?"

मैने कहा, "कहो"

बोला, कहू क्या, खुद देख लीजिए। उसे कावरू (पीलिया) हो रहा था। आंखे पीली, सारा वदन पीला। वह पांच-सात दिनमे ही छूटनेवाला था। इस रोगका कोई इलाज जानना चाहता था मैने वता दिया। उठा और जाने लगा। दस ही कदम गया होगा कि मैने उसे वुलाया।

"तुम लगड़ाते क्यो हो ?"

"मुझे चार महीने हुए वेत लगे थे।"

"कितने ?"

"एक दर्जन।"

"और दर्द अभीतक नही गया ?"

"यहांके डाक्टरने वहुत दवा लगाई, पर दर्द नही जाता। दर्दकी वजहसे जमीनपर पैर पूरा नही पडता। वहा कोई साधन नही दिखाई दिया जिससे मै उसका दर्द खो सकू। मैने उसे विठाया, एक भाईसे दो सेर मिट्टी लप्सी-सी सानकर गरम करके मंगवाई और सुलाकर दर्दकी जगह मिट्टीसे सेकी और फिर मिट्टी दर्दकी जगहपर चारो ओर फैलाकर वांध दी। एक घटे वाद मिट्टी हटा दी और यह प्रयोग उसे सुवह-शाम दो वार करनेको वता दिया। उसने शुरू किया। मै उससे दोनो वक्त पूछता, कुछ लाभ है ? वह कहता कुछ कम हो रहा है। चौथे दिन सुवह मैने अपने अड़्गड़ेमें वैठे-वैठे देखा वह मजेमें जेलके आंगनमे लोगोके साथ तेजीसे टहल रहा है, चलनेमे लंग नही है।

मैने मनमे कहा—

"विष्णुपत्नि (अर्थात् पृथ्वीमाता) नमस्तुभ्यं।"

—विट्ठलदास मोदी

प्राकृतिक चिकित्सा क्या है ?

रोज-ब-रोज डाक्टरोकी तादाद बढ़ रही है और साथ-साथ अनगिनत ओषधियोकी, पर आंख उठाकर देखें तो हर आदमी आपको किसी-न-किसी रोगके चंगुलमें फसा मिलेगा। इससे साबित होता है कि दवाएं आदमीको न तदुरुस्त रख सकती हैं, न कर सकती है।

प्राकृतिक चिकित्सकोने तजुर्बेसे जाना है कि रसायन और दवाए रोगको अच्छा करना तो दूर रहा उल्टे रोगको—उसके कुछ लक्षणोंको—कुछ वक्तके लिए दूर करके, बाहर निकलते हुए रोगको शरीरके भीतर दवा देती है। जैसे गांवमें कूडा-कचरा इकट्ठा होकर बीमारी फैलाता है वैसे ही शरीरकी गंदगी निकल न पानेपर अदर सड़ने लगती है। वही गदगी सब रोगोंकी जड है।

गलत भोजनकी वजहसे पैदा हुई सड़न, अपच, दवाओंके जहर, इंजेक्शन, टीका वगैरह इस गंदगीको बढ़ाते है।

शरीरसे गदगी निकालनेकी कुदरतकी कोशिश ही रोग है, और रोगके लक्षण इस कोशिशका कुदरती नतीजा है। कुदरती इलाज इस गदगीको शरीरसे निकाल फेकनेमें पूरी मदद पहुचाता है और मनुष्यको स्वस्थ, सशक्त एव सतेज बनाता है।

कुदरती इलाजके मददगार है उपवास, फलाहार, संतुलित भोजन, पानी, मिट्टी, धूप, प्राणायाम, आसन, कसरत और मालिश वगैरह। जिनसे रोग दबते नही बल्कि जड़से नेस्त-नाबूद होते हैं।

आरोग्य-मंदिर

इन्ही सिद्धातोंके अनुसार चिकित्साकी सुविधा देनेके लिए आरोग्य-मंदिरकी स्थापना की गई है। विशेप जानकारीके लिए आरोग्य-मंदिरका परिचय-पत्र मगानेकी कृपा करें।

आरोग्य-ग्रंथमाला

प्राकृतिक चिकित्साके प्रचारकी दृष्टिसे आरोग्य-ग्रंथमाला प्रकाशन शुरू किया जा रहा है। इसमें हिंदुस्तानके अनुभवी प्राकृतिक चिकित्सकों-की पुस्तकोंके साथ-साथ विदेशके प्राकृतिक चिकित्सकोंकी पुस्तकें भी होंगी। विदेशमें इस विषयपर विस्तृत साहित्य मौजूद है और रोज लिखा जा रहा है। उन सबके विचार हम मूल या सारांश रूपमें हिंदी-भाषी जनताको अच्छे रूपमें और सुलभ मूल्यमें देना चाहते हैं।

स्वास्थ्य कैसे पाया ? आपके हाथमें है। शेष प्रकाशित पुस्तकोंका परिचय लीजिए —

सर्दी जुकाम खांसी (तीसरा संस्करण) सर्दी-जुकाम और खांसी आजके मनुष्योंके लिए बहुत सामान्य रोग है पर लोग इसपर ध्यान नहीं देते और परिणामस्वरूप भयंकर एवं असाध्य रोगोंके चंगुलमें फंस जाते हैं। प्रस्तुत पुस्तकमें सर्दी, जुकाम, खांसीका प्राकृतिक इलाज ही नहीं बताया गया है, वरन् वह इस ढंगसे बताया गया है कि आप इन रोगोंके साथ-साथ सभी रोगोंका कारण एवं उनका उपचार जान जाएं। मूल्य ।।।)

उपवाससे लाभ (दूसरा परिवर्धित संस्करण) रोगोंको दूर करनेका उपवास एक बड़ा साधन है। पर इसका उपयोग समझ-कर ही करना चाहिए। गंगाकी तरह जहां यह लोगोंको तारता है, तैरना न जाननेवालोंको यह डुबोता भी है। 'उपवाससे लाभ' उपवासके लाभोंको बताकर, उपवास करनेकी कलामें अबतक जो उन्नति हुई है उससे भी आपको परिचित कराएगा। यह परिचय इस पुस्तकमें सारे उपवासके विविध आचार्य ही देंगे, जिन्हें आप नतमस्तक हो सुनते रहेंगे। पुस्तकके अंतमें, एक भारतीय उपवासीकी चालीस दिनकी डायरी दी गई है। मूल्य १।।)

आदर्श आहार (दूसरा परिवर्धित संस्करण) यह पुस्तक नही, भोजनद्वारा स्वास्थ्य एवं रोगनाशका एक अपूर्व मत्र है। इस ग्रंथके लेखक हैं डा० सतीशचंद्र दास, एम०डी०। जिन्होने अपनी जोरोसे चलती एलोपैथिक प्रैक्टिस छोडकर प्राकृतिक चिकित्साको अपनाया था। इस पुस्तकमे उन्होने अपने जीवनमें हुए भोजन सबंधी सारे अनुभवोंका सार भर दिया है। मूल्य १)

मैं तंदुरुस्त हूं या बीमार ? यह लूई कूनेकी प्रसिद्ध पुस्तक Am I Well or Sick का भावानुवाद है। स्वास्थ्य क्या है ? क्या वह दवासे मिल सकता है ? आदि प्रश्नोका उत्तर देनेवाली प्राकृतिक-चिकित्सा-साहित्यमे यह बेजोड़ पुस्तक है । मूल्य ।।)

आरोग्यकी कुंजी—महात्मा गाधीने समय-समयपर प्राकृतिक-चिकित्सा सबधी अनेक प्रयोग किये है। उन सबका सार इस पुस्तकमे आ गया है। मूल्य ।।)

जीनेकी कला ले० श्रीविट्ठलदास मोदी। क्या आप किसी कामके करनेकी सोचते है और कर नही पाते, तो आपको मानसिक शक्तिकी जरूरत है; समस्याएं और चिंताएं आपको घेरे रहती है और आप उनसे निकल नही पाते, तो आपको विश्लेषणात्मक शक्तिकी आवश्यकता है; बातचीत और अध्ययनमें आपको अच्छे विचार मिलते है पर वे आपको याद नही रहते, तो आपको स्मरणशक्ति बढानेकी जरूरत है। ये सभी शक्तिया तो आपको 'जीनेकी कला' देगी ही और आपके सामने उन सारे रहस्योको खोलकर रख देगी, जिनके जाननेके कारण ही वह व्यक्ति जिसे आप बड़ा कहते है, बड़ा बना है । इस उपादेय पुस्तकका मूल्य केवल १।।) ।

प्राकृतिक जवीनकी ओर लेखक—एडोल्फ जस्ट : अनुवादक—विट्ठलदास मोदी। प्राकृतिक-चिकित्सा प्राकृतिक-जीवनका ही दूमरा नाम है। इस जीवनका वर्णन जस्टने अपनी इस किताबमें कुदरती भाषा पढ़-पढकर ऐसे कवितामय शब्दोमे किया है कि प्राकृतिक जीवनके प्रति एक सम्मोहक आकर्षण प्रतीत होने लगता है जल, वायु, प्रकाश, हमे अपने सुभैषी, और

वायव प्रतीत होने लगते हैं। हम इनके मित्र रूपको पहचानने लगते हैं। और धरती माता जो अपने मिट्टीके हाथ हमारे मिट्टीके शरीरके रोगोंको मिट्टीमें मिलानेके लिए बढाए दिखाई देती है, के चरणोंमें प्रणाम करनेको जी चाहता है।

गांधीजीको प्राकृतिक-चिकित्साकी ओर एडोल्फ जस्टने ही लगाया था। जस्टकी इस 'प्राकृतिक-जीवनकी ओर' पुस्तककी प्रेरणात्मक शक्ति-का जिक्र उन्होंने अपनी आत्म-कथामें और जगह-जगह अपने लेखोंमें किया है। इस पुस्तकको पढना रोग-निवारिणी स्वास्थ्यदायिनी माताकी कल्याणमयी गोदमें अपने और अपने परिवारको निर्भय सौंपना है। इस अमूल्य पुस्तकका दाम केवल ३)।

उठो—नदी समुद्रसे मिलनेपर जिस आनदका अनुभव करती है, पृथ्वी को पहली वर्षासे जिस तृप्तिकी प्राप्ति होती है, मुर्झाए जिस्वेको नये-प्रकाशसे जो जीवन मिलता है, वह आनद, तृप्ति और जीवन यदि आप एक साथ पाना चाहते हो तो उठो ! पढिए ! आपको सच्चे मानोंमें—शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक दृष्टिसे—उठानेमें, सब तरहसे स्वस्थ बनानेमें समर्थ है। उठो ! पुस्तक नही सहृदय और अनुभवशील गुरुचित्त है। स्वामी कृष्णानदकी मर्जीवनी लेखनीद्वारा लिखी गई इस सुदर पुस्तकका मूल्य है केवल १)।

कब्ज—लेखक—महावीरप्रसाद पोद्दार—कब्जका कारण और निवारण बतानेवाली एक प्रमाणिक पुस्तक। इस विषयपर इतनी विस्तृत विवेचना करनेवाली पुस्तक हिंदीमें आज तक प्रकाशित नही हुई। सुदर सुनहली जिल्द, मूल्य दो रुपया।

रोगोंकी सरल चिकित्सा (लेखक—विठ्ठलदास मोदी) इस पुस्तकमें मोदीजीको बारह वर्षके विस्तृत प्रेक्टिसके अनुभवोंका सार आ गया है। हिंदीमें अनुभवके आधारपर लिखी गई प्राकृतिक चिकित्सासबधी यह सबसे बडी पुस्तक है। इसके आधार पर रोगी तथा अन्य लोगोंके किसी भी रोगकी चिकित्सा बडी सरलतासे की जा सकती है। पुस्तककी उपयोगिता इसकी विषय-सूचीसे समझे।

खंड (१) प्राकृतिक चिकित्साका इतिहास और सिद्धांत

१. प्राकृतिक चिकित्सा-प्रणाली जन्म और विकास; २. जीवन शक्ति; ३. कीटाणु और रोग, ४. वजन और स्वास्थ्य; ५. उभार

खंड (२) रोग और उसकी चिकित्सा

१ कब्ज; २. बवासीर, ३. अग्निमदता, ४. रक्ताल्पता; ५. स्वप्नदोष; ६. मधुमेह; ७. उकवत (एक्जिमा); ८. गठिया; ९. पुराना आंव; १०. चुन्ना (कृमि); ११. नाडीदौर्बल्य; १२. आत्महत्याकी प्रवृत्ति; १३ अनिद्रा; १४. रक्त-चाप; १५. अन्त्रवृद्धि; १६. जुकाम; १७ पायरिया; १८ मुंहासा; १९ प्रदर; २०. सुदर आंखें, २१. बालोंके रोग; २२ घृणित रोग; २३ मोटापा; २४. नपुसकता।

खंड (३) स्वास्थ्य-प्रश्नोत्तर—गला बैठना, वायुविकार, कमरका दर्द, कानमे आवाज, बाल गिरना, बदरग आंख, पेशावके साथ सफेदी, सर्दीमें तेलकी मालिश, कमजोर आखे और चश्मा, गदी आंखें, विकृत त्वचा, पेंशावसे सुस्ती और कमजोरी, जबड़ोके गड्ढे, मानसिक दुर्बलता, बालोमे जुएं, ऊंचाई बढानेके लिए, फाइलेरिया और अडकोषवृद्धि, रक्तचापमें भोजन, वायुविकार क्यों ? प्राकृतिक चिकित्सा और चीर-फाड़, विटामिन बी, बच्चोमे काच निकलना, सवेरेकी सुस्ती, आमाशयका घाव, फुंसियां, वजन कैसे बढ़ाएं ? ज्वरमें भोजन, दाढीमें फुंसिया, दु स्वप्न, भोजनद्वारा मानसिक शक्ति, आंतोकी दुर्बलता, स्त्री-पुरुषको स्वप्नदोष, सिर दुखना, बलगम निकलना, खुजली।

खंड (४) परिशिष्ट—एनिमा लेनेकी विधि, मिट्टीकी पट्टी, कटि-स्नान, मेहन-स्नान, पैरका गरम नहान, साधारण स्नान, कमरकी गीली पट्टी, छातीकी गीली पट्टी, धूप-स्नान, स्पज, स्वेदनके लिए धूपस्नान, उपवास, साहार और फलाहार, पानी पीना, भोजनका समय, चोकरसमेत आटेकी रोटी, दलिया, चावल, तरकारियां, सलाद या कचुंबर, सोना, टहलना, दुग्ध-कल्प, सारे बदनकी गीली पट्टी।